वर्ष 4 • अंक 1 (2020-21)
ISSN :2394 6989

अक्षय खेती

कृषि जानकारी से परिपूर्ण, खेत-खलिहान को समर्पित पत्रिका

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद का पूर्वी अनुसंधान परिसर
आई.सी.ए.आर. परिसर, पोस्ट: बिहार वेटनरी कॉलेज,
पटना – 800 014, बिहार

भाकृअनुप
ICAR

अक्षय खेती

कृषि जानकारी से परिपूर्ण, खेत खलिहान को समर्पित पत्रिका

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद का पूर्वी अनुसंधान परिसर, पटना
आई.सी.ए.आर. परिसर, पो.- बिहार वेटनरी कॉलेज,
पटना- 800014 (बिहार) भारत

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद का पूर्वी अनुसंधान परिसर, पटना द्वारा प्रकाशित

अक्षय खेती

वर्ष 4 ● अंक 1 (2020-21)

- ::प्रकाशक :: -

निदेशक

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद का पूर्वी अनुसंधान परिसर, पटना

- ::संपादक मंडल :: -

शिवानी - प्रधान संपादक

रजनी कुमारी - संपादक

तारकेश्वर कुमार - संपादक

कीर्ति सौरभ - संपादक

कुमारी शुभा - संपादक

उमेश कुमार मिश्र - संपादक

- ::राजभाषा कार्यान्वयन समिति :: -

उज्ज्वल कुमार, अध्यक्ष

शिवानी, उपाध्यक्ष

पुष्पनायक, सदस्य सचिव

रजनी कुमारी, सदस्य

तारकेश्वर कुमार, सदस्य

कीर्ति सौरभ, सदस्य

कुमारी शुभा, सदस्य

प्रभा कुमारी, सदस्य

उमेश कुमार मिश्र, संयोजक-सह-सदस्य

नोट : अक्षय खेती में प्रकाशित लेखों में विचार, रेखांकन, छाया चित्र एवं अन्य सामग्री लेखकगण की है | इस संबंध में संपादक मंडल की सहमति आवश्यक नहीं है |

निदेशक की कलम से,

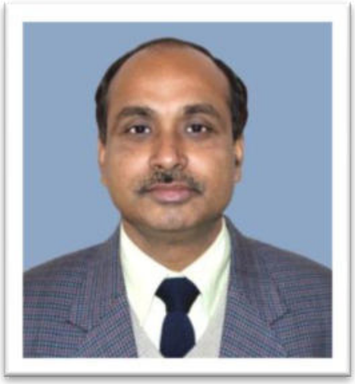

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद का पूर्वी अनुसंधान परिसर, पटना कृषि कार्यो से संबंधित समुचित जानकारी, जैसे वैज्ञानिक तरीकों से फसल उत्पादन, मत्स्य पालन, बागवानी, डेयरी प्रबंधन, बकरी एवं मुर्गी पालन आदि पर देश के पूर्वी क्षेत्र के किसानों को समय–समय पर प्रशिक्षण के माध्यम से उनके आय को दोगुनी करने के लक्ष्य में प्रयासरत है। साथ ही साथ यह संस्थान तकनीकी बुलेटिन, प्रसार पुस्तिका, लोकप्रिय आलेख दैनिक समाचार पत्रों एवं इलेक्ट्रोनिक मीडिया के माध्यम से भी कृषि शोध एवं इससे जुड़ो नई तकनीकिया को जनमानस तक पहुँचाने में हमेशा तत्पर रहता है।

इसी कड़ी में संस्थान अपनी गृह पत्रिका 'अक्षय खेती' का आनॅलाइन प्रकाशन कर रहा है, जिसमें कृषि संबंधित लेखों को वैज्ञानिक दृष्टिकोण से प्रस्तुत करने का एक छोटा प्रयास है।

मैं इस संबंध में सभी लेखकगणों को उनके इस प्रयास के लिए बहुत–बहुत बधाई देता हूँ। साथ ही साथ पत्रिका के संपादक मंडल एवं संस्थान राजभाषा कार्यान्वयन समिति के सदस्यगण भी बधाई के पात्र है, जिन्होंने कम समय में सभी लेखों को संपादित कर इस पत्रिका के प्रकाशन में सहयोग दिया। मुझे पूर्ण विश्वास है कि आगे भी अनुभवी लेखकगण अपने शोध एवं अनुभवों को राजभाषा हिन्दी में इस पत्रिका के साथ साझा करते रहेंगे।

उज्ज्वल कुमार
(निदेशक)

1.	**पूर्वी भारत के पठारी क्षेत्रों में सरसों वैज्ञानिक खेती** सन्नी कुमार, दुष्यन्त कुमार राधव, इन्द्रजीत, धर्मजीत खेरवार, सन्नी आशीष बालमुचू, शशि कान्त चौबे एवं ए.के. सिंह	01-04
2.	**परवल की खेती मे समेकित नाशीजीव प्रबंधन** डॉ० मनोज कुमार एवं डॉ० मुकेश कुमार सिंह	05-06
3.	**एग्री–क्लिनिक एवं एग्री बिजनेस सेंटर स्कीम – संकल्पना तथा वर्तमान स्थिति** धीरज कुमार सिंह, राकेश कुमार और तन्मय कुमार कोले	07-15
4.	**कृषि आधुनिकीकरण में मोबाइल एप्प की भूमिका** आरती कुमारी, सोनालिका साहु, अकरम अहमद, पवनजीत, एवं मृदुस्मिता देबनाथ	16-18
5.	**पूर्वी भारत में सूक्ष्म सिंचाई और फर्टिगेशन की समस्याएं और संभावनाएं** रचना दूबे, कृष्ण गोपाल मंड एवं अमोद कुमार ठाकुर	19-26
6.	**राष्ट्रीय कृषि बाजार (e-NAM): एक परिचय** उज्ज्वल कुमार एवं धीरज कुमार सिंह	27-31
7.	**ग्रामीण कृषि मौसम सेवा भारतीय कृषि सेवा का नया आयाम** रौशन कुमार एवं रंजन कुमार सिंह	32-34
8.	**वर्षा आश्रित क्षेत्रों में तिल की खेती** दुष्यन्त कुमार राधव, इन्द्रजीत, धर्मजीत खेरवार, सन्नी कुमार, आशीष बालमुचू, शशि कान्त चौबे एवं ए.के. सिंह'	35-46
9.	**मक्के की खेती कृषि क्षेत्र के किसानों के लिए वरदान** रविकान्त चौबे, सर्वेश कुमार, सुमित कुमार सिंह अंजनी कुमार सुमित कुमार सिंह	47-53
10.	**कृषि उत्पादों के माध्यम से एनीमिया का निवारण** अनिर्बाण मुखर्जी, कुमारी शुभा, तन्मय कुमार कोले, एवं उज्ज्वल कुमार	54-61
11.	**ज्वारः पशुधन के लिए एक आदर्श पौष्टिक चारे की फसल** हंसराज हंस, राकेश कुमार, जे. एस. मिश्र एवं बाल कृष्ण	62-67
12.	**ई–मार्केटिंगः किसानों की आय दोगुना करने का एक माध्यम** मीरा कुमारी, रामनाथ कुमार राय, अनीता कुमारी और कुमार वरुण विजय	68-70
13.	**धान सघनीकरण विधि (एस.आर.आई./श्री) द्वारा धान उत्पादन** संत कुमार सिंह	71-73

14.	**गन्ने से जैव इथेनॉल का उत्पादन एक वैकल्पिक ऊर्जा स्रोत** राजीव कुमार, पुष्पा सिंह और अभिषेक कुमार दूब	74-75
15.	**पारिस्थितिकी तंत्र और पारिस्थितिकी तंत्र सेवाएं** अकरम अहमद, समीर कुमार बरारी सुरजीत मंडल और मणिभूषण	76-78
16.	**जैविक खेती के लिए संसाधनों का समुचित प्रबंधन** रविकान्त चौबे, सर्वेश कुमार, अंजनी कुमार, सुमित कुमार सिंह	79-105
17.	**कृषि में सूचना संचार प्रौद्योगिकी** मणिभूषण और अकरम अहमद	106-111
18.	**वर्तमान कृषि समस्याएँ और समाधान** अनूप कुमार चौबे, कीर्ति सौरभ, के राव, एस के समल	112-118
19.	**वस्त्र उद्योग से प्रदूषण: इसकी विशेषताएं और पर्यावरणीय प्रभाव** गुप्ता, डी.के., दूबे, रचना, कीर्तिका, ए., नूर मोहम्मद, एम.बी., चौधरी, के.के., शुक्ला, ए.के., जांगिड़, बी.एल., गुप्ता, सी.के. एवं मेहता, आर.एस.	119-130
20.	**मृदा और जलवायु परिवर्तन** कीर्ति सौरभ, अनिल कुमार सिंह, प्रेम कुमार सुन्दरम, पवन जीत, मनोज कुमार, जागृति रोहित एवं आशुतोष उपाध्याय	131-140
21.	**हिन्दी पखवाड़ा - 2020 : रिपोर्ट** शिवानी एवं उमेश कुमार मिश्र	141-144

पूर्वी भारत के पठारी क्षेत्रों में सरसों
वैज्ञानिक खेती

सन्नी कुमार, दुष्यन्त कुमार राधव, इन्द्रजीत, धर्मजीत खेरवार, सन्नी आशीष बालमुचू, शशि कान्त चौबे एवं ए.के. सिंह*
कृषि विज्ञान केन्द्र, रामगढ़, भा.कृ.अनु.प. का पूर्वी अनु. परिसर, पटना
*भा.कृ.अनु.प. का पूर्वी अनु. परिसर, शोध केन्द्र, राँची

तोरी एवं सरसों का तिलहनी फसलों में प्रमुख स्थान है। सरसों की खेती लगभग सभी जगहों पर की जाती है। सरसो की खेती किसान ज्यादातर तेल के लिए करते ह। इसका महत्व किसानों के जीवन में इसकी विविध उपयोग के कारण और भी बढ़ जाता है। सरसो का साग भी लोग बड़े चाव से खाते है, इसके प्रयोग करने से प्रोटीन, खनिज तथा विटामिन ए और सी की अधिक मात्रा मिलती है। सरसों की खेती ''सीमित सिचाई की दशा वाले क्षेत्रों'' में भी अधिक लाभदायक फसल हैं। सरसों की फसल के लिए उन्नत विधियाँ अपनान से उत्पादन एवं उत्पादकता में वृद्धि होती है।

खेत की तैयारी :

तोरी एवं सरसों की फसल की खेती के लिए हल्की मिट्टो की तुलना में, दोमट मिट्टी वाले खेत सर्वोत्तम मान गये हैं। सरसो के लिए ठंढे जलवायु की आवश्यकता होती है। इस फसल को ठंढ क मौसम लगाया जाता है एवं इसकी बुवाई के लिए 30^{0}c तापमान अच्छा माना जाता है। ये फसल ज्यादा तापमान बर्दाश्त नहीं कर सकती, ज्यादा तापमान से बीज

अच्छी प्रकार से अंकुरित नहीं हो पाता है। सबसे पहले मिट्टी पलटने वाले हल से जुताई करनी चाहिए, इसके पश्चात दा से तीन जुताईयाँ देसी हल या कल्टीवेटर से करनी चाहिए, इसकी जुताई करने के पश्चात पाटा लगा कर खेत को समतल करना अति आवश्यक हैं।

प्रजातियाँः

उन्नत प्रभेद	बोआई का समय (माह)	परिपक्वता अवधि (दिन)	औसत उपज (क्वि. /हे.)		तेल की मात्रा (प्रतिशत)
			सिंचित	असिंचित	
तोरी					
पी.टी. 203	15 सितबर–15 अक्टूबर	85–90	3–4	6–7	40–41
पचाली	15 सितबर–15 अक्टूबर	90–95	3–4	7–8	38–39
राई					
शिवानी		100–105	7–8	10–12	40–41
पूसा बोल्ड		115–120	7–9	12–14	41–42
पूसा मस्टर्ड		105–110	6–7	10–11	39–40
पीला सरसों					
एन.आर.सी.वाई. एस. 5–02	25 सितबर–10 अक्टूबर	110–115	4–5	7–9	42–43

बुआई का समयः

अगात फसल	10 से अक्टूबर (हथिया नक्षत्र की वर्षा के बाद)
समयकालीन फसल	15 अक्टूबर से 25 अक्टूबर तक
विलम्ब फसल	25 अक्टूबर से 15 नवम्बर तक
अतिविलम्ब फसल	15 नवम्बर से 25 दिसम्बर तक

बीज दरः

तोरी एवं सरसों के 6 कि.ग्रा. (पतले दानों वाले) से 8 कि.ग्रा. (पुष्ट दोनों वाली किस्म) बीज प्रति हेक्टेयर, जिससे 3.3 लाख पौधे प्रति हेक्टेयर खेत में स्थापित हो जाएं बुआई के लिए व्यवहार में लाने चाहिए।

बीज उपचार:

तोरी एवं सरसों के बीज को खेत में बोने से पहले 2–3 ग्राम थीरम/कैप्टान /वेबस्टीन नाम दवा से प्रति किलोग्राम बीज की दर से उपचारित कर लेना चाहिए।

जल प्रबंधन :

सरसों की फसल में पहली सिंचाई फूल आने के समय तथ दूसरी सिंचाई फलियों में दाने भरने की अवस्था में करनी चाहिए। यदि जाड़े में वर्षा हो जाती है, तो दूसरी सिंचाई न भी करें तो उपज अच्छी प्राप्त हो जाती है।

पोषण प्रबंधन

सरसों की खेती के लिए 60 क्वीन्टल गोबर की सड़ी हुई खाद को बुवाई से पूर्व अंतिम जुताई के समय खेत में मिला देना चाहिए।

गंधकयुक्त उर्वरक जैसे एस.एस.पी. (सिंगल सुपर फॉस्फेट) या अमोनियम सल्फेट का प्रयोग अथवा जॉच के आधार पर 20 –30 किलोग्राम गंधक तथा आवश्यकतानुसार जिंक और बौरोन का प्रयोग करें।

खेत की स्थिति	बुआई के पहले या खेत की अंतिम तैयारी के समय (कि.ग्रा./हे.)			उपरिवेशन (कि. ग्रा./हे.)
	नेत्रजन	स्फूर	पोटाश	
सिंचित अवस्था	40	40	40	40
असिंचित अवस्था	40	20	20	–

खरपतवार नियंत्रण :

आवश्यकतानुसार बुआई के 30 से 45 दिनों के बाद कतारों के बीच पतला हल या बरख्खर चलाकर या पहले सिंचाई के बाद जमीन के रूखे हो जाने पर खुरपी द्वारा खरपतवार का नियंत्रण किया जा सकता हैं। रसायन द्वारा खरपतवार नियंत्रण के लिए पेंडामेथालिन 30 ई. सी. रसायन की 3.3 लीटर मात्रा की प्रति हेक्टेयर की दर से 800 से 1000 लीटर पानी में घोल कर छिड़काव करना चाहिए, बुवाई के 2–3 दिन अंतर पर यह छिड़काव करना अति आवश्यक हैं।

रोग प्रबंधन

सरसों की फसल में प्रमुख रोग जैस आल्टरनेरिया, पत्ती झुलसा रोग, सफेद किट रोग, चूणिल आति रोग तथ तुलासिता रोग फसल में लगते हैं, इन रोगो के नियंत्रण के लिए मेन्कोजेब 75 प्रतिशत नामक रसायन को 800–1000 लीटर पानी में मिलकर छिड़काव करना चाहिए।

कीट प्रबंधन :

लाहीः लाही में कीट पीला, हरा या काले भूरे रंग का मुलायम, पंख युक्त अथवा पंख विहीन होता है। इस कीट के व्यस्क एवं शिशु दोनों ही मुलायम पत्तियों, हनियों, तनों पुष्पक्रमों तथा फलियों से रस चूसते हैं, इससे आक्रान्त पत्तियझ्रू मुड़ जाती है। पुष्पक्रम पर आक्रमण होने की दशा में फलियाँ नहीं बनती हैं।

प्रबंधन :

नीम आधारित कीटनाशी का 5 मिलिलीटर प्रति लीटर पानी में घोल बनाकर फसल पर छिडकाव करना चाहिए।

पीला चिपकने वाला फंदा (ट्रैप) का व्यवहार फूल आने के पहले करना चाहिए। 8–10 फंदा प्रति हे. लगावें।

रासायनिक कीटनाशी के रूप में इमिडाक्लोरोपिड 1 मि.ली./ली. पानी में घोल बनाकर छिड़काव करना चाहिए।

आरा मक्खीः

व्यस्क कीट नारंगी–पीले रंग तथा काले सिर वाले होते हैं। इसकी मादा का ओभीपोजिटर आरी के समान होता है इस कारण इसे आरा मक्खी कहते हैं। इस कीट की सुड़िया पत्तियों के किनारे छेद बनती है और बहुत तेजी से खाती ह, इसके नियंत्रण के लिए इकालक्स 1 मि. ली./ली. पानी में घोल कर छिड़काव करना चाहिए।

फसल कटाई :

फसल लगभग फरवरी से लेकर मार्च तक पक जाती है। सरसों की फसल में जब 75 प्रतिशत फलियॉ सुनहरे रंग की हो जाए, तो फसल की कटाई सुबह में ही करे क्योंकि सुबह में कटाई करने से फसल नरम रहती है और ज्यादा बिखरती नहीं है। उसके बाद फसल को सुखाकर या मड़ाई करके बीज अलग कर लेना चाहिए। सरसों के बीज का अच्छी तरह सुखाकर ही भण्डारण करना चाहिए।

ऊपजः

तोरी – 10 से 12 क्विंटल प्रति हेक्टेयर

पीलो सरसों – 15 से 20 क्विंटल प्रति हेक्टेयर

परवल की खेती मे समेकित नाशीजीव प्रबंधन

डॉ० मनोज कुमार एवं डॉ० मुकेश कुमार सिंह
सहायक प्राध्यापक, कीट विज्ञान विभाग
डॉ० राजेन्द्र प्रसाद केन्द्रीय कृषि विश्वविद्यालय, पूसा, समस्तीपुर

परवल अत्यन्त ही सुपाच्य, स्वास्थ्यवर्धक एवं औशधीय गुणों से भरपूर लोकप्रिय सब्जी है। इसका प्रयोग मुख्य रूप से सब्जी, आचार और मिठाई बनाने के लिए किया जाता है। निर्यात की दृष्टि से परवल एक महत्वपूर्ण सब्जी है।

प्रमुख कीट एवं रोग प्रबंधनः

1• फल मक्खीः मक्खी कोमल फलों के छिल्के के नीचे अण्डे दे देती है जिसमें लार्वा बढ़कर फलों को खाकर नश्ट कर देते हैं। इसके बचाव के लिए डाएजिनान 3 मि०ली० दवा प्रति 10 लीटर पानी में मिलाकर या इण्डोसल्फान 1०5 मि०ली० दवा 1 लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करना चाहिए। कीट को आकर्शित करके भी मारा जा सकता है। इसके लिए मैलाथियान 50 मि०ली० (50 ई०सी०) की मात्रा को 20 लीटर पानी में डालकर उसमें 200 ग्राम गुड़ मिला देते हैं। इस घोल को पौधे पर छिड़काव करने से कीट आकर्षित होते हैं और चूसकर मर जाते हैं। इस दवा की मात्रा को छिड़काव 1हेक्टेयर में पौधों पर ही करते हैं। इससे बचाव के लिए अक्टूबर माह मे बेल को 50 से०मी० के उपर से कटाई कर दे ताकि नई बल विकसित हो सके जो अगले मौसम मे फल दे।

2• तना छेदक : **यह** कीट पौधों के मुख्य तने पर छेद बनाकर कीट अंदर चला जाता हैं तथा अंदर की सुरंग बनाकर पौधों की खाद्य आपूर्ति बंद कर देता है, जिससे पौधा का ऊपरी भाग सूख जाता है। इससे बचाव के लिए 5 ग्रा० फ्यूराडान 3जी० की मात्रा प्रत्येक पौधे के जड़ के पास जमीन में प्रति पौधा के हिसाब से 30–40 दिन के अंतराल पर 2 बार डालते हैं। फ्यूराडान का प्रयोग फल लगने के बाद नहीं करना चाहिए।

3• सफेद मख्खीः परवल की खेती मे सफेद मख्खी एक बडी समस्या है जो विशेषकर जब वातारवण मे नमी एंव तापमान दोनो अधिक रहता है तभी इस कीट की जनसंख्या तेजी से बढ़ती है। विशेष कर जुलाई से सितम्वर माह में इस कीट की समस्या ज्यादा होती है। आंक्रात पौधे मे पत्तीयां सिकूडो हुई चित्तीदार दिखाई देती है पत्तियो का आकार छोटे हो जाती है तथा दो गांठो की दूरी कम हो जाती है जिससे पौधा घना दिखता है। पौधो को छूने पर छोटे–छोटे सफेद मख्खी उड़ते दिखाई देते है।

इस कीट के प्रबधन हेतु पौधा को उचित एवं अनुसंसित दूरी पर लगावें। उर्वरकों का संतुलित प्रयोग करे। जब पौधे ग्रसित हो जाए तो ईमिडाक्लोप्रिड नामक दवा की 1मि०ली०/3लीटर पानी का छिड़काव किया जा सकता है। दवा का छिड़काव करने से

पूर्व फलो की तुडाई कर लेनी चाहिए तथा शाम मे छिड़काव करना चाहिए। प्रति हैक्टर 600 ली० धोल का प्रयोग श्रेयस्कर रहता है। खेत की सफाई भी कीटो के गुनन मे कमी लाता है।

4• हरा फुदका: हरा फुदका भी एक रसचूसक कीट है जो गर्म एवं नम वातावरण मे फसल को बुरी तरह प्रभावित करता है। इससे आक्रांत पौधे मे कीट पौधे के नरम भाग से रसचूसता है। जिससे पौधे की बढवार रूक जाता है। फलो का आकार छोटा एवं विकृत हो जाता है। इसके प्रवंधन हेतु भी संतुलित उर्वरक का प्रयोग करे। समुचित पौधो की संख्या सुनिश्चित करे। खेत की साफ सफाई रखे। आक्रांत पौधो पर 1मि०ली० दवा प्रति दो लीटर पानी मे मिलाकर छिड़काव करे।

5• मृदुरोमिल आसिता: यह रोग वर्शा ऋतु के उपरान्त जब तापमान 25 डिग्री से ऊपर हो, तब तेजी से फलता है। इस रोग से पत्तियों पर कोणीय धब्बे बनते हैं। ये पत्तियों के ऊपरी पृश्ठ पर पीले रंग के होते हैं। अधिक आर्द्रता होने पर पत्ती के निचली सतह पर मृदुरोमिल कवक की वृद्धि दिखाई देती है। खड़ी फसल में मैंकोजेब 2॰5 ग्राम/लीटर पानी में घोल कर छिड़काव करें। पूरी तरह रोगग्रस्त लताओं को निकाल कर जला देना चाहिए।

6• चूर्णी फफूँद (चूर्णील आसिता): इस रोग में प्रथम लक्षण पत्तियों पर सफेद चूर्णयुक्त धब्बों क रूप में दिखाई देता है। सफेद चूर्णित पदार्थ अंत में समूचे पौधे की सतह को ढँक लेता है। अधिक प्रकोप के कारण पौधों से पत्तियाँ गिर जाती है।इसके कारण फलों का आकार छोटा रह जाता है। और टेढ़े मेढ़े हो जाता है इसके रोकथाम के लिए रोगी पौधों को खेत में ईक्कठा करके जला देना चाहिए। फफूँद ना" ाक दवा प्रोपिकोनाजोल 1मि०ली० दवा एक लीटर पानी में धोल बनाकर सात दिन के अंतराल पर 2 छिडकाव करें या टोपाज 1मि०ली० दवा 4 लीटर पानी में घोलकर 2 बार छिड़काव 10 दिन के अंतराल पर करें।

7• फल का पीला होना: प्रायः ऐसा देखा जाता है कि परवल का फल लगते ही पीला हो जाता है जो पका जैसा दिखाई देता है और बाद में पौधे से टूट कर गिर जाता है। इसका दो प्रमुख कारण है–

नर फूल की कमी के कारण परागण व गर्भाधान क्रिया का न होना । ऐसी दशा में नर व मादा पाधों को 1:10 अनुपात में लगा कर फल का पीला होना रोका जा सकता है। इसके अलावा यह भी सावधानी रखनी चाहिए कि फूल आने के समय किसी प्रकार के कीटना" ाी दवा का प्रयोग दिन के समय न करें अन्यथा परागण करने वाली मधुमक्खियों के मरने का डर रहता है। यदि कीटनाशी का प्रयोग करना ही पड़े तो भाम के समय करें।

फल मक्खी द्वारा विकसित हो रहे कोमल फलों का क्षतिग्रस्त होना। इसके लिए फल मक्खी का नियंत्रण ऊपर बताए गए विधि से करें।

एग्री–क्लिनिक एवं एग्री बिजनेस सेंटर स्कीम – संकल्पना तथा वर्तमान स्थिति

धीरज कुमार सिंह, राकेश कुमार और तन्मय कुमार कोले
भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद का पूर्वी अनुसंधान परिसर, पटना

कृषि भारतीय अर्थव्यवस्था की जीवन रेखा मानी जाती है। देश की आर्थिक और समाजिक विकास तथा यहाँ की जनता को खाद्य एवं आजीविका सुरक्षा प्रदान करने में कृषि क्षेत्र का विशेष महत्व है। कृषि और संबद्ध क्षेत्र भारत की आबादी के आधी जनसंख्या को रोजगार प्रदान करता है और वष 2016–17 के आर्थिक सर्वेक्षण के अनुसार वर्तमान मूल्य पर यह क्षेत्र भारतीय अर्थव्यवस्था मेंग्रोस वैल्यू एडिसन (GVA) का लगभग 18 प्रतिशत योगदान देता है। देश में बढ़ती हुई जनसंख्या को खाद्य और पोषण सुरक्षा प्रदान करने की आवश्यकता है जो केवल फसलों और पशुधन की उत्पादकता में वृद्धि से ही संभव है। कृषि उत्पादकता में वृद्धि के लिए कृषि प्रसार के माध्यम से किसानों को नयी तकनीकों की जानकारी देना बहुत जरूरी है। साथ ही साथ फसलों एवं पशुओं की बीमारियों को पहचानकर उसे नियंत्रित करने की जरूरत है जिससे उत्पादन तकनीक में सुधार हो तथा उत्पादकता बढ़ाई जा सके। भारत में किसान एवं कृषि विस्तार कार्यकर्ता की संख्या का अनुपात (1:5000, अनुमानित 60 हजार विस्तार कार्यकर्ता) बहुत ज्यादा है। चीन में यह अनुपात 1:625 है जबकि इथियोपिया में केवल 1:476 है। इन कृषि विस्तार कर्मियों में से केवल 20 प्रतिशत कृषि स्नातक है। इन सीमित विस्तार कार्यकर्ताओं को किसानों की बड़ी संख्या को गुणवत्ता युक्त विस्तार सेवाएं प्रदान करना बहुत मुश्किल है। अतः नए प्रशिक्षित कृषि की बड़ी प्रसार कर्मियों को प्रसार कार्यक्रम में लाना जरूरी हो जाता है।

देश में उपलब्ध केन्द्रीय एवं राज्य कृषि विश्वविद्यालयों तथा अन्य मान्यता प्राप्त विश्वविद्यालयों से हर साल लगभग 17000 कृषि सन्नातक ग्रेजुएट होते है। इनमें से लगभग आधे रोजगर प्राप्त करते हैं अथवा उच्च शिक्षा के लिए जाते है बाकी बेरोजगार रहते है। इसलिए कृषि मंत्रालय भारत सरकार ने किसान समुदाय को निजीकृत विस्तार सेवाएं प्रदान करने के लिए इस बेरोजगार लेकिन प्रशिक्षित जनशक्ति के उपयोग की आवश्यकता महसूस की जिससे उन्हें रोजगार के अवसर भी मिल सके। इस पृष्ठभूमि में राष्ट्रीय कृषि और ग्रामीण विकास बैंक नाबार्ड के सहयोग से भारत सरकार के कृषि और किसान कल्याण मंत्रालय देश भर के प्रत्येक किसान को खेती के बेहतर तरीके अपनाने के लिए 9 अप्रैल, 2002 को एग्रीक्लिनिक और एग्री बिजनेस सेंटर (AC&ABC) नामक एक नयी योजना शुरू की। इस कार्यक्रम का मुख्य उद्देश्य कृषि विस्तार प्रबंध संस्थान (MANAGE) हैदराबाद को दिया गया। योजना के अन्तर्गत कृषि व्यवसायियों को प्रशिक्षण के माध्यम से कृषि क्लिनिक अथवा कृषि व्यवसाय केंन्द्र स्थापित करना है। ये केन्द किसानों को फसल चयन सर्वोत्तम कृषि पद्धतियों फसल के बाद के मुल्य वर्धितविकल्पों, प्रमुख कृषि जानकारी (शायद इंटरनेट आधारित मौसम

पूर्वानुमान सहित) मूल्य रूझान बाजार समाचार, जोखिम भामन और फसलबीमा ऋण इत्यादि विषयों पर सलाह देने का कार्य करता है।

परिभाषा

एग्री–क्लीनिक (Agri-Clinic):– एग्री–किलनिकों की परिकल्पना किसानों को मृदा स्वास्थ, फसल उत्पादन तकनीकी, पौधों की सुरक्षा, फसल बीमा, फसल कटाई के बाद की तकनीक और पशुओं के लिए नैदानिक सेवाएं चारा व चारा प्रबंधन बाजार में विभिन्न फसल मूल्यों की जानकारी सहित विभिन्न तकनीकों पर किसानों को विशेषज्ञ सलाह और सेवाएं प्रदान करने के लिए की गई है। इससे फसलों/पशुओं की उत्पादकता बढ़ती हैं और किसानों की आय वृद्धि सुनिश्चित होती है।

कृषि–व्यवसाय केंद्र (Agri Business Centre): कृषि–व्यवसाय केंद्र प्रशिक्षित कृषि पेशेवरों द्वारा स्थापित कृषि उपक्रमों की व्यावसायिक इकाइयाँ हैं। इस तरह के उपक्रमों में कृषि उपकरणों का रखरखाव और कस्टम हायरिंग आदानों जैसे बीज, खाद की बिक्री कृषि और संबद्ध क्षेत्रों में कृषि उपकरण और अन्य सेवाओं की बिक्री फसल उत्पादन के बाद का प्रबंधन व आय सृजन और उद्यमिता विकास के लिए बाजार संपर्क इत्यादि गतिविधियाँ शामिल हैं। इसका प्रमुख उद्देश्य प्रशिक्षित कृषि स्न्नातकों को रोजगार प्रदान करना है।

कोई भी कृषि या सम्बंधित का सन्नातक व्यक्ति अपना एग्री–क्लीनिक या एग्रीबिजनेस सेंटर स्थापित कर सकते है और असंख्य किसानों को पेशेवर विस्तार सेवाएं प्रदान कर सकते है। इस कार्यक्रम के लिए प्रतिबद्ध भारत सरकार कृषि में स्न्नातक, या बागवानी सेरीकल्चर पशु चिकित्सा विज्ञान वानिकी, डेयरी पोल्ट्री फार्मिग और मत्स्य पालन जैसे कृषि से संबंधित किसी भी विषय पर प्रशिक्षण प्रदान कर रही है। कृषि –व्यवसाय केंद्र स्थापित करने के लिए विशेष स्टार्ट–अप ऋण का आवेदन कर सकते है।

एग्री–क्लीनिक और कृषि –व्यवसाय केंद्र योजना के उद्देश्य

1. आवश्यक रूप से कृषि –लाभ स्थानीय जरूरतों और किसानों के लक्षित समूह की सामर्थ्य के अनुसार किसानों को भुगतान के आधार पर या अन्य सेवाओं को मुफ्त और विस्तार प्रदान करके सार्वजनिक विस्तार के प्रयासों को पूरा करने के लिए।
2. कृषि विकास का समर्थन करने के लिए।
3. बेरोजगार कृषि स्नातकों, कृषि डिप्लोमा धारकों, कृषि में इंटरमीडिएट और कृषि से संबंधित पाठयक्रमा में पीजी के साथ जैविक विज्ञान स्नातकों के लिए लाभकारी स्वरोजगार के अवसर पैदा करना।

एग्री–क्लीनिक और एग्री बिजनेस सेंटर मॉडल और इसके कार्यान्वयन में शामिल हितधारक

इस योजना के सफल कार्यान्वयन हेतु अलग–अलग संस्थाओं की अलग भूमिकाएं एवं जिम्मेदारियां है।

1. **कृषि एवं किसान कल्याण मंत्रालयः** भारत सरकार के कृषि सहकारिकता एवं किसान कल्याण विभाग अपने विस्तार प्रभार के माध्यम से इस योजना के लिए निधि प्रदान करता है। सरकार इस योजना को चलाने के लिए एक ओर सब्सिडी के रूप में नाबार्ड को पैसा उपलब्ध करता है तो दूसरी ओर मैनेज हैदराबाद को ट्रेनिंग हेतु निधि आंवटित करता है।
2. **मैनेज, हैदराबाद** : राष्ट्रीय कृषि विस्तार प्रबंधन संस्थान, हैदराबाद – इस योजना की निगरानी और समग्र कार्यान्वयन के लिए उत्तरदायी संस्था है। यह नोडल प्रशिक्षण संस्थानों के चयन तथा उनके इसकी अवधि पर भी समुचित निर्णय लेता है। यह नोडल प्रशिक्षण संस्थानों के चयन के लिए चुनने के लिए मानदंड निर्धारित करता है और योग्य अभ्यार्थियों के चयन में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।
3. **नोडल प्रशिक्षण संस्थान (NTIs)ः** ये संस्थान मैनेज, हैदराबाद द्वारा चुने जाते हैं जो चयनित कृषि स्नातकों के लिए प्रशिक्षण कार्यक्रम संचालित करने के लिए जिम्मेदार हैं और उन्हें बैंक योग्य प्रोजेक्ट तैयार करने में सहायता करते हैं। प्रोजेक्ट समाप्त हो जाने के बाद ये नोडल संस्थान प्रशिक्षुओं को बैंक से ऋण की मंजूरी में और उन्हें सफलतापूवक उद्यम स्थापित करने में सहायता करता है। मैंनेज द्वारा पूरे भारत में कुल 136 नोडल प्रशिक्षण संस्थान की पहचान की गई है जिसमें

राज्य कृषि विश्वविद्यालय राज्य सरकार के संस्थान, गैर सरकारी संगठन एग्री बिजनेस कंपनी सहकारी प्रबंधन संस्थान और कृशि विज्ञान केंद्र शामिल हैं।

4. **बैंक** : इस योजना के कार्यन्यवन में बैंकों की अहम् भूमिका हैं राष्ट्रीयकृत/वाणिज्यिक/ सहकारी और क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक इस योजना में वित्तपोशण संस्थान के रूप में कार्य करते है। वे ऋण प्रस्ताव पर विचार विमर्श के बाद प्रशिक्षित कृषि स्न्नातकों को अनुमोदित प्रस्तावों पर ऋण प्रदान करते हैं। कृषि व्यवसाइयों को ऋण प्रदान करने के अलावा ये बैंक्स सरकार द्वारा ऋण प्रस्तावों पर घोषित नीति को लागू करने के लिए भी जिम्मेदार हैं।
5. **नाबार्ड (NABARD)**: राष्ट्रीय कृषि और ग्रामीण विकास बैंक अन्य बैकों के लिए नोडल संस्थान का कार्य करता है, जो बैंकों के माध्यम से एग्री क्लीनिकों को दी जाने वाली क्रेडिट की निगरानी करता है। साथ ही साथ इस योजना के तहत नाबार्ड अन्य बैंकों को पुनर्वित सहायता प्रदान करने के लिए भी जिम्मेदार है।
6. **कृषि व्यवसायी**: कृषि व्यवसायीगण इस योजना के मुख्य लाभार्थी है। ये कृषि स्न्नातक, स्न्नातकोत्तर और डॉक्टरेट इस योजना के तहत प्रशिक्षण लेते हैं और शुल्क–सेवा के आधार पर किसानों को विशेष प्रसार और अन्य सेवाएं प्रदान करते हैं। ये व्यवसायी आर्थिक रूप से व्यवहार्य उद्यमों को स्थापित करते हुए और सरकारी प्रसार तंत्र के प्रयासों को स्वरोजगार के माध्यम से पूर्ण करने में अपना योगदान देते हैं।
7. **उपादान उद्योग: कृषि** – उद्यमियों के लिए कृषि संबंधित उपादान उद्योग एक महत्वपूर्ण कड़ी है जो डीलरशिप याइनपुट स्टॉकिंग के माध्यम से इनका समर्थन करता है जिससे इन उद्यमियों के आय का स्त्रोत नियमित रहता है। साथ ही ये उद्योग किसानों को भी समय पर जरूरी सामग्री उपलब्ध कराता है।
8. **राज्य सरकार** : एग्री क्लीनिक और एग्री बिजनेस सेंटर योजना का कार्यान्वयन बिना राज्य सरकारों की भागीदारी एवं सहयोग के संभव नहीं है। इनका मुख्य उद्देश्य एग्री क्लीनिक और एग्री बिजनेस सेंटर अन्तर्गत प्रशिक्षितों स्न्नातको को कृषि आदानो के लाइसेंस देने में प्राथमिकता प्रदान करना एवं इस योजना के राज्य सरकार के कृषि विस्तार कार्यक्रम में समावेश करने हेतु जरूरी सुविधा, सेवाएं उपलब्ध कराना है।

एग्री–क्लीनिक और एग्री बिजनेस सेंटर याजना की प्रगति

यह योजना 1 अप्रैल, 2002 से भारत में लागू की गयी है जिसके अन्तर्गत बहुत सारे कृषि स्न्नातकों को प्रशिक्षित किया गया है और उनमें से कई ने सफलतापूर्वक अपने व्यवसाय भी शुरू कर दिये हैं। यह लगभग 17 वर्षों की यात्रा रही है जिसमें

कई सफलता भी मिली तो कही पर हमें आशा के अनुरूप प्रगति देखने को नहीं मिली। इसलिए हमें इस योजना की मुख्य उपलब्धियों पर ध्यान देने की आवश्यकता है।

प्रशिक्षण का आयोजन एवं संबंधित विषयों पर व्यावसायिक उद्यमों की स्थापना :

1 अप्रैल, 2002 से लेकर 31 मई, 2019 तक विभिन्न नोडल प्रशिक्षण संस्थानों द्वारा कुल 65855 कृषि स्त्रातकों को प्रशिक्षित किया गया हैं। इनमें से 28365 प्रशिक्षुओं ने कृषि और संबद्ध क्षेत्र जैसे पशुपालन, डेयरी, मुर्गी पालन, गाय पालन, मछली पालन आदि क्षेत्रों में अपना व्यवसाय शुरू किया है। इस प्रकार यह देखा जा सकता है कुल मिलाकर सभी प्रशिक्षित स्त्रातकों में से 43.07 प्रतिशत ने विभिन्न कारणों से अने उद्यम शुरू नहीं किया। योजना के अन्तर्गत देश के अन्य हिस्सों की तुलना में उत्तरी भारत और दक्षिण भारत के राज्यों ने बेहतर प्रदर्शन किया। तमिलनाडु, महाराष्ट्र उत्तर प्रदेश कर्नाटक और राजस्थान शीष राज्य हैं जहां इस एग्री–क्लीनिक और एग्री बिजनेस सेंटर कार्यक्रम को सफलतापूर्वक लागू किया गया है। उत्तर पूर्व के राज्यों में बैंक के असहयोग के कारण इस कार्यक्रम को सफलतापूर्वक लागू किया गया है। उत्तर पूर्व के राज्यों में बैंक के असहयोग के कारण इस कार्यक्रम को सफलता नहीं मिली।

क्र. संख्या	राज्य	प्रशिक्षित स्त्रातक	कृषि उद्यम स्थापित किया	सफलता का प्रतिशत
1	आंध्र प्रदेश	1167	321	27.51
2	अरूणाचल प्रदश	35	3	8.57
3	असम	735	227	30.88
4	बिहार	3955	1392	35.20
5	चंडीगढ़	3	1	33.33
6	छत्तीसगढ़	773	335	43.34
7	दिल्ली	34	6	43.34

8	गोवा	13	7	53.85
9	गुजरात	1904	740	38.87
10	हरियाणा	702	234	33.33
11	हिमाचल प्रदेश	421	108	25.65
12	जम्मू और क" मीर	1491	191	12.81
13	झारखंड	747	186	24.90
14	कर्नाटक	3979	1618	40.66
15	केरल	223	51	22.87
16	मध्य प्रदेश	3314	1307	39.44
17	महाराष्ट्र	1529	8023	50.37
18	मणिपुर	439	128	29.16
19	मेघालय	35	3	8.57
20	मिजोरम	34	0	0.00
21	नगालैंड	184	21	11.41
22	ओडिशा	603	114	18.91
23	पांडिचेरी	135	84	62.22
24	पंजाब	658	218	33.13
25	राजस्थान	3522	1387	39.38
26	सिक्किम	9	1	11.11

27	तेलंगाना	1642	417	25.40
28	तमिलनाडु	7135	3689	51.70
29	त्रिपुरा	5	1	20.00
30	उत्तर प्रदश	14396	7096	49.29
31	उत्तरांचल	470	160	34.04
32	पश्चिम बंगाल	1163	296	25.45
	संपूर्ण भारत	**65855**	**28365**	**43.07**

योजना में गतिविधिवार स्थापित उपक्रम

प्रशिक्षित कृषि स्त्रातकों द्वारा व्यवसायिक उद्यम स्थापित करने के लिए इस योजना के तहत कृषि और संबद्ध क्षेत्रों से संबंधित 32 गतिविधियाँ को इस तरह से तैयार किया गया था कि वे किसानों को विस्तार सेवाएं प्रदान करके कृषि के समग्र विकास में योगदान कर सकें। कुछ गतिविधियों जैसे एग्री–क्लीनिक और एग्री बिजनेस सेंटर, डेयरी, कृषि खाद और फसल उत्पादन क्रियाएँ सबसे लोकप्रिय परियोजनाओं में शामिल है। सम्मिलित रूप से कृषि व्यवसाय केंद्र ने स्थापित उपक्रमों की कुल संख्या का 46.6 प्रतिशत का योगदान दिया। व्यवसाइयों के बीच एग्री क्लीनिक परियोजनाओं की लोगप्रियता मुख रूप से कम निवेश और कम जोखिम के कारण है।

कम सं0	गतिविधियों का नाम	उपक्रमों की संख्या	कम सं0	गतिविधियों का नाम	उपक्रमों की संख्या
1.	कृषि क्लिनिक	4557	17	मूल्य वर्धन	405
2.	कृषि–क्लिनिक और कृषि व्यवसाय केद्र	7938	18	मत्स्य चिकित्सालय	17

3.	एग्रो–इको टूरिज्म	17	19	बीज प्रसंस्करण और कृषि व्यवसाय	378
4.	पशु चारा इकाई	59	20	मृदा परीक्षण प्रयोगशाला	109
5.	जैव–उर्वरक उत्पादन और विपणन	166	21	ऊतक संस्कृति इकाई	28
6.	अनुबंध खेती	111	22	सब्जी उत्पादन और विपणन	394
7.	औषधीय पौधों की खेती	114	23	वर्मी कम्पोस्टिंग / जैविक खाद	536
8.	प्रत्यक्ष विपणन	171	24	पशु चिकित्सा क्लिनिक	940
9.	फार्म मशीनरी यूनिट	801	25	फसल उत्पाद	309
10.	मत्स्य विकास	395	26	डेयरी / कुक्कट / सुअर / बकरी आदि	9532
11.	फूलों की खेती	111	27	ग्रामीण गोदाम	58
12.	बागवानी क्लिनिक	178	28	जैव नियंत्रण एजेंटों का उत्पादन और विपणन	30

13.	लेंडस्केप + नर्सरी	114	29	कृषि पत्रकारिता	18
14.	नर्सरी	588	30	रेशम के कीड़ो का पालन	63
15.	जैविक खेती	117	31	मशरूम की खेती	130
16.	कीटनाशक उत्पादन और विपणन	57	32	मधुमक्खी पालन	104

प्रशिक्षुओं द्वारा कृषि व्यवसाय शुरू न करने के कारण

जैसा कि विदित है इस योजना के अन्तर्गत लगभग 57 प्रतिशत प्रशिक्षुओं ने अपना कोई व्यवसाय शुरू नहीं किया। उद्यम शुरू करने के कुछ मुख्य कारण का पता लगाने हेतु सरकार ने इस योजना का मध्यावधि मूल्यांकन वर्ष 2009 में ग्लोवल एग्रीसिस्टम प्राइवेट लिमिटेट द्वारा करवाया। मूल्यांकन में यह पाया गया कुल स्त्रातक प्रशिक्षुओं में से 25 प्रतिशत ने आगे की पढ़ाई के लिए नया व्यवसाय शुरू नहीं किया जबकि शेष 22 प्रतिशत ने दूसरी नौकरी पाने के लिए यह योजना छोड़ देते है। उत्तरदाताओं ने पैसे की कमी, बैंक सहायता की कमी, उनकी परियोजना अवधारणा की गैर–विपणनता और अपर्याप्त प्रशिक्षण को उद्यम शुरू नहीं करने के कारणों के रूप में जिम्मेदार ठहराया है।

निष्कषः यह योजना अवधारणाओं और इरादों के मामलें में बहुत अच्छी है। अगर इसे सही तरीके से लागू किया जाए तो यह प्रशिक्षित व्यक्तियों को रोजगार के ढ़ेरों अवसर उपलब्ध करा सकता है। लेकिन बैंकों को संवेदनशील बनाने की आवश्यकता है, क्योंकि कई परियोजनाएं बैंक से वित्त की कमी के कारण शुरू नहीं की जा सकी है। एक कृषि उद्यम कई और लोगों को रोजगार प्रदान करता है। इसलिए, उत्तर पूर्वी राज्यों के क्षेत्रों में इस योजना को आगे बढ़ाने की आवश्यकता है जहां कई गड़बड़ियां है।

कृषि आधुनिकीकरण में मोबाइल एप्प की भूमिका

आरती कुमारी[1], सोनालिकासाहु[2], अकरम अहमद[1], पवनजीत[1], एवं मृदुस्मितादेबनाथ[1]
[1]वैज्ञानिक, भा.कृ.अनु.परिषद का पूर्वी अनुसंधान परिसर, पटना
[2]वैज्ञानिक भा.कृ.अनु.प–राष्ट्रीयमृदा सर्वेक्षण एवं भूमिउपयोगनियोजनब्यूरो, नागपुर

प्रस्तावना

कृषि भारत की रीढ़ की हड्डी है, जो देश की अर्थव्यवस्था में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। यह भारत में सकल घरेलू उत्पाद के सबसे बड़े योगदानकर्ताओं में से एक है और 58 प्रतिशत से अधिक भारतीय ग्रामीण परिवार अपनी आजीविका के साधन के रूप में कृषि पर निर्भर हैं। यह कहना कतई गलत नहीं होगा कि भारतीय कृषि जलवायु परिवर्तन के समय में एक निर्णायक दौर से गुजर रही है और वर्तमान समय में जलवायु परिवर्तन के कारण किसानों को एक सही समय पर कृषि संबंधी सही जानकारी देना एक चुनौती है। डिजिटल इंडिया के एक नए युग के साथ नई तकनीकों की शुरूआत ने दुनिया भर के लोगों को जोड़ा और लोगों के व्यवसाय को आसान बना दिया है। आधुनिक तकनिकी युग में, स्टार्टअप और निजीतकनीकी कंपनियों ने भारत में किसानों के लिए मोबाइल एप्लिकेशन विकसित करने के लिए सरकार के साथ कदम से कदम मिलाया है। किसान मोबाइल एप्लिकेशन के माध्यम से देश भर के कृषि विशेषज्ञों से बातचीत करने और मार्गदर्शन प्राप्त करने में सक्षम हैं और, यह उम्मीद की जाती है कि आने वाले समय में मोबाइल एप्लिकेशन अपनाने से कृषि क्षेत्र को बढ़ावा मिलेगा। आज स्मार्ट फोन हर आम आदमी की जरूरत बन गया है और सुदूर क्षेत्रों में भी पहुंच गया है। बोस्टन समूह अध्ययन का कहना है कि लगभग 315 मिलियन ग्रामीण भारतीयों को 2020 तक इंटरनेट कनेक्शन मिल जाएगा। भारत दुनि में दूसरा सबसे बड़ा स्मार्टफोन बाजार है जिसमें ग्रामीण क्षेत्रों में 87 मिलियन मोबाइल इंटरनेट उपयोगकर्ता हैं। हाल ही में भारत सरकार द्वारा 2015 में शुरू किए गए डिजिटल इंडिया का उद्देश्य डिजिटल साक्षरता को बढ़ावा देना और ग्रामीण समुदायों को सशक्त बनाने के लिए डिजिटल बुनियादी ढांचे का निर्माण करना है। आज 58 प्रतिशत ग्रामीण परिवार कृषि पर अपनी आजीविका के सबसे प्रमुख स्त्रोत के रूप मे निर्भर हैं। जैसे–जैसे इंटरनेट कनेक्शन अधिक लोकप्रिय हो रहे हैं, ग्रामीण क्षेत्रों में भी स्मार्टफोन की पहुच बढ़ रही है और किसान खेती के समाधान पर शोध करने में अधिक सक्षम हो रहे हैं। यह देखते हुए डिजिटल इंडिया के तहत डिजिटल कृषि की भूमिका पर विचार करने की आवश्यकता है। डिजिटल इंडिया के तहत उन मोबाइल ऐप्स का उदय और विकास हुआ है जो मौजूदा सरकारी योजनाओं और कृषि आधारित अन्य जानकारियों को किसानों तक पहुंचाने में मदद कर रहे हैं।

कृषि में मोबाइल ऐप्स के प्रमुख लाभ

मोबाइल एप्लिकेशन किसानों को मौसम की स्थिति, बाजार दर एवं रूझानों, फसलों के बीमा, कृषि समाचार, वित्तीय सेवाओं, वस्तुओं की कीमत, भू–स्थानिक अनुप्रयोग आदि पर डेटा प्राप्त

करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही है। किसान मोबाइल एप्लिकेशन के माध्यम से कृषि सम्बंधित समस्याओं की जानकारी कृषि विशेषज्ञों से सीधे पूछ सकते हैं और वे नई तकनीक, सफल किसानों, मशीनरी आदि से संबंधित वीडियों भी देखने में सक्षम हो रहे हैं। इतना ही नहीं, खेतों को खंगालने और कृषि संबंधी आंकड़ों को प्रबंधित करने से लेकर, ड्रोन उड़ाने और खेत के नक्शे बनाने तक, वास्तव में ऐसा कोई काम नहीं है जो एक कृषि ऐप नहीं कर कर सकता है। यह डिजिटल बदलाव भारतीय कृषि स्थितियों के लिए एक गेम–चेंजर के रूप में काम कर रहा है। आज हजारों एप्प कृषि के क्षेत्र में उपलब्ध हैं, लेकिन एप्प की उपयोगिता सूचना, सामग्री और एप्लिकेशन निर्माण जनादेश पर निर्भर करती है। कुछ एप्प केवल विशिष्ट जानकारी के लिए जबकि अन्य बहुउद्देशीय होते हैं किसानों के लिए कुछ महत्वपूर्ण मोबाइल एप्प की सूचीइस प्रकार हैः

- खेत–ओ–पिडियाःइस एप्प के माध्यम से गुजराती किसान मिट्टी, क्षत्र और मौसम के अनुसार उपयुक्त फसल की जानकारी प्राप्त कर सकते हैं।
- **किसान सुविधा**ः इस एप्प के माध्यम से किसान मौसम, विक्रेता, बाजार भाव, पौधा संरक्षण, कृषि विशेषज्ञ से सलाह, खेती बाड़ी एवं मृदा स्वास्थ्य कार्ड के बारे में आसान से जानकारी प्राप्त कर सकते हैं। इसक माध्यम से कीट प्रबंधन से संबंधित विशेष जानकारी प्रदान की जाती है। अगर फसल की स्थिति सामान्य नहीं है, तो किसान फसल की एक तस्वीर अपलोड कर सकते हैं और किसान विशेषज्ञों के पास किसान सुविधाएप्प के माध्यम से भेज सकते हैं और उसका निवारण पा सकते हैं।
- **फसल बीमा मोबाइल एप्प**ः इस एप्प के माध्यम से किसान फसल बीमा से सम्बंधित सामान्य बीमा राशि, विस्तारित बीमा राशि, प्रीमियम विवरण और किसी भी अधिसूचित क्षेत्र में कोई भी अधिसूचित फसल की सब्सिडी की जानकारी प्राप्त करने में सक्षम है।
- **पूसा कृषि**ः इस मोबाइल एप्प के उपयाग से किसान अपनी समस्याओं का समाधान आसानी से प्राप्त कर सकते हैं। इसके साथ ही किसान मौसम के बारे में जानकारी प्राप्त कर, फसलों को बचाने के लिए भी उपाय कर कसते हैं। यह एप्प किसानों को भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद द्वारा विकसित की जाने वाली फसलों की नइ किस्मों से संबंधित जानकारी प्रदान करता है, साथ ही साथि खेती के साधनों का संरक्षण करने वाले संसाधन और इसके कार्यान्वयन से किसानों को रिटर्न बढ़ाने में मदद करता है।
- **एमकिसानएप्लीकेशन**ः किसान भाई इस मोबाइल एप्प का उपयोगकर वर्तमान दिवस के मौसम और अगले 5 दिनों के व्यापारी, बाजारी भावों, कृषि परामर्श, पौध संरक्षण, आईपीएम पद्धातियों आदि के साथ ही साथ मौसम एलर्ट एवं कमोडिटी के बाजार में भावों के साथ निकटतम क्षेत्र और राज्य में अधिकतम भावों की जानकारी प्राप्त कर सकते हैं।

- **एग्रीमार्केट मोबाइल एप्पः** किसान भाई इस मोबाइल एप्प का उपयोगकर फसलों के बाजार मूल्य की उपकरण के स्थान के 50 किमी के भीतर बाजार की जानकारी प्राप्त कर सकते हैं।
- **किसान योजनाः** किसान योजना एक और लोकप्रिय एंड्रॉइड कृषि एप्प है, जो मुफ्त में भारत के आठ राज्य अर्थात् महाराष्ट्र, गुजरात, कर्नाटक, आंध्र प्रदेश, उत्तर प्रदेश, बिहार और झारखंड में उपलब्ध हैं। यह ग्रामीण लोगों और सरकार के बीच सूचना के अंतर को कम कर किसान को सभी सरकारी योजनाओं के बारे में जानकारी प्रदान करता है, जिससे किसानों के समय की भी बचत होती है।

निष्कर्ष

कृषि हमारे देश के सबसे महत्वपूर्ण क्षेत्रों में से एक है और भारत की जीडीपी में लगभग 17.01 प्रतिशत योगदान देता है। आज स्मार्ट फोन की मदद से, विकासशील देशों में बड़ी संख्या में लोग लाभान्वित हुए हैं, लेकिन कृषि के क्षेत्र में अभी भी किसान भाई सिमित उपयोग कर रहे हैं। इतना ही नहीं, कृषि में, बुवाई, कटाई और सिंचाई जैसे कई गतिविधियों को उपयुक्त तरीके से उचित समय पर अच्छी उपज प्राप्त करने के लिए किया जाना आवश्यक है, लेकिन दुख की बात है कि ज्यादातर किसान अपनी फसल की उपज पर इन गतिविधियों के प्रभाव के बारे में अनजान हैं। मोबाइल के माध्यम से आज किसी भी समय, फसल, मिट्टी, जलवायु, वर्षा बीज और मशीनरी के बारे में जानकारी, किसानों की उंगलियों पर उपलब्ध है। कृषि में विपदा मूल्यांकन मोबाइल एप्प के माध्यम से आसानी से कर सकते है। अतः वर्त्तमान समय म किसानों को मोबाइल ऐप्स के बारे में ज्यादा से ज्यादा जागरूक करने की जरूरत हैं ताकि वो टेक्नोलॉजी के युग में इसके उपयोग से अछूता न रह जाये। किसानों की भाषाई बाधा पर काबू पाने के लिए, क्षेत्रीय भाषा में विकसित उपलब्ध मोबाइल एप्स के बारे में जागरूक करन की आवश्यकता है। इसके साथ ही कृषि में मोबाइल एप्स की संख्या में वृद्धि के साथ, गतिशीलता का अपरिहार्य और बढ़ते महत्व को देखते हुए जागरूकता में सुधार करना भी अति महत्वपूर्ण है, ताकि डिजिटल इंडिया के साथ डिजिटल फार्मिंग के स्वप्न को पूरा किया जा सके।

पूर्वी भारत में सूक्ष्म सिंचाई और फर्टिगेशन की समस्याएं और संभावनाएं

रचना दूबे[1], कृष्ण गोपाल मंडल[2] एवम् अमोद कुमार ठाकुर[3]
[1]भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद का पूर्वी अनुसंधान परिसर, पटना
[1,2,3]भारतीय जल प्रबंधन संस्थान भुवनेश्वर, ओड़ीशा

सारांश

हमारे देश में भोजन और पानी की कमी की बढ़ती मांग को पूरा करने के लिए लिए सतत सिंचाई प्रबंधन आवश्यक है। सूक्ष्म सिंचाई के तहत केवल 7.7 मिलियन हेक्टेयर क्षेत्र ही है, जिसको की हमे आने वाले दिनों में एक उचित स्तर तक बढ़ाना है विशेष रूप से तब जब इसकी क्षमता लगभग 69 मिलियन हेक्टेयर है। सूक्ष्म सिंचाई से जल उपयोग दक्षता में वृद्धि एवम् ऊर्जा की बचत, सिंचाई लागत, उर्वरक खपत कम कर सकते है जो की किसान की आय वृद्धि में साधक हो सकता है। सूक्ष्म सिंचाई से हम लगभग 30 से 40 प्रतिशत तक पानी और 20 प्रतिशत तक उर्वरक की बचत के साथ ही हम लगभग 20 प्रतिशत तक उपज में भी वृद्धि होती है। भविष्य में हमे अपने शोध और विकास के द्वारा किसानों को सूक्ष्म सिंचाई को अपनानें में आने वाली समस्याओं को हल करना होगा।

प्रस्तावना

फसल उत्पादन के लिए जल और पोषक तत्त्व महत्वपूर्ण निवेश हैं। पिछले 40 साल से निवल बोया क्षेत्र लगभग 40 मिलियन हेक्टेयर ही है (1)। इसलिए, देश को जुड़वां चुनौतियों का सामना करना है – खाद्य की मांग को पूरा करने और पानी की कमी का सामना करना।

<u>सूक्ष्म सिंचाई को अपनाने की आवश्यकता</u>

निवल बोया क्षेत्र

भारत में कुल 142 मिलियन हेक्टेयर निवल बोया क्षेत्र में से शुद्ध सिंचित क्षेत्र केवल 65.3 मिलियन हेक्टेयर ही है। यद्यपि देश ने जल संसाधन के विकास में महत्वपूर्ण उपलब्धि हासिल की है फिर भी एक एक व्यापक अंतर अभी भी सिंचाई (123.3 मिलियन हेक्टेयर) और इसकी उपयोगिता (91.5 मिलियन हेक्टेयर) के बीच विद्यमान है। प्रति वर्ष पानी की प्रति व्यक्ति उपलब्धता 1951 में 5177 घन मीटर से घटकर 2001 में 1820 घन मीटर हो गयी है जो की 2010 में घट कर 1588 घन मीटर हो गयी है जिसकी मूल वजह बढ़ती जनसंख्या, तेजी से

होते औद्योगीकरण, शहरीकरण, सस्य सघनता और भूजल तालिका में गिरावट है, और भविष्य में 2025 और 2050 तक क्रमशः 1341 और 1140 घन मीटर तक गिरावट की उम्मीद है।

विशेषज्ञों का मानना है की अगर हम पानी का कुशल उपयोग करने में विफल रहते हैं, तो हम भविष्य में पानी की मांग को पूरा नहीं कर सकते। इसलिए देश में कृषि के विकास के लिए सूक्ष्म सिंचाई एक साधक है। भारत सरकार द्वारा एक सर्वेक्षण से पता चलता है कि सूक्ष्म सिंचाई के ठोस लाभ हैंरू पानी के उपयोग दक्षता में 50–90 प्रतिशत की वृद्धि, ऊर्जा खपत में 30.5 प्रतिशत की बचत, उर्वरक खपत में 28.5 प्रतिशत की बचत, फलध फसला और सब्जियों की उत्पादकता में क्रमशरू 42.4 प्रतिशत और 52.7 प्रतिशत की बढ़त, सिंचाई लागत में 31.9 प्रतिशत की बचत, 30.4 प्रतिशत किसानों ने नई फसलों को आजमाया और कुल मिलाकर किसानों की आय में 42 प्रतिशत वृद्धि। सबसे महत्वपूर्ण बात, सूक्ष्म सिंचाई द्वारा सिंचाई की दक्षता में काफी वृद्धि हुई है।

सूक्ष्म सिंचाई पर राष्ट्रीय मिशन द्वारा तैयार एक प्रभाव–अध्ययन रिपोर्ट में भारत सरकार ने स्पष्ट रूप से संकेत दिया है कि सूक्ष्म सिंचाई (50–90 प्रतिशत) को समग्र दक्षता सतह सिंचाई (30–35 प्रतिशत) की तुलना में काफी अधिक है (आंकड़ा 1)। इसलिए, यह दर्शाता है कि फसल उत्पादन प्रणालियों के लिए पानी के कुशल और टिकाऊ उपयोग के लिए सूक्ष्म सिंचाई अर्थात ड्रिप और सिंचन के तरीकों को अपनाने की आवश्यकता है।

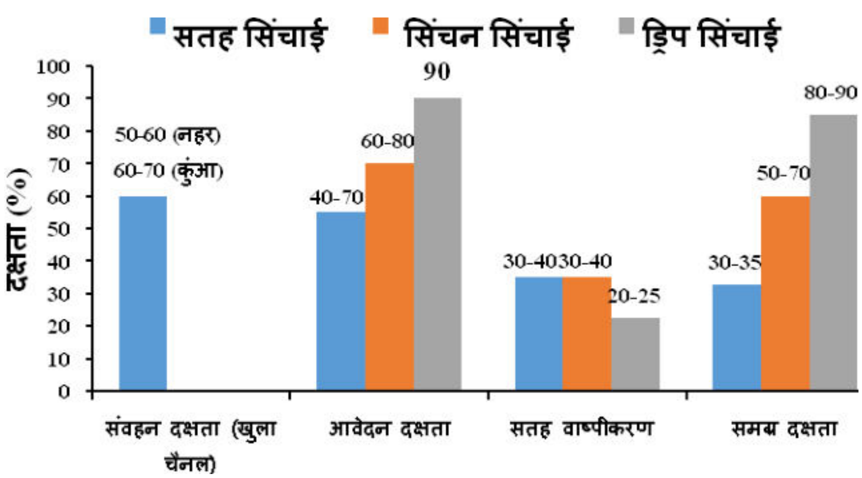

चित्र 1. विभिन्न तरीकों से सिंचाई की दक्षता

स्रोतः भारत सरकार के लिए तैयार माइक्रो–सिंचाई प्रभाव अध्ययन पर राष्ट्रीय मिशन, जिसमें 5892 लाभार्थियों शामिल हैं।

पूर्वी भारत में सूक्ष्म सिंचाई के वर्तमान परिदृश्य

भारत में, वर्तमान में सूक्ष्म सिंचाई के तहत केवल 7.7 मिलियन हेक्टेयर (2015) क्षेत्र ही है। जिसमे से, ड्रिप सिंचाई का फैलाब 3.37 मिलियन हेक्टेयर सिंचन सिंचाई का फैलाब 4.36 मिलियन हेक्टेयर है। जबकि इसकी सैद्धांतिक क्षमता का अनुमान लगभग 69 मिलियन हेक्टेयर है, और अप्रयुक्त क्षमता 61.8 मिलियन हेक्टेयर है। इसका मतलब है, हमें लक्ष्य तक पहुंचने के लिए एक लंबा रास्ता तय करना होगा। सूक्ष्म सिंचाई (एनएमआई) के राष्ट्रीय मिशन का अनुमान है कि प्रति वर्ष 0.5 मिलियन हेक्टर प्राप्त करने के लक्ष्य के साथ, यह अपनी क्षमता तक पहुंचने में बहुत समय लगेगा। दरअसल, वर्तमान परिदृश्य संकेत करता है कि देश के विभिन्न क्षेत्रों में ड्रिप या सिंचन सिंचाई को स्वीकार करने के संबंध में देश के अलग अलग हिस्सो में बहुत अंतर है। यहां तक कि पूर्व भारतीय राज्यों में, बिहार, छत्तीसगढ़ और ओडिशा में तुलना करते हुए यह पाया गया कि छत्तीसगढ़ बहुत आगे है (तालिका 1 और 2)। छत्तीसगढ़ को छोड़कर, पूर्वी भारत में सूक्ष्म सिंचाई के क्षेत्र में प्रवेश (प्रवेश का मतलब राज्य में कुल शुद्ध बोने से विभाजित क्षेत्र में सूक्ष्म सिंचाई का क्षेत्र) 5.5 प्रतिशत की राष्ट्रीय मानदंड काफी कम है।

तालिका 1. पूर्वी भारतीय राज्यों में सूक्ष्म सिंचाई क्षेत्र की कवरेज और सूक्ष्म सिंचाई पहुंच (2015) । प्रवेश का मतलब सूक्ष्म सिंचाई के अंतर्गत क्षेत्र में कुल शुद्ध बोना क्षेत्र से विभाजित है

राज्य	**सूक्ष्म सिंचाई (हेक्टेयर) के तहत क्षेत्र 31 मार्च] 2015 तक**	**राज्य द्वारा प्रवेश (%)**
बिहार	1,02,050	1.9
छतीसगढ़	2,56,193	5.5
झारखंड	16,222	1.5
ओड़ीशा	1,00,579	2.3
पश्चिम बंगाल	51,180	1.0
अखिल भारतीय कुल	77,28,812	5.5

स्रोतरू बागवानी (एनसीपीएएच) में प्लास्टिक की खेती संबंधी राष्ट्रीय समिति, बागवानी के एकीकृत विकास (एमआईएचएच), डीएसी, भारत सरकार।

तालिका 2. पूर्व भारतीय राज्यों में सूक्ष्म सिंचाई को अपनाने से ऊर्जा, उर्वरक और सिंचाई लागत बचत, उत्पादकता में वृद्धि और नई फसल की शुरूआत

	ऊर्जा की खपत बचत (%)	उर्वरक खपत बचत (%)	फलों की उत्पादकता में वृद्धि (%)	सब्जियों की उत्पादकता में वृद्धि (%)	सिंचाई लागत बचत (%)	नई फसल परिचय (%)
बिहार	40.0	7.6	15.4	31.6	28.6	1.6
छत्तीसगढ़	37.8	40.4	66.7	98.8	36.5	53.6
ओड़ीशा	22.4	20.9	35.0	28.2	26.5	46.0
कुल	30.5	28.5	42.4	52.7	-	30.4

स्रोतः भारत सरकार के लिए तैयार सूक्ष्म सिंचाई प्रभाव अध्ययन पर राष्ट्रीय मिशन, जिसमें 5892 लाभार्थि शामिल हैं।

सूक्ष्म सिंचाई के माध्यम से श्हर खेत को पानी और पानी की उपयोग दक्षता में सुधार। अर्थात श्अधिक फसल प्रति बूंद। ये केंद्र सरकार के प्रमुख कार्यक्रम "प्रधान मंत्री कृषि सिंचाई योजना" (पीएमकेएसवाई) के तहत नारे हैं जिसमे सूक्ष्म सिंचाई एक अभिन्न अंग है।

सूक्ष्म सिंचाई के प्रणाली घटक

सूक्ष्म सिंचाई प्रणाली दो प्रकार के होते हैं— ड्रिप और सिंचन सिंचाई। उर्वरक आवेदन के साथ मिश्रित होने पर ड्रिप सिंचाई फर्टिगेशन हो जाती है। फर्टिगेशन के माध्यम से फसल की सिंचाई सीधे जड़ों में हो जाती है। इससे पानी की कम मात्रा में भी निरंतर आवेदन की अनुमति देता है। इसमे पानी की हानी कम होती है वाष्पीकरण के माध्यम से, टपकाव और सतह अपवाह के अन्तःस्त्रवण से।

सिंचन सिंचाई प्राकृतिक वर्षा का उदाहरण देती है। बेशक वाष्पीकरण अन्य सतह सिंचाई के समान होगा। पानी को पाइपों के माध्यम से वितरित किया जाता है।

ड्रिप सिंचाई	सिंचन सिंचाई
नियंत्रक / टाइमर पानी के चक्र को नियंत्रित करने के लिए	प्राइम मोवर / पंप सक्शन पाइप
उलटी धारा का निवारक	मुख्य लाइन
जल चालू / बंद करने के लिए वाल्व	उप मुख्य
गंदगी और मलबे को रोकने के लिए फ़िल्टर	पार्श्व रेखाएं
दबाव नियंत्रक	छिड़काव सिर
पाइप लाइन	सिंचन अगुवाई
माइक्रो-ट्यूबिंग	
एमीटर्स	
फ्लश वाल्व / टोपी	

सूक्ष्म सिंचाई और फर्टिगेशन की समस्याएं

अतीत में, देश में सूक्ष्म सिंचाई के प्रसार पर ध्यान देने की कमी रही है। कुछ समस्याएं अब भी वही हैं, इसलिए बड़े पैमाने पर इन सिंचाई तकनीकों को किसानों द्वारा अपनाया नहीं जा रहा है।

1. ड्रिप और पानी में घुलनशील उर्वरक महंगा हैं। ड्रिप सिंचाई के माध्यम से उर्वरकों का मिश्रण करने के लिए घुलनशील उर्वरकों और पंपिंग और इंजेक्शन सिस्टम का उपयोग करना आवश्यक है।

2. सिस्टम को एक अच्छी गुणवत्ता वाले पानी की आवश्यकता होती है।

3. ड्रिप और सिंचन सिंचाई प्रणाली के अच्छे रखरखाव की आवश्यकता होती है, जो कभी–कभी मुश्किल होती है, साथ ही चोरी की समस्या भी है।

4. पूर्वी भारत के संबंध में अगर बात करे तो भूमि खंडण बहुत अधिक है। बड़े पैमाने पर अपनाने के लिए प्रोत्साहन नहीं होने पर छोटे होल्डिंग्स वाले किसान इसके लिए आकर्षित नहीं होते हैं।

5. दिशानिर्देशों / सरकारी आदेश और सब्सिडी वितरण प्रक्रिया में समस्या और विलंब होता है।

इनके अलावा, कुछ फर्टिगेशन से जुड़े मुद्दे हैं। इंटरनेशनल पोटैश इंस्टीट्यूट के पेट्रीसिया इमास ने कहा कि प्रभावी फर्टिगेशन के लिए फसल विकास के व्यवहार, महत्वपूर्ण शारीरिक चरण, पोषक तत्वों की आवश्यकताएं और जड़ो की आकृति, मृदा रसायन विज्ञान जैसे कि पोषक तत्वों की घुलनशीलता और गतिशीलता,पोषक तत्व के बीच में परस्पर संबध, उर्वरकों का भौतिक मिश्रण, उनके वर्षा, रुकावट और जंग यदि कोई हो। पीएच, नमक और सोडियम खतरों और जहरीले आयनों सहित जल गुणवत्ता कारक। पीएच और अमोनियाध्नाइट्रेट अनुपात, मिट्टी और लवणता की स्थिति में पोषक तत्व गतिशीलता को विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए (7)।

सूक्ष्म सिंचाई प्रणाली की भविष्य में संभावना

हमारे देश में और साथ ही पूर्वी भारतीय राज्यों में सूक्ष्म–सिंचाई प्रणाली के उपयोग के लिए एक बड़ी संभावना है। बेशक, फसलों के प्रकार (तालिका 3), उनके मौजूदा एकड़ तक फैलाव के अनुसार सूक्ष्म–सिंचाई की सीमा अलग–अलग होंगी। पूर्वी भारतीय राज्यों में इसका उपयोग बहुत कम है, इसका मतलब यह है कि यदि जागरूकता और उपयुक्त उपाय किए जाएंगे तो भविष्य में सूक्ष्म सिंचाई को और भी बड़ी तादात में अपनाया जा सकता है।

मानसून के महीनों में अच्छी बारिश होने के बावजूद, पूर्वी भारत के बड़े क्षेत्र में चावल–ऊसर के अंतर्गत है। खरीफ के बाद किसान अपने खेतों को ऊसर छोड़ देते है क्योंकि पानी की उपलब्धता बहुत ही अविश्वसनीय है। इस प्रकार, चावल और ऊसर वाले क्षेत्रों में सूक्ष्म सिंचाई को अपनाने के लिए भविष्य आशाजनक है। इसमें जबरदस्त क्षमता है

तालिका 3. सूक्ष्म सिंचाई प्रणाली के लिए संभावना (लाख हेक्टेयर)

फसल	**कुल क्षेत्रफल (लाख हेक्टेयर)**
अनाज	27.6
दलहन	7.6
तिलहन	4.9
कपास	8.8
सब्जियां	6.0
मसालों	2.4
फूल] औषधीय और सुगंधित पौधों	1.0
गन्ना	4.3
फल	3.9
नारियल] वृक्षारोपण फसलों और ताड़ का तेल	3.0
कुल	**69.5**

स्रोतः सूक्ष्म सिंचाई (ड्रिप सिंचाई) का एक मामला, केंद्र कृषि में प्रबंधन, आईआईएम, अहमदाबाद (अगस्त 2014)

इसके अलावा, भूजल का विकास यानी पूर्वी भूजल की उपलब्धता के लिए वार्षिक भूजल प्रारूप का प्रतिशत। पूर्व भारतीय राज्यों में, अर्थात असम, बिहार, छत्तीसगढ़, ओडिशा और पश्चिम बंगाल में कम (22–43 प्रतिशत) है, जबकि इसके देश का औसत 61 प्रतिशत है (8)। इसलिए, पूर्वी भारतीय राज्यों में भूजल विकास को बढ़ाने के लिए एक बड़ी संभावना है।सूक्ष्म –सिंचाई राज्यों में अप्रयुक्त भूजल और सिंचित क्षेत्र को बढ़ाने में बहुत उपयोगी होगी। अक्सर पूंछ के अंत में नहरी रकबा क्षेत्रों में और नहर सिंचाई प्रणाली के तहत मध्य क्षेत्रो में यह देखा गया है कि पानी की कमी हो जाती है, क्योंकि नहर वितरण मांग–चालित और समय पर हमेशा पर्याप्त नहीं होता है। नहर सिंचाई प्रणाली में केवल 40 प्रतिशत क्षमता है, उन क्षेत्रों में अतः सूक्ष्म सिंचाई एक प्रमुख भूमिका निभाएगी। जब सिस्टम सहायक संग्रहण संरचनाओं से

पानी का उपयोग करेगी और तालाबों में फसलों और मछलियों की सफल खेती के लिए भूजल के साथ संयोजन करेगी। एकीकृत खेती की एक आत्मनिर्भर प्रणाली बहुत सफल और टिकाऊ होगी।

ड्रिप सिंचाई का मूल्यांकन

विभिन्न राज्यों में अलग–अलग परीक्षणों के माध्यम से पाया गया, जिसे भारतीय जल प्रबंधन संस्थान (भा.ज.प्र.सं.), भुवनेश्वर द्वारा समन्वित किया गया की सूक्ष्म सिंचाई सभी सिंचाई विधियों में से सबसे ज्यादा आर्थिक और कुशल साधन है। कई फसलों के लिए किए गए प्रयोगों के दौरान, यह पाया है कि सूक्ष्म सिंचाई प्रणाली लगभग 30–40 प्रतिशत पानी और लगभग 20 प्रतिशत उर्वरक बचाती है और इससे लगभग 20 प्रतिशत उपज भी बढ़ जाती है।

भा.ज.प्र.सं. रिसर्च फार्म, भुवनेश्वर में क्षेत्र परीक्षण, दिखाते हैं कि हालांकि ड्रिप और कुंड सिंचाई प्रणाली के तहत फसल की पैदावार समान थी, सिंचाई के लिए सिंचाई में पानी की बचत अधिक थी, (चित्र 2)। मक्का, सूरजमुखो और टमाटर में 29, 21 और 30 प्रतिशत थी, क्रमशः की पनि बचत हुई ड्रिप विधि द्वारा कुंड सिंचाई पद्धति की तुलना मे (9,10)।

सिंचाई जल का उपयोग व जल उपयोग दक्षता निश्चित तौर पर फसल, फसल की अवधि, फसल लगाने का समय, मिट्टी के प्रकार, पानी की आवश्यकता और मौसम की स्थिति आदि की प्रकृति से भिन्न हो जाती है।

मक्का के लिए ड्रिप सिंचाई

टमाटर के लिए ड्रिप सिंचाई

सूर्यमुखी के लिए ड्रिप सिंचाई

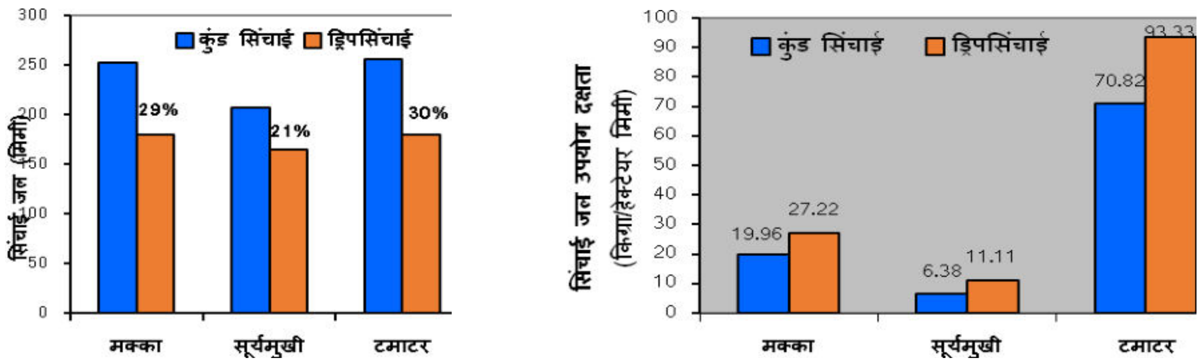

चित्र 2. सिंचाई जल का प्रयोग और सिंचाई जल उपयोग दक्षता मक्का, सूर्यमुखी और टमाटर की फसलों द्वारा कुंड पद्धति की तुलना में सिंचाई के उपयोग के साथय : ड्रिप सिंचाई में पानी की बचत

निष्कर्ष

सूक्ष्म सिंचाई भारतीय कृषि और फसल उत्पादन प्रणालियों के लिए विशेष रूप से पूर्वी भारत के चावल–ऊसर क्षेत्रों के लिए आशाजनक है। बागों और सब्जियों की खेती के लिए और साथ ही अन्य उच्च मूल्य वाले फसलों की सिंचाई के लिए यह बहुत उपयोगी है। किसानों और विस्तार एजेंसियों के बीच अधिक जागरूकता पैदा करने की आवश्यकता है। सूक्ष्म सिंचाई प्रणाली स्थापित करने की लागत को कम करना चाहिए, जिससे कि गरीबों और छोटे धारक किसानों द्वारा सूक्ष्म सिंचाई को अपनाने में आसानी हो जाए। समर्पित विशेषज्ञों की एक टीम को पूरी प्रक्रिया की निगरानी करनी चाहिए, जिसमें दिशानिर्देश / सरकारी आदेश, सब्सिडी वितरण, स्थापना और क्षेत्र में ड्रिप / फर्टीगेसन के वास्तविक संचालन की स्थापना से शुरू किया गया हो। फर्टिगेशन के लिए वास्तविक कृषि स्थिति में किसानों को तकनीकी मार्गदर्शन की आवश्यकता है। उर्वरक इंजेक्शन की मात्रा, सही प्रकार और आवृत्ति तय करने के लिए मार्गदर्शन की आवश्यकता होगी। नुस्खा, मिट्टी की स्थिति और फसल की मांग के साथ फसल शरीर विज्ञान, मिट्टी रसायन विज्ञान, लवणता और पानी की गुणवत्ता आदि के मेटा–विश्लेषण के साथ मेल खाना चाहिए।

राष्ट्रीय कृषि बाजार (e-NAM): एक परिचय

उज्ज्वल कुमार[1] एवं धीरज कुमार सिंह[2]
[1]प्रधान वैज्ञानिक एवं प्रमुख, सामाजिक, आर्थिक एवं प्रसार प्रभाग
[2]वैज्ञानिक, सामाजिक, आर्थिक एवं प्रसार प्रभाग
भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद का पूर्वी अनुसंधान परिसर, पटना

कृषकों की आमदनी का सीधा सम्बन्ध बाजार से है। जिस साल किसान अच्छी पैदावार करते हैं उस साल बाजार में उस उत्पाद की कीमत नीचे आ जाती है जिससे किसान मुनाफा नहीं कमा पाते हैं। कृषि बाजार से जुड़े अनेक कठिनाइयाँ हैं, जैसे कईं बिचौलिए का होना, माप में अंतर, व्यवस्थित बाजार का अभाव, परिवहन व्यवस्था की कमी, भण्डारण के लिए अपर्याप्त गोदाम, मानकीकरण एवं मंडी व्यवस्था का अभाव, बाजार सूचना का अभाव इत्यादि। इन कठिनाइयों के कारण न तो किसान को उचित मूल्य मिल पाता है और न ही उपभोक्ता को लाभ मिल पाता है। अतः इन्हें दूर करने के उद्देश्य से राज्य एवं केंद्र सरकार समय–समय पर योजनाएँ बनाती है, परन्तु सही मूल्य प्राप्ति हेतु किसान को ही आगे आना होगा। वे निम्नलिखित तरह के बाजार की व्यवस्था कर सही मूल्य प्राप्त कर सकते हैं:

- **डायरेक्ट मार्केटिंग**: जैसे, अपनी मंडी, पंजाब एवं हरियाणा, हरदासपुर सब्जी बाजार, पुणे
- **कृषक हित समूहः** महाग्रेप कृषक हित समूह
- **सहकारी मार्केटिंग**: जैसे, लिज्जत पापड़, कोम्फेड इत्यादि
- **ई मार्केटिंग**: ऑनलाइन बाजार
- **समूह बनाकर मार्केटिंग**: कृष उत्पादन समूह

वर्ष 2016 के अप्रैल महीने में भारत सरकार द्वारा राष्ट्रीय कृषि बाजार **(e-NAM)** का उद्घाटन किया गया, जिसका उद्देश्य कृषि उत्पादों के लिए एकीकृत राष्ट्रीय बाजार निर्माण करना था। राष्ट्रीय कृषि बाजार (ई.एन.ए.एम) एक अखिल भारतीय इलेक्ट्रॉनिक ट्रेडिंग पोर्टल है जो मौजूदा एपीएमसी मंडियों को आपस में जोड़ता है जिससे कृषि वस्तुओं के लिए एक एकीकृत राष्ट्रोय बाजार बन सके। यह पोर्टल एक ''आभासी'' बाजार है लेकिन यह वास्तविक बाजारों को जोड़ते हुए सभी एपीएमसी से संबंधित जानकारी और सेवाओं के लिए मंच का काम करता है। इन जानकारियों में कृषि उत्पाद के आगमन की मात्रा और मूल्य, खरीद बिक्री का ऑफर एवं ऑफर का जवाब देने का प्रावधान सहित अन्य सेवाएं शामिल हैं। मंडियों में जो उत्पादों का प्रवाह जारी रहता है परन्तु ऑनलाइन बाजार लेन देन की लागत और सूचना विषमता को कम करता हे। लघु कृषक कृषि व्यापार संघ (एसएफसी) भारत

सरकार के कृषि और किसान कल्याण मंत्रालय के अंतर्गत ई—नाम को लागू करने के लिए प्रमुख एजेंसी है।

राष्ट्रीय कृषि बाजार की आवश्यकता

राज्यों द्वारा उनके कृषि—संबंधी नियमों के तहत कृषि विपणन को प्रशासित किया जाता है। ये राज्य कई बाजार क्षेत्रों में विभाजित है जिन्हें कृषि उपज बाजार समिति (APMC) अपने नियमों के द्वारा संचालित करता है एवं विपणन संबंधित फीस लगाता है। बाजारों का यह विखंडन राज्य के भीतर भी कृषि वस्तुओं के एक बाजार क्षेत्र से दूसरे बाजार क्षेत्र जाने में बाधा डालता है तथा वस्तुओं के मल्टीपल हैंडलिंग और मंडी शुल्क के कई स्तर बढ़ जाते हैं जिससे किसानों को लाभ मिले बिना ही उपभोक्ताओं को ज्यादा कीमत चुकानी पड़ती है। ई—नाम एक समानांतर मार्केटिंग संरचना नहीं है बल्कि राष्ट्रीय स्तर पर मौजूदा मंडियों का एक नेटवर्क है जिसे ऑनलाइन देखा एवं उपयोग किया जा सकता है। इस ऑनलाइन व्यापार पोर्टल के माध्यम से राज्य के बाहर स्थित खरीदार भी स्थानीय स्तर पर व्यापार मंडियों में खरीद बिक्री कर सकते हैं। ई—नाम ऑनलाइन ट्रेडिंग प्लेटफॉर्म के माध्यम से राज्य और राष्ट्रीय स्तर पर एक एकीकृत बाजार उपलब्ध करता है जो एकरूपता को बढ़ावा देता है, प्रक्रियाओं को सुव्यवस्थित करता है, खरीदारों और विक्रेताओं के बीच सूचना विषमता को हटाता है और वास्तविक मांग और आपूर्ति पर आधारित सही कीमत की खोज को बढ़ावा देता है। साथ ही यह नीलामी प्रक्रिया में पारदर्शिता लाता है और किसान के लिए उसकी उपज और गुणवत्ता के मुताबिक एक राष्ट्रव्यापी बाजार उपलब्ध कराता है।

राष्ट्रीय कृषि बाजार का विज़न एवं मिशन

विज़न

एकीकृत बाजारों में प्रक्रियाओं को सुव्यवस्थित करके, खरीदारों और विक्रेताओं के बीच सूचना की विषमता को दूर करना एवं वास्तविक मांग और आपूर्ति के आधार पर उचित वास्तविक मूल्य की खोज को बढ़ावा देकर कृषि विपणन में एकरूपता को बढ़ाना।

मिशन

कृषि उत्पादों के अखिल भारतीय व्यापार की सुविधा के लिए एक आम ऑनलाइन मार्केट प्लेटफॉर्म के माध्यम से देश भर में एपीएमसी का एकीकरण, समय पर ऑनलाइन भुगतान के साथ उत्पादन की गुणवत्ता के आधार पर पारदर्शी नीलामी प्रक्रिया के माध्यम से बेहतर कीमत प्रदान करना है।

राष्ट्रीय कृषि बाजार (ई—नाम) का उद्देश्य

- ✓ विनियमित बाजारों के लिए एक राष्ट्रीय ई–बाजार मंच की स्थापना करना जो बिक्री, लेनदेन और सही मूल्य की खोज में पारदर्शिता लाये। तद्नुसार राज्य ई–ट्रेडिंग को बढ़ावा देने के लिए अपने अपने APMC अधिनियम में उपयुक्त प्रावधान लागू करें।
- ✓ राज्य अधिकारियों द्वारा व्यापारियों, खरीदारों और कमीशन एजेंटो को उदार लाइसेंसिंग देना जिसमें भौतिक उपस्थिति या बाजार परिसर में दुकान/ऑफिस जैसी शर्त न हो।
- ✓ व्यापारी के लिए राज्य के सभी बाजारों में मान्य एक लाइसेंस।
- ✓ हर बाजार में कृषि उत्पाद के गुणवत्ता परीक्षण के लिए प्रावधान हो ताकि खरीदारों द्वारा सही बोली लगायी जा सके। साथ ही कृषि वस्तुओं के लिए व्यापार योग्य सामान्य पैरामीटर विकसित करना।
- ✓ सिर्फ एक बार किसान स थोक खरीद पर मार्केट फीस की वसूली।
- ✓ चयनित मण्डी में मृदा परीक्षण प्रयोगशालाओं का प्रावधान जिससे आने वाले किसानों को इसकी सुविधा मंडी में ही उपलब्ध हो जाये। इसके लिए रणनीतिक साझेदार के रूप में नागार्जुन फर्टिलाइजर्स एंड केमिकल्स लिमिटेड को चुना गया ह।

कृषि विपणन में शामिल हितधारकों के लिए लाभ

किसान, व्यापारी, एपीएमसी, किसान उत्पाद संगठन एवं स्थानीय मंडियां ई–नाम के सप्लाई चेन में शामिल मुख्य हितधारक हैं। ये अपना पंजीकरण ई–नाम पोर्टल (http://www.enam.gov.in) मोबाइल एप्लिकेशन या मंडी पंजीकरण (गेट प्रवेश) के माध्यम से करवा सकते हैं। ई–नाम पर पंजीकरण के लिए कोई शुल्क नहीं है। लेकिन पंजीकरण के लिए अनिवार्य विवरण जैसे नाम, लिंग, पता, डीओबी, मोबाइल नंबर, बैंक विवरण आदि तथा दस्तावेज जैसे पासबुक(चेक लीफ), कोई सरकारी पहचान प्रमाण आदि की जरूरत पड़ती है। ई–नाम आरटीजीएस, एनइऍफटी और भीम यूपीआई (UPI) जैसे ऑनलाइन माध्यम का उपयोग करके पेमेंट की सुविधा प्रदान करता है, जिसमें संबंधित विक्रेताओं के बैंक खाते में तुरंत भुगतान किया जाता है। ई–नाम के साथ अपनी मंडियों को एकीकृत करने के इच्छुक राज्यों (राज्य कृषि विपणन बोर्ड) को अपने एपीएमसी अधिनियम में सुधारों को पूरा करना आवश्यक है। ये सुधार निम्नलिखित हैं:

- ✓ राज्य भर में वैध होने के लिए एकल व्यापार लाइसेंस (एकीकृत)
- ✓ राज्य भर में बाजार ' शुल्क का एकल बिंदु लेवी; तथा

✓ उचित मूल्य खोज के रूप में ई–नीलामी / ई–ट्रेडिंग के लिए प्रावधान।

एक विक्रेता/किसान के लिए ई–नाम से लाभ

– बेहतर मूल्य खोज के माध्यम से व्यापार में पारदर्शिता
–अधिक बाजारों और खरीदारों तक पहुंच
–मंडियों द्वारा कीमतों और आवके पर वास्तविक समय की जानकारी
–त्वरित भुगतान–एक स्वस्थ वित्तीय प्रोफाइल बनाने में सक्षम

खरीदारों/व्यापारियों के लिए ई–नाम के लाभ

–अन्य मंडियों तक विस्तारित पहुँच, इसलिए अधिक विक्रेताओं तक पहुंच
–बड़े और एकीकृत बाजारों तक पहुँच
–वस्तुओं के आगमन, गुणवत्ता आर वास्तविक समय मूल्य की जानकारी
–मोबाइल–ऐप के माध्यम से व्यवसाय करने में आसानी
–ऑनलाइन बैंकिंग और भुगतान तक पहुँच

एपीएमसी को ई–नाम से लाभ

–लेनदेन के सिस्टम एकीकरण रिकॉर्डिंग/स्वचालन के लिए मुफ्त सॉफ्टवेयर
–व्यापार की पूरी जानकारी
–वास्तविक समय में आगमन की रिकॉर्डिंग
–मूल्य के रूझान, आगमन और व्यापारिक गतिविधियों का विश्लेषण करें
–वित्तीय जानकारी का स्वचालित रिकॉर्ड
–श्रमशक्ति में कमी

राष्ट्रीय कृषि बाजार की प्रक्रिया

ई–नाम के अन्तर्गत होने वाले व्यापार में कई चरण शामिल होते हैं जिसमें विभिन्न प्रकार की मार्केटिंग गतिविधियाँ तय होती हैं। किसान बाजार में प्रवेश करते ही जरूरी कागजात के साथ ई–नाम प्लेटफार्म पर अपना पंजीकरण करवाता है। इसके बाद उसके उत्पाद का लॉट तैयार कर उसके नमूने की जांच की जाती है। इसके उपरांत क्वालिटी उत्पाद की बोली लगायी जाती है और उसकी खुली नीलामी की जाती है। नीलामी के बाद उत्पाद को तौल कर विक्रेता और खरीदार के बीच समझौता तैयार किया जाता है। विक्रेता को इन्टरनेट बैंकिंग के माध्यम

ई–नाम की प्रक्रिया प्रवाह

से NEFT/RTGS द्वारा ऑनलाइन भुगतान कर दिया जाता है।

ई–नाम की वर्तमान स्थिति

वर्तमान में 585 एपीएमसी बाजार ऐसे हैं जो 16 राज्यों और 2 केन्द्र ' शासित प्रदेशों में ई–नाम नेटवर्क से जुड़े हैं। इनमें से सबसे ज्यादा एपीएमसी बाजार

उत्तर प्रदेश (100), महाराष्ट्र (60) , मध्यप्रदेश (58) एवं हरियाणा (54) राज्यों से हैं।

सारणीः ई–नाम के अन्तर्गत पंजीकृत हितधारकों की संख्या (31 मई, 2019 तक)

क्र.सं.	विवरण	संख्या
1	राज्य व केन्द्र शासित प्रदेश	18
2	व्यापारी	1,23,431
3	कमीशन एजेंट (सीए)	68,841
4	सेवा प्रदाता	0
5	एफपीओ (किसान उत्पादक संगठन)	768
6	किसान	1,65,57,665
	कुल	1,67,50,705

स्त्रोतः https: //enam.gov.in/web/dashboard/stakeholder-data

वर्तमान में केन्द्र सरकार ने ई–नाम के संचालन का कार्य लघु कृषक कृषि व्यापार संघ (SFAC) को सौंपा है। ई–नाम प्लेटफार्म द्वारा कुल 150 कृषि संबंधित वस्तुओं की ब्रिक्री की जा रही है जिसमें 25 अनाजीय, 13 तेलहन, 29 फल, 40 सब्जियां, 14 मसाले एवं 29 राज्य उत्पाद शामिल हैं।

निष्कर्षः ई–नाम कृषि एवं किसान कल्याण मंत्रालय की एक महत्वपूर्ण योजना है जिसका मुख्य उद्देश्य किसानों को उनके उत्पाद का उचित मूल्य दिलवाना है तथा कृषि विपणन में बिचौलियों की भूमिका को नियंत्रित करना है। इस ऑनलाइन मार्केट द्वारा अच्छी गुणवत्ता की वस्तुएं पारदर्शी तरीके से बेची जा रही है जिसे कृषि विपणन में एक बड़ा सुधार माना जा रहा है। इस समय देश की 585 मंडियां ई–नाम के माध्यम से व्यापार कर रही है और यह संख्या दिन प्रतिदिन बढ़ रही है। निश्चय ही आने वाले समय में यह किसानों की आय बढ़ाने में कारगर साबित होगी।

ग्रामीण कृषि मौसम सेवा भारतीय कृषि सेवा का नया आयाम

रौशन कुमार, विषय वस्तु विशेषज्ञ (एग्रोमेट), रंजन कुमार सिंह, वरीय वैज्ञानिक सह प्रधान, विकास कुमार, पर्यवेक्षक कुमार (एग्रोमेट)
कृषि विज्ञान केन्द्र, नवादा (बिहार)

सरकार ने पायलट प्रोजेक्ट के अन्तर्गत ग्रामीण कृषि मौसम सेवा योजना की शुरुआत की है। इसके लिए भारतीय मौसम विभाग, ग्रामीण कृषि मौसम सेवा को कृषि विज्ञान केन्द्र के माध्यम से सप्ताह मे दो दिन मंगलवार एवं शुक्रवार को किसानों को फसल संबधित विशिष्ट परामर्श देगी। यह परामर्श प्रखंड स्तरीय मौसम के आधार पर किसान पोर्टल, एस0एम0एस0, वाट्सएप एवं ईमेल के जरिये किसानों तक पहुचांई जायेगी। जिससे मौसम में अचानक हुए परिर्वतन से होने वाले फसल के नुकसान की समभावना को काफी हद तक कम किया जा सके। किसानो के पास मौसम से सम्बधित पूर्वानुमान कि जानकारी को और सटीक बनाने के लिए जिला स्तरीय मौसम सेवा से प्रखण्ड स्तरीय मौसम सेवा को लाया गया है।

कृषकों के लिए कृषि मौसम सलाह बुलेटिनः

कृषि मौसम सलाह बुलेटिन प्रखंड, जिला तथा राज्य स्तर पर जारी किये जाते है। इसका मुख्य उद्येष्य मौसम की स्थिति के अनुसार विभिन्न कृषि प्रणालियो में अपनाए जाने वाले प्रबंधन के बारे में परामर्श देना है। मौसम के पूर्वानुमान के अनुसार सिचाई, उरर्वक, कटीनाशका के छिडकाव, फफूंदनाशको, फसलों की कटाई तथा कृषि संबंधी अन्य कायो जैसे पशुपालन, मुर्गी पालन इत्यादि कि सलाह दी जाती है।

कृषि मौसम सलाह बुलेटिन की संरचनाः

कृषि मौसम सलाह बुलेटिन प्रखंड, जिला, राज्य, और राष्ट्रीय स्तर पर जारी किए जाते हैं। जिला स्तर के बुलेटिन ए0एम0एफ0यू0 द्वारा जार किए जाते हैं। सेवा स्पेक्ट्रम के विभिन्न घटकों को स्थापित करने के लिए इस परियोजना को पाँच स्तरीय संरचना के माध्यम से कार्यान्वित किया गया है। इसमें मौसम संबंधी मौसम का अवलोकन और पूर्वानुमान, कृषि (मौसम के संवेदनशील तनाव की पहचान करना और मौसम के पूर्वानुमान का उपयोग कर उपयुक्त सलाह देना सूचना प्रसार (मीडिया, सूचना प्रौद्योगिकी, दूरसंचार एजेंसियाँ और विस्तार उपयोगकर्त्ता के साथ दो तरफ से संचार शामिल है।

ग्रामीण कृषि मौसम सेवा योजना का लक्ष्यः

- मौसम में अचानक परिवर्तन होने वाले फसल नुकसान की संभावना को काफी हद तक कम करना।

- फसल की अवस्था के आधार पर कृषि सलाहकार बुलेटिन तैयार करना, विभिन्न संचार माध्यमों के माध्यम से चयनित किसान/कृषक समुदायों को जानकारी देना तथा पूर्वानुमान का सत्यापन करना।

- किसान द्वारा घर बैठे ही मौसम की जानकारी प्राप्त करने की सुविधा प्रदान करना।

- प्रखंड स्तर पर मौसम के पाँच दिनों के पूर्वानुमान के आधार पर सप्ताह में दो दिन मंगलवार एवं शुक्रवार को कृषि सलाहकार बुलेटिन जारी करना।

- किसानों के आय में वृद्धि और कृषि लागत में कमी करना।

कृषकों के लिए कृषि मौसम सलाहकार बुलेटिन की प्रसार सेवाएँ:

कृषि मौसम सलाहकार बुलेटिन को नवादा के 14 प्रखंड में दैनिक मौसम के आँकड़े और मौसम की भविष्यवाणी जो अगले 5 दिनों के पूर्वानुमान पर आधारित होता है। उसे दैनिक समाचारपत्रों, किसान पोर्टल, वाट्सएप, एन0जी0ओ0, एस0एम0एस0, ई0टीवी0, जिला कृषि अधिकारी कार्यालय, ऑल इंडिया रेडियों, ई0मेल0 और किसान सुविधा एप के माध्यम से किसानों को भेजा जाता है।

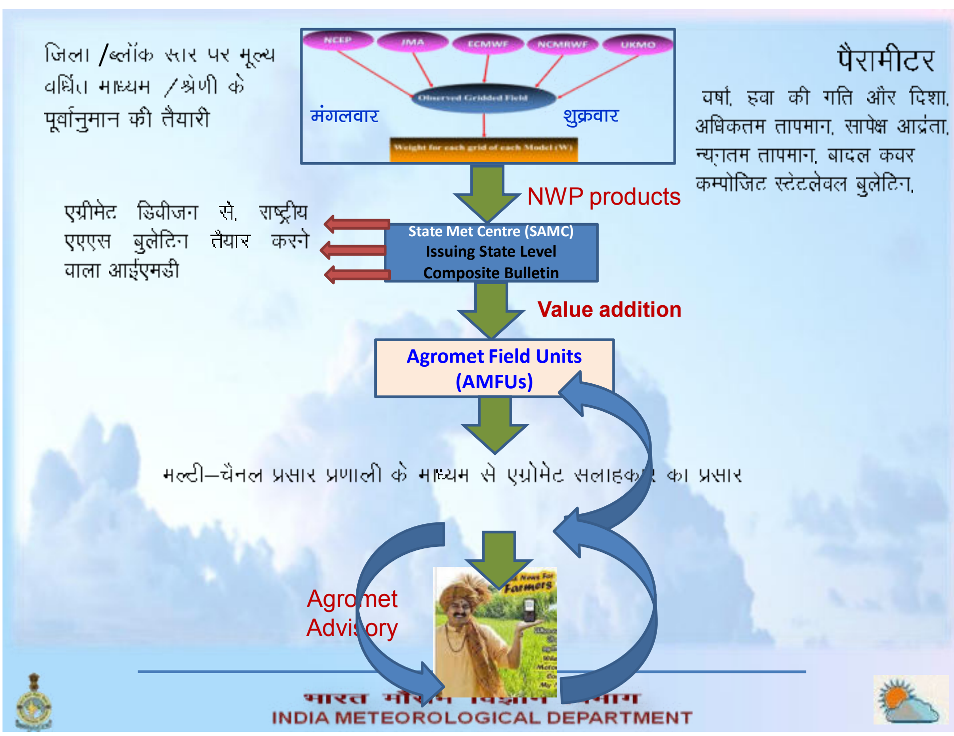

जिला /ब्लॉक स्तर पर मूल्य वर्धित माध्यम /श्रेणी के पूर्वानुमान की तैयारी
NCEP
JMA
ECMWF
NCMRWF
UKMO
Observed Gridded Field
मंगलवार
शुक्रवार
Weight for each grid of each Model (W)
पैरामीटर
वर्षा, हवा की गति और दिशा, अधिकतम तापमान, सापेक्ष आर्द्रता, न्यूनतम तापमान, बादल कवर कम्पोजिट स्टेटलेवल बुलेटिन,
NWP products
एग्रीमेट डिवीजन से, राष्ट्रीय एएएस बुलेटिन तैयार करने वाला आईएमडी
State Met Centre (SAMC)
Issuing State Level
Composite Bulletin
Value addition
Agromet Field Units
(AMFUs)
मल्टी–चैनल प्रसार प्रणाली के माध्यम से एग्रोमेट सलाहकार का प्रसार
Agromet
Advisory
INDIA METEOROLOGICAL DEPARTMENT

वर्षा आश्रित क्षेत्रों में तिल की खेती

दुष्यन्त कुमार राधव, इन्द्रजीत, धर्मजीत खेरवार, सन्नी कुमार, आशीष बालमुचू, शशि कान्त चौबे एवं ए.के. सिंह'
कृषि विज्ञान केन्द्र, रामगढ़, भा.कृ.अनु.प. का पूर्वी अनु. परिसर, पटना
'भा.कृ.अनु.प. का पूर्वी अनु. परिसर, शोध केन्द्र, राँची

तिल (*Sesamum indicum* L.) भारत की परम्परागत पैदा की जाने वाली तेलहन फसल है, जिसमें तेल की मात्रा 50%, प्रोटीन 25% एवं कार्बोहाइट्रेट 15% रहता है। इसको विभिन्न नामें से भी जाना जाता है जैसे, उतर भारत, असम, पश्चिम बंगाल, एवं महाराष्ट्र में तिल, तमिलनाडू में नुवुल्लू, एवं केरल, कर्नाटक आदि राज्यों में इल्लु नाम से जाना जाता है। इसका धार्मिक एवं रीती–रिवाजो में भी महत्वपूर्ण रूप से उपयोग होता है। इसके अलावा इसे बेकिंग उघोग, कैंडी एवं अन्य खाद्य पदार्थो में प्रयोग किया जाता है। इसके तेल में 40% औलिक एसिड एव 40% लिनोलिक एसिड की मात्रा रहती है। इसके तेल में एंटीआक्सीडेंट पाये जाने के कारण इसे दीर्धायु देने वाला तेल भी कहा जाता है। इसमें विटमिन E/A/B काम्पलेक्स एवं खनिज लवण जैसे कैल्शियम, फास्फोरस, लोहा, काँपर, मैगनीशयम, जिंक एवं पोटेशियम आदि, भरपुर मात्रा में पाये जाते है। इसमें मीथायोनिन, ट्रिप्योफेंन अमीनो एसिड इत्यादि पाये जाने के जिस कारण इसे तेलों की रानी की संज्ञा भी दी गयी है। इसका तेल ह्रदय के लिये काफी लाभदायक है। तिल की खेती को भारत में 17.06 लाख हेक्टेअर क्षेत्रफल एवं 6.8 लाख टन उत्पादन के साथ विश्व में प्रथम स्थान प्राप्त है। इसकी उपज 402 किलो/हेक्टेअर है, जो कि अन्य देशो की तुलना में काफी कम है। इसका मुख्य कारण वर्षा आश्रित क्षेत्रों में कम उर्वरक खेतो में खेती एवं सही तरीके से उत्पादन तकनीक नही अपनाना है। यघपि उपलब्ध उन्नतशील किस्मों का चुनाव एवं नवीनतम उत्पादन तकनीक को अपनाकर इसकी उपज बढाई जा सकती है। सही तकनीकी एवं प्रबंन्धन उपायो को अपनाकर सिचित क्षेत्रों में

1200–1500 कि.ग्रा./हेक्टेअर एवं असिचित क्षेत्रों में 800–1000 कि. ग्राम/हेक्टेअर तक उपज प्राप्त की जा सकती है।

मुख्यतः इसकी खेती राजस्थान, गुजरात, पश्चिम बंगाल, महाराष्ट्र, उतर प्रदेश, मध्य प्रदेश और आंध्रप्रदेश में होती है। राजस्थान में इसकी खेती सर्वाधिक 4.15लाख हेक्टेअर में होती है तथा उपज 294 कि.ग्रा./हेक्टेअर प्राप्त होती है लेकिन पश्चिम बंगाल में इसकी उपज सर्वाधिक 942 कि.ग्रा./हैक्टेअर मिलती है इसका मुख्य कारण सिचित वर्षा आधारित खेती है।

मौसम :–तिल की खेती के लिये उपयुक्त तापमान 25^0 से 35^0C 40^0C से अधिक होने पर इसमें तेल की मात्रा घट जाती है। अगर तापमान 45^0C से अधिक या 15^0C से कम होता है तो इसकी पैदावार काफी कम हो जाती है क्योंकि इस तापमान में इसमें बध्यता की समस्या उत्पन्न हो जाती है। इसकी फसल के दौरान खेतो में अधिक समय तक जल–जमाव की समस्या से फसल अत्यधिक प्रभावित होती है जिसका सीधा प्रभाव उपज वृद्धि एवं उत्पादन पर पडता है। मौसम में अचानक आने वाले बदलाव जैसे उच्चत्तम तापमान में अचानक वृद्धि एवं कमी, अत्यधिक वर्षा एवं सुखा आदि इसके उत्पादन को प्रभावित कर सकते है। अतः उपलब्ध किस्मों के चयन में सावधानी बरतने से काफी हद तक निजात पाया जा सकता है।

किस्म :– तिल की फसल प्रकाश एवं तापमान के प्रति अत्यधिक संवेदनशील होती है। मौसमी भिन्नता एवं दिन व रात के तापमान के प्रति अत्यधिक संवेदनशील होने के कारण इसकी किस्मों का चुनाव क्षेत्रीय/राज्यों की संस्तुती के आधार पर ही करना चाहिये। परन्तु किसान इसकी किस्मो का चुनाव किस्म की लोकप्रियता, बीज का आकार, एवं जैविक तथा अजैविक कारकों के प्रति प्रतिरोधकता एवं अधिक बाजार मूल्य के आधार पर ही किस्मों का चुनाव करता है जो कि एक महत्वपूर्ण पहलू भी है।

पूर्वी भारत के लिये संस्तुत प्रजाति एव विशेषतायें :–

प्रजाति	जारी करने वाला वर्ष	उपज (कि. ग्रा / हे.)	तेल की मात्रा (%)	पकने की अवधि (दिन)	विशेष लक्षण एवं विशेषताय
शेखर	2001	700-800	50-52	85-90	सफेद बीज, पाउडरी मिल्डयु के प्रति सहनशील, फाइटोफ्थोरा बीमारी के प्राति मध्यम सहनशील
PKDS-II (जवाहर तिल II)	2006	650-700	46-50	82-85	गहरा भुरा तिल
TKG21 (JT-21)	1993	650-700	52-54	85-90	सफेद बीज, आल्टरनेरिया एवं बैक्टीरीयल पत्ती धब्बा के प्रति सहनशील
TKG-22	1995	650-700	50-54	82-85	सफेद बीज, फाइटोफ्थोरा बीमारी के प्रति सहनशील
TKG-55 (IT-55)	1999	650-700	50-53	82-85	सफेद बीज, फाइटोफ्थोरा बीमारी के प्रति सहनशील

उमा (OMT-11-6-3)	1992	750-850	42-46	75-80	पीले सफेद बीज, मेक्रोफोमिना बीमारी के प्रति सहनशील
कृष्णा	1989	700-750	45-48	88-95	काले बीज, आल्टरनेरिया बीमारी के प्रति सहनशील
तिलोत्तमा (B-67)	1984	900-1000 (गर्मी की मौसम वाली फसल	42-44	80-85	काले भूरे रंग के बीज, मेक्रोफोमिन बीमारी के प्रति सहनशील

पूर्वी भारत में तिल के बीज की बीज स्थापना दर 1–2 % है जो कि गुजरात में सर्वाधिक 10% है। जिसका मुख्य कारण गुणवता युक्त बीज उत्पादन की कमी, प्रजनक बीज की अनुपलब्धता एवं समय पर बुवाई न होने एवं उचित प्रजाति का चयन का अभाव है। इसके बीज उत्पादन में अधिक सावधानी की आवश्यकता होती है क्योकि बीज का छोटा आकार, वजन एव फली का झड–झडकर बीज के गिरने से अन्य किस्मों के साथ आसानी से मिश्रित हो जाता है। इस फसल पर अधिक ध्यान नहीं दिया जाना भी इसके बीज उत्पादन की कमजोरी को उजागर करता है, लेकिन बीज ग्राम का निर्माण करके इसके बीज उत्पादन की गुणवता एवं उपलब्धता को बढाया जा सकता है।

बुवाई का समयः–

उगाने का समय	बुवाई का समय	कटाई का समय	खेती का आधार	क्षेत्र %	राज्य

खरीफ	जून–जुलाई	अक्टूबर–नवम्बर	वर्षा आश्रित	70 %	राजस्थान, उतर प्रदेश, मध्य प्रदेश, उडीसा, कर्नाटक, झारखण्ड
खरीफ (देरी से)	अगस्त–सितम्बर	दिस्मबर–जनवरी	वर्षा आश्रित	10 %	आन्ध्र प्रदेश, गुजरात, मध्य प्रदेश, एवं महाराष्ट्र झारखण्ड
रबी	अक्टूबर–नवम्बर	फरवरी–मार्च	सिंचित / वर्षा आश्रित		झारखण्ड

<u>मिट्टी :–</u> इसे सभी प्रकार की मिट्टी में सफलता पूर्वक उगाया जा सकता है लेकिन खेत में पानी की निकासी की सुविधा अवश्य होनी चाहिये, इसे मुख्यतः हल्की से मध्यम बनावट वाली बलुई–दोमट मिट्टी में सफलता पूर्वक उगाया जा सकता है। मिट्टी का P.H 5.5 से 8.0 तक होना चहिये।

<u>फसल चक्र :–</u> धान–आलू–तिल, तिल–आलू–मूंग, तिल–मक्का–तिल, तिल मक्का / अरहर / चना, तिल +अरहर+मक्का– आलू

<u>शस्य क्रियाये:–</u> खेत की दो जुताई मिट्टी को भुरभुरा बनाती है जो इसके अच्छे अंकुरण को बढाती है। खेत को उंचा नीचा न रखें अन्यथा जल निकासी समुचित नही हो पाएगी और फसल नष्ट होने का खतरा रहता है

बीजदर :–अच्छे एवं स्वस्थ बीज 5 कि.ग्रा./ हेक्टअर की दर से आवश्यक है। अच्छे उत्पादन के लिये पंक्ति में बुवाईं करे।

बुवाई विधि :– बीज के कम मात्रा के कारण इसके बोज को समान रूप से विखराव के लिये इसमें सुखी बालू–मिट्टी को 1:20 के अनुपात में मिलाकर बुवाई करने से समान रूप से बीज का बिखराव होता है। इसका बीज 2.5 सेमी की गहराई पर बोना चाहिये। पंक्ति से पंक्ति की दूरी 30 सेमी एवं पोधे से पौधे की दूरी 15 सेमी होनो चहिये।

बीज उपचार :– बीज जनित रोग से बचाव के लिये 3 ग्राम कार्बान्डजिम 50 W.P. नामक कवकनाशी या ट्राइकोडर्मा विरिडी 5 ग्राम/किलो बीज का प्रयोग करे। पत्ती पर बैक्टीरीयल धब्बा नामक बीमारी से बचाव के लिय एग्रोमिन – 100 नामक कवकनाशी के 0. 025% घोल में 30 मिनट तक डुबोकर रखे।

खाद एवं उर्वरक :–अधिक उत्पादन लेने के लिए 5 टन/हेक्टेअर सडी हुई गोबर की खाद को अखिरी जुताई से पहले खेत मे डाले और जुताई करे। रासायनिक उर्वरको के प्रयोग से पहले खेत की मिट्टी की जाँच करवा ले। सामान्यतः 40 कि0 ग्राम नाइट्रोजन, 40 कि0 गाम फास्फोरस एवं 20 कि0 ग्राम पोटाश का प्रयोग करे। नाइट्रोजन की आधी मात्रा एवं फास्फोरस व पोटाश की पूरी मात्रा बुवाई के समय प्रयोग करे एवं बची हुई नाइट्रोजन अंकुरण के 30–35 दिन बाद देने पर अच्छा उत्पादन होता है।

खरपतवार का नियंत्रण :– प्रारम्भ के 40 दिना तक खरपतवार से अधिक प्रतिस्पर्धा रहती है, जिसके कारण फसल से उत्पादन अनुरूप उपज नहीं मिला पाती है। इसलिए बुवाई के

उपरान्त पैन्डामैथिलीन 2.5 लीटर/हेक्टेअर की दर से 300–350 लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करे। 30 दिन की फसल होने पर हाथ से गुडाई भी अत्यधिक प्रभावी होती है।

सिंचाई :– वर्षा आश्रित क्षेत्रों में अगर हल्की सिंचाई आवश्यकतानुसार करते है तो उत्पादन बढ़ जात है। फूल आने एवं फली बनने की अवस्था में खेत में हल्की सिंचाई अवश्य करे।

फसल सुरक्षा :–

पत्ती लपेटक और फलीछेदक :– इसका आक्रमण फसल के 2–3 सप्ताह की अवस्था में ही प्रारम्भ हो जाता है। फसल की प्रारंम्भिक अवस्था में यह नई कोमल पत्तियों को खाता है और जाला सा बनाकर रहता है। फल आने की अवस्था में यह कली या फूल बनने पर फली के अन्दर प्रवेश कर जाता है। यह जुलाई से सितम्बर तक सक्रिय रहता है।

बचाव :–

1. खरीफ मे जल्दी बुवाई करने से इसके नुकसान से बचा जा सकता है।
2. प्रतिरोधी किस्मों जैसे – उषा, तापी, प्रगति, TMV-3, शेखर, तरून, गुजराती तिल 3, TKG-22, TKG-55,TKG-21 और JTS-8 चुनाव करें।

3 फिप्रोनिल या कॉटाप हाइड्रोक्लोराइड का 10 कि. ग्राम/हेक्टेयर की दर से व्यवहार।

4 NSKE 5ml/लीटर, थायोमिथाक्साम 25 WG 5 ग्राम/कि0 ग्रा0 बीज/इमिडाम्लोप्रिड 70 ws 75 ग्राम/कि. ग्राम की दर से बीज उपचार करें।

हाक माँथ (Achlrontia Styx W) :- इसके पिल्लु पत्ती को खा जाते है। यह फसल की किसी भी अवस्था में आक्रमण कर सकता है, अगस्त से अक्टुबर माह इसके लिये अनुकूल होते है।

नियंत्रण :–

1. गर्मी में गहरी जुताई करने से इसके प्यूपा नष्ट हो जाते है।
2. इसके पिल्लु को पकडकर नष्ट कर दें।
3. NSKE 5 ml लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़कार करें।
4. क्यूनालफास 25 EC 1.5 ml लीटर/क्लोरोपाइरीफास 2 मि. ली./लीटर की दर से घोल बनाकर 15 दिन के अन्तराल पर दो छिडकाव करें।
5. 30 दिन की फसल होने पर मेलाथियान 5% घुल 25 कि0 ग्रा0/हेक्टेयर की दर से प्रयोग करें। दूसरी बार 45 दिन की फसल होने पर उपरोक्त दवा को शाम के समय प्रयोग करें।

गाल मक्खी एवं फुलकी कली खाने वाले मक्खी (Asphondylia Sisami Folt & Desynura Isami G&P) :– इसके पिल्लु (मैगेट) फूल की कली के अन्दर गाठ जैसी आकृति विकसित कर लेते है। जिसके कारण फूल से फल नहीं बन पाता है और फल झड़ जाता है।

इसका प्रकोप कली से फूल बनते समय सितम्बर से नवम्बर के महीने मे होता है।

नियंत्रण :–

1. अवरोधी किस्म जैसे श्वेता तिल, RT-103, RT-127 क हिमा, OMT-26 का चुनाव करे।
2. निगरानी करते समय प्रकोप दिखाई देने पर फूल की कली को तोडकर जला दे या गड्ढा खोदकर दबा दें।

3. डाइमेथोयेट 1.5 मिली/लीटर, डेल्टामेथ्रिन 1 मि. ली./लीटर पानी क्यूनालफास 25 EC 1.5 मि. ली./लीटर DDVP (डाइम्लोरोबोस 76 EC) 1 मि. ली./लीटर की दर से 400–450 लीटर पानी में घोल बनाकर छिडकाव करें।

4. **<u>विहार रोयेदार सुडी (पिल्लु) (Spilsoma Obliqua)</u>** :– छोटी अवस्था में यह पत्तियों को तेजी से खा जाता है, यह कुछ ही पौधो पर केन्द्रित रहता है, पिल्लु बडा होने पर अन्य पौधो पर चला जाता है। इसके प्रकोप से पौधो पर केवल डंढल/तना ही अवशेष रहता है। इसका प्रकोप प्रारम्भ से पकने तक कभी भी हो सकता है, सामान्यतः अगस्त से अक्टुबर तक इसका प्रकोप होता है।

प्रमुख बीमारियाँ एवं नियंत्रण :–

फाइटोफ्थोरा झुलसा (Phytophtora Barasitica Slsami):- प्रारम्भ में पत्ती एवं तने पर पानी सोखे हुए जैसे धब्बे दिखाई देते है। ये धब्बे प्रारंभ में भुरे रंग के होते है जो कि बाद में काले रंग के हो जाते है। नमी की अधिकता होने पर यह रोग भयावह रूप ले लेता हैं जिससे पोधा मर जाता है। यह अंकुरण से लेकर फुल आने तक कभी भी उग्र रूप धारण कर सकता है।

<u>नियंत्रण</u> :–

1. गर्मी में जुताई करे, जल निकासी का प्रबन्ध अवश्य करें।
2. फसल चक्र अपनावे।
3. स्वस्थ एवं रोग रहित बीज का चुनाव करें। इसके लिये बाजार से विश्वसनीय स्रोत से ही बीज खरीदें।
4. तिल+मडुआ (3:1) अन्तशस्य विद्यि को अपनाने से रोग की तीव्रता को कम रखा जा सकता है।
5. रोग रोधी किस्म TKG-21, TKG-22, TKG-55, JT 5-8, AKT-64 को वरीयता दें।

6. बीज उपचार के लिये कार्बेन्डाजिम(0.1%) 3g/कि0 ग्रा0 बीज, रिडोमिल Mz (0.25%) ट्राइकोडर्मा हारजेनियम/विरिडी (0.5%) कॉपर आक्सीक्लोराइड (0.25%) का प्रयोग करें।

सर्कोस्पोरा पत्ती धब्बा (Clreaspora Slsami) :– यह पत्तियों पर 3 मिमी घास के भूरे धब्बे, जो कि किनारे से गहरे भूरे एवं मध्य में हल्क धुसर रंग का दिखाई देता है। तीव्रता होने पर पत्ती झड जाती है। उपयुक्त अवस्था होने पर रोग पत्तियों में डंठल तथा कैप्सुल पर भी दिखाई देता है। यह पौधो की 4–6 पत्तियों होने से लेकर फसल पकने तक पाया जाता है।

नियंत्रण :–

1. अगेती बुवाई करे (मानसून की पहली वर्षा होने पर)
2. अंन्तराशस्य फसल जैसे (तिल+मडुआ) उगाये।
3. बीज उपचार काबेन्डाजिम (0.1%) 3g किलो ग्राम बीज की दर से करे।
4. रोगरोधी प्रजाति TKG-21 को वरीयता दे।
5. रोग के लक्ष्ण दिखाई देने पर मैन्कोजैव M-45 (0.25%) + कार्बेन्डाजिम (0.1%) और टोपसिन (0.1%) का 15 दिन के अन्तराल पर बदल–बदल कर छिड़काव करें।

पाउडरी मिल्डयु (Oidium Sp., Sphalrothiea Sp. Levillula sp) :– छोटे–छोटे रूइ के आकार के धब्बे पत्तियों पर दिखाई देता हैं जो कि सारी पत्तियों पर फैल जाते हैं तथा उग्र अवस्था में पत्ते गिर जाते है। यह 45 दिन की फसल से पकने की अवस्था तक पाया जाता है।

नियंत्रण :–

1. पहली वर्षा होने पर अगेती बुवाई करे, तिल+मडुवा (3:1) खेती करें।
2. रोगरोधी प्रजाति जैसे श्वेता, RT-127, MT-75 का चुनाव करें।
3. धुलनशील सल्फर के 0.2% घोल बनाकर 2–3 छिड़काव करें या कैराथेन 0.1%, प्रोपिकोनाजोल 0.1% का छिडकाव करें।

<u>**जड एवं तना गलन (Macro phonia Phasolina)**</u> :– यह बीमारी जड एवं तने पर दिखाई देती है, ग्रसित पौधे मुरझा जाते है। जमीन के आधार पर तना काला होकर उपर की ओर बढता है। तने के उपर काले धब्बे दिखाई देने लगते है और इसके उखाडने पर चारकोल के समान स्कलेरिशयम दिखाई देते है। जड़ सरलता से भंगुर होकर बिखर कर टुट जाती है। यह अंकुरण से लेकर फसल पकने तक हो सकता है।

नियंत्रण :–

1. फसल चक्र अपनावे, गर्मी में गहरी जुताई करे, स्वस्थ रोग रहित बीज का चुनाव करे, तिल+मोठ (1:3 / 2:1) की अन्तराल खेती करें।
2. रोगरोधी प्रगति TKG-55, MT-75, RT-46, RT-54, RT-103, निर्मला, JTS-8 का चुनाव करें।
3. बीज उपचार करे, रोग के लक्षण दिखाई देने पर ग्रसित पौधों का उखाड़ कर नष्ट कर दे और ब्लुकापर+कार्बेन्डाजिम (1:1) का (1+1%) घोल बनाकर सात दिनो के अन्तराल पर छिडकाव करें।

बैक्टीरीयल झुलसा (Xathomones Compestris bv Slsami) :– पानी सोखे हुये, छोटे, अनियत्रित धब्बे पत्तियों के उपर दिखाई देते है जो बाद में बडे, भूरे रंग के दिखाई देते है। अनुकुल परिस्थिति में रोग की उग्रता के कारण पतियाँ झड़ जाती है और पौधों में केवल डंठल दिखाई देते हैं जिससे उपज काफी कम हो जाती है। यह पौधे की चार पत्तियों की अवस्था से लेकर फसल पकने तक कभी भी हो सकता है।

नियंत्रण :–

1. बीज की बुवाई से पहले गर्म पानी में $52^{0}c$ पर 10 मिनट तक डुबो कर रखे।
2. रोग के लक्षण होने पर स्ट्रेप्टोसाइक्लीन (500 ppm) + कॉपर आक्सीक्लोराइड 0. 25% का घोल बनाकर फसल पर छिड़काव करें। इसे 15 दिन के अन्तराल पर दोहराते रहें।

फाइलोडी (Phytoplasma) :– पुरा पौधा छोटा गुच्छे के जैसा असमान्य आकार में परिवर्तित हो जाता है। इसकी शाखाये बेतरतीब तरीके से नीचे झुक जाती हैं। इसमें फूल नहीं बन पाता, अगर कैपसुल बन जाता है तो उसमें बीज नहीं बनते है। इसमे बढवार की अवस्था से लकर फुल बनने कभी भी रोग के लक्षण प्रकट हो सकते है।

नियत्रण :–

1. रोग ग्रसित पौधे को उखाड कर नष्ट कर दें।
2. जिस खेत में यह समस्या आती है वहा वर्षा प्ररम्भ होने के तीन सप्ताह बाद बुवाई करें।
3. तिल+अरहर (1:1) की अन्तर शस्य खती करें।
4. रोग रोधी किस्म जैसे JT-21, श्वेता, रामा, शेखर का चुनाव करें।
5. खेत में 10 किलो रीजेन्ट प्रति हेक्टेअर की दर से प्रयोग करें
6. बुवाइ के 30, 40, 60 दिनो के अन्तराल पर डाइमेथोएट (0.3%) का घोल बनाकर छिडकाव करें।

कटाई :– पत्तीयों के पीली पड़कर झडन पर तथा केप्सुल का रंग नीबु के रंग जैसा होने पर कटाई करें। ऐसी अवस्था में देरी करने पर फली से तिल झड़कर गिरने लगते है।

मक्के की खेती कृषि क्षेत्र के किसानों के लिए वरदान

रविकान्त चौबे[1], सर्वेश कुमार[2],सुमित कुमार सिंह[3] अंजनी कुमार[4]
(1) वस्तु विषय विशेषज्ञ (शस्य), कृषि विज्ञान केन्द्र, नवादा(2,3) वरीय शोधकर्ता, (4) निदेशक, आई. सी. ए. आर. अटारी, जोन–IV, पटना (बिहार)

भारत में धान एवं गेहूँ के बाद मक्का सबसे महत्वपूर्ण फसल है। इसका क्षेत्रफल 2010–2011 में लगभग 83 लाख हेक्टेयर तथा जिसमें 201 लाख टन पैदावार प्राप्त हुई थी और औसत उत्पादकता 24.35 क्विंटल प्रति हेक्टेयर दर्ज की गई थी। वर्श 2016–17 में बिहार राज्य में इसका क्षेत्रफल 7.21 लाख हेक्टेयर तथा उत्पादन 38.45 लाख टन और औसत उत्पादकता 53.35 क्विंटल प्रति हेक्टेयर दर्ज हुई (Source Director of Economic and Statistics Govt. of Bihar)। मक्के की उत्पादकता में अभूतपूर्व वृद्धि का श्रेय मुख्यरूप से सिंगल क्रॉस हाइब्रिड मक्का को जाता है, जो मक्का के कुल क्षेत्रफल का 25 प्रतिशत है।

सिंगल क्रॉस हाइब्रिड एकरूपता तथा उच्च उत्पादकता के कारण किसानों के बीच काफी लोकप्रिय है। इसके लिए सिर्फ दो जनकों की आवश्यकता होती है। विगत वर्षो में कई उन्नत संकर मक्का विकसित हुए हैं जो जैविक (रोग आदि) तथा अजैविक (बाढ, सूखा आदि) परिस्थितियों के प्रति सहिष्णु हैं। संकर बीज उत्पादन तकनीक का ज्ञान हासिल कर ग्रामीण व्यक्तियों और कृषि स्नातकों को रोजगार के अवसर प्रदान हो सकते हैं और उनकी आर्थिक सिथिति सुदृढ हो सकती है। सिंगल क्रॉस हाईब्रिड मक्का के बीज उत्पादन के लिए एक नर और एक मादा इन्ब्रेड लाईन (जन्मजात लाईन) की जरूरत होती है और सिर्फ एक ऋतु में बीज तैयार हो जाता है। बिहार में गहूँ के क्षेत्र धीरे–धीरे मक्के की खेती की ओर बढते चले जा रहे हैं। जिसका मुख्य कारण हाइब्रिड मक्के से अच्छी उपज प्राप्त करना एवं मक्के की बाजार में अच्छी मॉग होना है। भारतीय बाजार में मक्के से विभिन्न उत्पाद बनने से भी मक्के की अच्छी मॉग है। मक्का, बिहार राज्य में खगड़िया से शुरू हुई और आज पूरे कोशी क्षेत्र की सबसे लोकप्रिय फसल होती चली जा रही है। इससे किसान भाईयों को अच्छा लाभ प्राप्त होता है। अतः कोशी क्षेत्र में मक्के की खेती किसान भाइयों के लिए वरदान ही साबित हो रही है। फसल की खेती में समय और पभेद का चयन करना एक महत्वपूर्ण बिन्दु है। बिहार राज्य में खासकर का क्षेत्र एवं गंगा के मैदानी भाग के लिए उपयुक्त सिंगल क्रॉस हाइब्रिड 'संकर मक्का एक' राजेन्द्र मक्का दो, मालवीय हाइब्रिड मक्का दो, विवेक एवं प्रका" ा है।

खाद एवं उर्वरकों का प्रयोग और खरपतवार नियंत्रणः–

मक्के की खेत में बुआई के 15 दिन पूर्व 15 टन गोबर खाद डालना चाहिए। प्रति हेक्टेयर 180 किलोग्राम नाइट्रोजन 80 किलोग्राम पोटाश तथा 25 किलोग्राम जिंक सल्फेट की आव" यकता होती है। फॉसफोरस, पोटाश और जिंक की खुराक तथा 10 प्रति" ात नाइट्रोजन

बुआई क समय दे देना चाहिए। नाइट्रोजन की पूरी खुराक चार भागों में 10 प्रतिशत बुआई के समय, 20 प्रतिशत चार पत्ती होने पर, 30 प्रतिशत 8 पत्ती होने पर तथा " ोश 40 प्रति" ात पुश्पन के समय देनी चाहिए। ध्यान देने योग्य बात यह है कि पर–परागण के समय खेत में उपयुक्त नमो बना कर रखी जाए। लगभग 55 से 60 दिनों की अवस्था तक खरपतवार का पूर्ण नियंत्रण रखना आव" यक है। खरपतवार के नियंत्रण के लिए रसायनिक खरपतवारना" ी अट्राजीन (चौड़ी पत्ती एवं प्रमुख घासों को भी नियंत्रित करता है) का प्रयोग किया जा सकता है। बुआई के दो दिना के अंदर 1–1.5 किलोग्राम अट्राजीन 600 लीटर पानी प्रति हेक्टेयर की दर से घोल कर छिड़काव करने से खर–पतवार नियंत्रण किए जा सकते हैं। समय–समय पर निराई, गुड़ाई करनी चाहिए। मिट्टी चढ़ाने से एक दिन पहले नाइट्रोजन की तीसरी खुराक डाल कर निराई गुड़ाई करनी चाहिए।

मक्का जिसका वनस्पतिक नाम ***Zea mays*** (L) है, एक प्रमुख, खाद्य फसल है, जिसे भुट्टे के रूप में भी खाया जाता है। मानव सभ्यता में मक्का पहली महत्वपूर्ण फसल थी जो वर्णसंकर से प्रभावित हुई, यह विविद्य मौसम एवं पर्यावरण में दुनिया के सर्वाधिक भागों में पैदा की जाने वाला फसल है। यह सर्वाधिक पैदावार एवं उत्पादन क्षमता वाला खाद्यान्न है। इसकी खेती लगभग 166 दे" ाों के 165 मिलियन हेक्टेयर क्षेत्रफल में होती है। इसकी उत्पादकता 5. 1 टन प्रति हेक्टेयर है। भारत के अधिका" ा मैदानी भागों से लेकर 2700 मीटर ऊँचाई वाले पहाड़ी क्षेत्रो तक मक्का सफलतापूर्वक उगाया जाता है। इसे सभी प्रकार की मिट्टियों में उगाया जा सकता है तथा बलुई, दोमट मिट्टी मक्का के खेती के लिए बेहतर होती है। मक्का एक ऐसा खाद्यान्न है जो मोटे अनाज की श्रेणी में आता है परन्तु इसकी पैदावार पिछले द" ाक में भारत में एक महत्वपूर्ण फसल के रूप में मोड. ले चुकी है क्योंकि यह फसल सभी मोटे व प्रमुख खाद्यान्नों की बढ़ोतरी दर में सबसे अग्रणी है। आज जब गेहूँ और धान में उपज बढ़ाना कठिन होता जा रहा है। मक्का पैदावार के नये मानक प्रस्तुत कर रही है। यह फसल भारत की भूमि पर 1600 ई0 के अन्त में ही पैदा होना " ाुरू हो गई थी और आज भारत के प्रमुख उत्पादक दे" ाों में " ाामिल है। जितन प्रकार की मक्का भारत में उत्पन्न की जाती है, " ाायद ही किसी अन्य पेश में उतने प्रकार की मक्का उत्पादित की जा रही है। परन्तु भारत मक्का के उपयोग में काफी पिछड़ा हुआ है जबकि अमेरिका में यह एक पूर्णतया औद्योगिक फसल के रूप में उत्पादित की जाती है और इससे विविद्य औद्योगिक पदार्थ बनाये जाते हैं। भारत में मक्का का महत्व केवल एक खाद्यान्न फसल के रूप में है जबकि संयुक्त राज्य अमेरिका में इसका का अधिकतम उपयोग स्टार्च बनाने क लिए किया जाता है।

भारत में मक्के की खेती जिन राज्यों में व्यापक रूप से की जाती है उसमें आन्ध्रप्रदे" ा, बिहार, कर्नाटक, राजस्थान तथा उत्तरप्रदे" ा इत्यादि प्रमुख हैं। राजस्थान में मक्का का सर्वाधिक क्षेत्रफल है व आन्ध्रप्रदे" ा में सर्वाधिक उत्पादन होता है। परन्तु मक्का का महत्व बिहार में बहुत अधिक है। भारत के खाद्यान्नों में मक्का का उत्पादन दर बहुत अधिक है। इसकी खेती 5 प्रति" ात क्षेत्रफल में होती है और यह वि" व भर में पैदा किये जाने वाले

मक्का का 2..4 प्रति" ात है तथा भारतीय कृशि के सकल घरेलू उत्पाद में इसकी 155 मिलियन रूपये की हिस्सेदारी है।

नवीनतम रिपोर्ट (2010–11) के अनुसार, भारत में मक्का उत्पादन का क्षेत्रफल, मक्का का उत्पादन और उत्पादन दर कम" ाः 8.55 मिलियन हेक्टेयर, 21.74 मिट्रीक टन और 2.54 टन/हेक्टेयर है। मक्का का उत्पादन 1950–51 में मात्र 1.73 मिट्रीक टन से 13 गुना बड़ कर 2010–11 में 21.74 मिट्रीक टन हो गया। व्यापारिक अनुमानों के अनुसार 2050 तक मक्का की मॉग 42 मिट्रीक टन तक हो जायेगी। मक्का का स्थान चावल तथा गेहूँ के बाद तीसरा है। यद्यपि मक्का की खेती के क्षेत्रफल एवं उत्पादन में भारत का चौथा स्थान है परन्तु इसका उत्पादन वि" व के औसत उत्पादन से बहुत कम है। खाद्यान्न, चारा और औद्योगिक प्रयोग के रूप में बढती हुई मॉग को देखते हुये मक्का अगले कुछ द" ाको में क्षेत्रफल एवं उत्पादन के दृश्टि से महत्वपूर्ण अनाज होगा। हरित कांति के जनक प्रसिद्ध नोवेल पुरस्कार विजेता डॉ. नॉर्मन ई0 बोरलॉग ने इसका भविश्य की फसल के रूप में उल्लेख किया है। यह भविश्यवाणी की गई है कि 2025 तक वि" व में मक्का गेहूँ और चावल से अधिक हो जाएगा। (सकल खाद्यान्न उत्पादन में मक्का की भागीदारी 22 प्रति" ात है। पिछले पॉच वर्शो में मक्का के क्षेत्रफल में 2.2 प्रति" ात तथा उत्पादन में 2.1 प्रति" ात की वृद्धि देखी गयी है जो कि अन्य फसलों की तुलना में बहुत ज्यादा है। परन्तु अब इसका भी सीन भोजन की थाली में बढ़ रहा है।

मक्का की कुछ वि" ोशताएं निम्नलिखित हैः–

- मक्का का उत्पादन कृशि के लिए विविध पर्यावरणीय स्थितियों में किया जा सकता है।
- मक्का में विटामिन ए., सी. और ई. तथा आव" यक खनीज प्रचुर मात्रा में होते हैं। इसमें 9 प्रति" ात होता है।
- इस अनाज का मनुश्य के लिए वि" वभर में 116 मिलिय टन से अधिक उपभोग है।
- इस अनाज को आ" चर्यजनक रूप अधिक टिकाउ होता है।
- इसका प्रयोग 3500 से अधिक अनाज उत्पादों के लिए किया जाता है।

<u>उपयोगिताः</u>

अब तक भारत में मक्का का भोजन के रूप में उपयोग, गेहूँ एवं चावल के मुकाबले बहुत कम होता था तथा मुख्यतः आदिवासी एवं गरीब तबकों तक ही सीमित था, जाने पर भोजन की थाली में इसका सीन बढ़ रहा है। उच्च प्रोटीन गुणवत्ता वाली किस्मों

(" ाक्तिमान–1, " ाक्तिमान–2, " ाक्तिमान–3, " ाक्तिमान–4, आदि) में अब तक प्रचलित किस्मों के मुकाबले प्रोटीन तथा आवश्यक अमीनो एसिड, ट्रिपओफॉन एवं लाइसिन काफी अधिक मात्रा में पाया जाता है। इसके अतिरक्त राजेन्द्र भांकर मक्का–1 तथा 2, DMH-117, लक्ष्मी तथा देवकी आदि अच्छा उत्पादन देने वाली किस्में अररिया के किसानो के द्वारा लगाई जाती है। अपने वि" ाश्ट गुणों के कारण इससे बने उत्पादों को ि" ा" ा आहार, गर्भवती महिलाओं,दूध पिलाने वाली माताओं एवं स्कूली बच्चों के लिए पौश्टिक आहार के रूप में प्रयोग किया जाता है। क्वालिटी प्रोटीन मक्का की अहमियत खाद्य एवं पोशण सुरक्षा के लिए भी है। क्योंकि इसमें सम्पूर्ण रूप से संतुलित अमीनो अम्ल पाये जाते है। इसके उत्पादन का ग्रामीण उद्यम" ीलता के विकास में भी महत्वपूर्ण योगदान हैं।

खाद्यान्न फसलों में मक्का का तोसरा स्थान हैं। एवं भारतीय कृशि अर्थव्यवस्था में भी मक्का का एक महत्वपूर्ण स्थान है। भारत में मक्का की खेती लगभग 67 लाख हेक्टेयर में होती है मक्का उत्पादन में बिहार राज्य का प्रमुख स्थान है। मक्के की खेती राज्य में करीब 6. 89 लाख हेक्टेयर में की जाती है, कुल उत्पादन राज्य में करीब 28.34 लाख टन तथा उत्पादकता 41.13 क्विन्टल प्रति हेक्टेयर है। रबी मक्के की खेती बिहार में खरीफ मक्के की तुलना में ज्यादा रकवे में की जाती है इस मौसम में जीवन चक्र 140–160 दिनों तक का हो जाता है। अतः इस समय सिंचाई की सुविधा नि" चत करनी होती है करीब 35 प्रति" ात मात्रा का मवे" ाी, मुर्गी, सुअर, मछली आदि के दाने के रूप में उपयोग किया जाता है, 11 प्रति" ात मक्के का औद्योगिक उपयोग होता है 3 प्रति" ात इसकी औसत उपज का 60–65 प्रतिशत तक मक्का के रूप में उपयोग होता है, मात्रा का दलिया, सत्तू, कार्नफ्लक्स आदि के रूप में उपयोग किया जाता है तथा एक प्रति" ात मात्रा का बीज आदि के रूप में उपयोग किया जाता है। इससे स्वास्थ्य के लिए उत्तम खाद्य तेल भी प्राप्त किया जाता है।

मक्का से विविध व्यंजन की बनाये जा सकते हैं जैसे मक्का की करी बनाने की विधि नीचे दी गयी है।

आवश्यक सामग्रीः

स्वीट कॉर्न – 200 ग्राम

टमाटर – 2–3

हरी मिर्च – 2

अदरक – 1 इंच लम्बा टुकडा

काजू – 8–10

खसखस – 1 टेबल स्पून

मूंगफली के दाने – 50 ग्राम (2 टेबल स्पून)

घी या तेल – 11/2 टबिल स्पून

जीरा – 1/2 छोटी चम्मच

नमक – स्वादानुसार (आधा चम्मच से थोड़ा अधिक)

लाल मिर्च पाउडर – 1–2 पिंच

गरम मसाला – 1/4 छोटी चम्मच

हरा धनियां – 1 टेबल स्पून (बरीक कटा हुआ)

विधिः स्वीट कार्न को पानी में घोल कर रख लीजिये। टमाटर हरी मिर्च एवं अदरक को मिक्सी से बारीक पीस लीजिये। कढाई में 2 छोटी चम्मच तेल डाल कर गरम करें, मूंगफली के दाने, खसखस के दाने एवं काजू डाल कर हल्का ब्राउन होने तक भून लें। इन भूने हुए मसालों को टमाटर के पेस्ट में डालकर पीस दें। कुकर में बचा हुआ तेल डाल कर गरम करें, गरम तेल में, जीरा, हल्दी पाउडर, धनिया पाउडर डाल दें। मसाले को 1–2 बार चम्मच से चलांयें, अब इस मसाले में, टमाटर, काजू का पेस्ट डाल कर तक तक भुने, जब तक कि मसाले में दाने न बन जाय और मसाले से तेल अलग न होने लगे। भुने हुए मसाले में स्वीट कार्न, नमक और लाल मिर्च डाल कर 2 मिनट तक चमचे से चलाकर भूनिये, एव छोटा गिलास पानी डाल कर कुकर बन्द कर दिजिये। कुकर का प्रे" ार खत्म होने के बाद कुकर खोलिये और सब्जी में गरम मसाला डाल दिजिये। स्वीट कार्न की सब्जी तैयार है। सब्जी को बाउल में निकाल लीजिये और हरे धनिया से सजाइये। गरमा गरमा स्वीट कार्न की सब्जी चपाती, नान परांठे या चावल किसी के भी साथ परोसिये और खाईये।

स्वीट कॉर्न या मकई भरा पराठा

सामग्री

- गेहूँ का आटा– 2 कप
- मकई के दाने उबले हुए– एक कप
- प्याज– एक बारिक कटा
- हरी मिर्च– 2 बारिक कटी हुई
- स्वादानुसार नमक
- हींग– एक चुटकी
- जीरा –1/2 चम्मच

- चाट मसाला –1/2 चम्मच
- गरम मसाला– 1/2 चम्मच
- तेल– 1/2 कप

विधिः

- उबले हुए मक्का के दानों को मिक्सी में बारिक करके पीस ले।
- कड़ाही में एक चम्मच तेल गर्म करें, हींग और जीरा डालें। पकने के बाद ।
- बारीक कटा प्याज डाले, दो मिनट भूनने के बाद हरी मिर्च और पिसा हुआ मक्का का पेस्ट डाल कर सूखा होने तक भूनें।
- फिर चाट मसाला, गरम मसाला, नमक भी मिला दे।
- आंच से उतार कर ठंडा होने दे।
- आटे में नमक और 2 चम्मच तेल मिलाकर गूंथ लें। आधा घंटे के लिए गीले कपडे से ढक कर रख दे।
- इसकी लोइया बनाकर मकई को भरकर गोल रोटी के आकर का बेलें।
- तवे को गरम करके दोनों तरफ तेल लगाकर गुलाबो होने तक सेंके।
- इसे दही एवं अचार के साथ गरमा–गरम परोसें।

वर्श 2010 से 2017 में रबी मक्का का आच्छादित क्षेत्र (हे0 में)

वर्ष	फसल–मक्का आच्छादित क्षेत्र	फसल गेहूँ
2010–11	6550	61100
2011–12	7453	55152
2012–13	22689	55159
2013–14	22483	55155
2014–15	22502	55150
2015–16	22515	55143
2016–17	22523	55141

मक्का के साथ आलू, मक्का के साथ मूली, तथा मक्का के साथ मटर की बुआई कर अधिक उपज प्राप्त की जा सकती है। मक्का की पैदावार एवं गुणवत्ता में कमी के कई कारण हो सकते हैं, जैसे समय से बुबाई न होना इसके अलावा फसल पर बीमारियों द्वारा भी इसकी पैदावार में भारी कमी हो जाती है। एक भोध के अनुसार प्रतिवर्श वि" व के उत्पादन का लगभग 13 प्रति" ात नुकसान भारत में 9 प्रति" ात बीमारियों द्वारा ही हो जाता है। मक्के की खेती को" ी क्षेत्र के लिए वरदान है क्योंकि इससे प्रति हेक्टर कम से कम 70 से 75 हजार रूपये का मुनाफा दर्ज किया गया है। इस क्षेत्र में मक्के की बढ़ती मांग को देखते हुए कृशि विभाग के द्वारा समय समय पर प्रि" ाक्षण, प्रत्यक्षण एवं तकनीकी सलाह किसान के खेत तक पहुँचाई जा रही है। अतः यह कहा जा सकता हे इस बदलते परिवे" ा में गेहँ की तुलना में मक्का की खेती अधिक लाभकारी होने के कारण को" ी क्षेत्र में अधिकां" ा किसान इसे अपना रहे हैं।

कृषि उत्पादों के माध्यम से एनीमिया का निवारण

अनिर्बाण मुखर्जी, कुमारी शुभा, तन्मय कुमार कोले, एवं उज्ज्वल कुमार
भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद का पूर्वी अनुसंधान परिसर, पटना

एनीमिया एक प्रमुख स्वास्थ्य समस्या और दुनिया भर में सबसे आम पोषण संबंधी विकारों में से एक है जो मानव स्वास्थ्य, आर्थिक तथा समाजिक विकास में एक बड़ी बाधा के रूप मे उभर के आया है। भारत दुनिया में एनीमिया के उच्चतम स्तर वाले देशों में से एक है एवं दुनिया में सबसे बड़ी संख्या में एनेमिक व्यक्ति भारत में ही रहते हैं। यह अनुमान है कि भारत में लगभग 20–40 प्रतिशत गर्भवती महिलाओं की मृत्यु एनीमिया के कारण होती है तथा एनीमिया के कारण विश्व की लगभग 50 प्रतिशत गर्भवती महिलाओं की मृत्यु भारत में होती है। भारत में 5 वर्ष से कम आयु के 58.4 प्रतिशत बच्चे और लगभग 53 प्रतिशत महिलाएँ (15–49 वर्ष की आयु) एनीमिया से पीड़ित हैं। बिहार में यह स्थिति और अधिक भयावह है, 5 साल से कम के 63.5 प्रतिशत बच्चे तथा लगभग 60.3 प्रतिशत महिलाएं (15–49 वर्ष की आयु) इस बीमारी से पीड़ित हैं।
विश्व स्वास्थ्य संगठन (डब्ल्यू.एच.ओ.) के अनुसार, एनीमिया को ''एक ऐसी स्थिति के रूप में परिभाषित किया गया है जिसमें लाल रक्त कोशिकाओं (आर.बी.सी.) या उनकी ऑक्सीजन–वहन क्षमता की संख्या शरीर की शारीरिक मांगों को पूरा करने के लिए अपर्याप्त होती है। जो सेक्स, उम्र, ऊंचाई, धूम्रपान और गर्भावस्था की स्थिति से भिन्न होती है''।

एनीमिया एक ऐसी स्थिति है जो तब विकसित होती है जब किसी के रक्त में पर्याप्त स्वस्थ लाल रक्त कोशिकाओं या हीमोग्लोबिन की कमी होती है। हीमोग्लोबिन लाला रक्त कोशिकाओं का एक मुख्य अंश है जो ऑक्सीजन को बांधता है। यदि किसी के रक्त में बहुत कम या असामान्य लााल रक्त कोशिकाएं हैं, या किसी का हीमोग्लोबिन असामान्य या कम है, तो उन के शरीर की कोशिकाओं को पर्याप्त ऑक्सीजन नहीं मिलेगी। इसलिए एनीमिया के लक्षण–जैसे थकान, दुर्बलता या पीली त्वचा, अनियमित दिल की धड़कन, सांस लेने मे परेशानी चक्कर आना, छाती में दर्द, हाथ और पैर ठंडे हो जाना आदि महसूस होगा।

एनीमिया के कुछ रूप वंशानुगत होते हैं और शिशु जन्म के समय से प्रभावित हो सकते हैं। मासिक धर्म से रक्त की कमी और गर्भावस्था के दौरान रक्त की आपूर्ति की मांग के कारण, प्रसव के समय में महिलाएं विशेष रूप से लोहे की कमी वाले एनीमिया के लिए अतिसंवेदनशील होती हैं। खराब भोजन और अन्य चिकित्सा स्थितियों के कारण वृद्ध वयस्कों मे भी एनीमिया विकसित होने का अधिक खतरा हो सकता है।

एनीमिया कई प्रकार के होते हैं। सभी अपने कारणों और उपचारों में बहुत भिन्न हैं। आयरन की कमी वाला एनीमिया, सबसे आम प्रकार है, यह इलाज योग्य है, इसमें आहार में पौष्टिक परिवर्तन और लोहे की खुराक का सेवन आवश्यक है, एनीमिया के कुछ रूप–जैसे गर्भावस्था

के दौरान विकसित होने वाले एनीमिया–को भी सामान्य माना जाता है। हालांकि, कुछ प्रकार के एनीमिया आजीवन स्वास्थ्य समस्याएं पैदा कर सकते हैं। एनीमिया के कई रूप हैं, प्रत्येक का अपना कारण है। एनीमिया अस्थायी या दीर्घकालीन हो सकता है, और यह हल्के से लेकर गंभीर तक हो सकता है। यदि आपको संदेह है कि आपको एनीमिया है तो अपने चिकित्सक से परामर्श करें क्योंकि यह गंभीर बीमारी का एक चेतावनी संकेत हो सकता है।

लक्षण

एनीमिया के संकेत और लक्षण कारण के आधार पर भिन्न होते हैं। थकान, दुर्बलता, पीली या पीली त्वचा, अनियमित दिल की धड़कन, साँसों की कमी चक्कर आना या छाती में दर्द, ठंडे हाथ और पैर, सरदर्द आदि एनीमिया के संकेत और लक्षण हैं। सामान्य रूप से एनीमिया शुरूआत मे इतना हल्का हो सकता है कि किसी का ध्यान नही जाये। लेकिन एनीमिया के विस्तार पर लक्षण भी बिगड़ जाते हैं। यदि किसी को अस्पष्टीकृत कारणों से थकान महसूस हो रही है, तो वे अवश्य अपने डॉक्टर से संपर्क करें। थकान के अलावा एनीमिया के कई कारण हैं, इसलिए यह न समझें कि यदि आप थक गए हैं तो आपको एनीमिया होना चाहिए। कुछ लोग जब रक्त दान करने जाते हैं तो उन्हें बताया जाता हैं कि उनका हीमोग्लोबिन कम है, जो एनीमिया को इंगित करता है। यदि कभी भी आपको यह बताया जाय कि आप कम हीमोग्लोबिन के कारण रक्तदान नहीं कर सकते हैं, तो अपने डॉक्टर से तुरंत संपर्क कर।

कारण

एनीमिया तब होता है जब आपके रक्त में पर्याप्त लाल रक्त कोशिकाएं नहीं होती हैं। ऐसा हो सकता है अगरः

- आपका शरीर पर्याप्त लाल रक्त कोशिकाओं को नहीं बनता है,
- रक्तक्षाव के कारण आप लाल रक्त कोशिकाओं को अधिक तेजी से खोज सकते हैं, क्योंकि व प्रतिस्थापित हो सकते हैं,
- आपका शरीर लाल रक्त कोशिकाओं को नष्ट कर देता है

आपका शरीर तीन प्रकार के रक्त कोशिकाओं को बनाता है– संक्रमण से लड़ने के लिए सफेद रक्त कोशिकाएं मदद करती हैं। लाल रक्त कोशिकाओं में हीमोग्लोबिन होता है–एक लौह युक्त प्राटीन जो रक्त को लाल रंग देता है। हीमोग्लोबिन लाल रक्त कोशिकाओं को, आपके फेफड़ों से ऑक्सीजन को आपके शरीर के सभी हिस्सों में ले जाने और शरीर के अन्य हिस्सों से कार्बन डाइऑक्साइड को आपके फेफड़ों तक ले जाने में सक्षम बनाता है ताकि इसे बाहर निकाला जा सके। लाल रक्त कोशिकाओं सहित अधिकांश रक्त कोशिकाएं आपके अस्थि मज्जा में नियमित रूप से उत्पन्न होती हैं। अस्थि मज्जा एक स्पंजी सामग्री है जो आपकी कई बड़ी हड्डियों के केंद्र मे पाई जाती है। हीमोग्लोबिन और लाल रक्त कोशिकाओं का उत्पादन करने के लिए, आपके शरीर को आपके द्वारा खाए

जाने वाले खाद्य पदार्थों से लोहा, विटामिन बी–12, फोलेट और अन्य पोषक तत्वों की आवश्यकता होती है।

विभिन्न प्रकार के एनीमिया और उनके कारणः

लोहे की कमी से एनीमियाः यह दुनिया भर में एनीमिया का सबसे सामान्य प्रकार है जो शरीर में आयरन की कमी के कारण होता है। हीमोग्लोबिन बनाने के लिए अस्थि मज्जा को लोहे की आवश्यकता होती है। पर्याप्त आयरन के बिना, शरीर लाल रक्त कोशिकाओं के लिए पर्याप्त हीमोग्लोबिन का उत्पादन नहीं कर सकता है।

लोहे के पूरक के बिना होने वाला एनोमियाः इस प्रकार का एनीमिया कई गर्भवती महिलाओं में होता है। यह खून की कमी के कारण भी होता है, जैसे कि मासिक धर्म से भारी रक्तश्राव, एक अल्सर, कैंसर और कुछ ओवर–द– काउंटर दर्द निवारक, विशेष रूप से एस्पिरिन का नियमित उपयोग।

विटामिन की कमी से एनीमियाः लोहे के अलावा, शरीर को पर्याप्त स्वस्थ लाल रक्त कोशिकाओं का उत्पादन करने के लिए फोलेट और विटामिन बी–12 की आवश्यकता होती है। इनकी और अन्य प्रमुख पोषक तत्वों की कमी से लाल रक्त कोशिका के उत्पादन में कमी हो सकती है। इसके अतिरिक्त कुछ लोग पर्याप्त बो–12 का सेवन कर सकते हैं, लेकिन उनका शरीर विटामिन को संसाधित करने में सक्षम नहीं होता है इससे विटामिन की कमी से एनीमिया हो सकता है, जिसे घातक रक्ताल्पता भी कहा जाता है।

पुरानी बीमारी का एनीमियाः कुछ बीमारियाँ– जैसे कि कैंसर, एचआईवी / एड्स, संधिशोथ, गुर्दे की बीमारी, क्रोहन रोग और अन्य पुरानी सूजन संबंधी बीमारियाँ–लाल रक्त कोशिकाओं के उत्पादन में हस्तक्षेप कर सकती हैं।

अप्लास्टिक एनीमियाः यह दुर्लभ, जीवन–नाशी एनीमिया तब होता है जब आपका शरीर पर्याप्त लाल रक्त कोशिकाओं का उत्पादन नहीं करता है। अप्लास्टिक एनीमिया के कारणों में संक्रमण, कुछ दवाएं, स्व–प्रतिरक्षित रोग और जहरीले रसायानों का संपर्क शामिल हैं।

अस्थि मज्जा रोग से जुड़े एनीमियाः विभिन्न प्रकार के रोग, जैसे ल्यूकेमिया और मायलोफिब्रोसिस, अस्थि मज्जा में रक्त उत्पादन को प्रभावित करके एनीमिया का कारण बन सकते हैं। इस प्रकार के कैंसर और कैंसर जैसे विकारों के प्रभाव हल्के से लेकर जीवन के लिए खतरनाक होते हैं।

हेमोलिटिक एनीमियाः एनीमिया का यह समूह तब विकसित होता है जब लाल रक्त कोशिकाएं तेजी से नष्ट हो जाती हैं। कुछ रक्त रोग लाल रक्त कोशिका विनाश को प्रभावित करते हैं। किसी को हेमोलिटिक एनीमिया विरासत में मिल सकता है, या जीवन काल के अंत में भी विकसित हो सकता हैं।

सिक्ल सेल एनीमिया: यह हीमोग्लोबिन के दोषपूर्ण रूप के कारण होता है जो लाल रक्त कोशिकाओं को एक असामान्य दरांती जैसे आकार ग्रहण करने के लिए मजबूर करता है। ये अनियमित रक्त कोशिकाएं समय से पहले मर जाती हैं, जिसके परिणामस्वरूप लाल रक्त कोशिकाओं की बेहद कमी होती है।

इस के अलावा थैलेसीमिया और मलेरिया जैसे कारणों से भी एनीमिया हो सकता है।

एनीमिया के कारण जोखिम तथा जटिलताएँ

- आयरन, विटामिन बी–12 और फोलेट में लगातार कम आहार लेने से आपके एनीमिया का खतरा बढ़ जाता है।
- आंतो का विकार होना जो आपकी छोटी आंत में पोषक तत्वों के अवशोषण को प्रभावित करता है–जैसे क्रोहन रोग और सीलिएक रोग–आपको एनीमिया के खतरे में डालता है।
- सामान्य तौर पर, जिन महिलाओं ने रजोनिवृत्ति का अनुभव नहीं किया है, उनमें पुरूषों और बाकि महिलाओं की तुलना में लोहे की कमी वाले एनीमिया का अधिक जोखिम होता है।
- यदि कोई गर्भवती है और फॉलिक एसिड युक्त मल्टीविटामिन नहीं ले रही हैं, तो आपको एनीमिया होने का खतरा है।
- यदि किसी को कैंसर, गुर्दे की विफलता या कोई अन्य पुरानी स्थिति है, तो उनकी पुरानी बीमारी के कारण एनीमिया का खतरा हो सकता है। इन स्थितियों से लाल रक्त कोशिकाओं की कमी हो सकती है।
- यदि किसी के परिवार में वंशानुगत एनीमिया का इतिहास है, जैसे कि सिकल सेल एनीमिया, तो आपको स्थिति का खतरा भी बढ़ सकता है।
- कुछ संक्रमणों, रक्त रोगों और ऑटोइम्यन विकारों, शराब, जहरीले रसायनों के संपर्क में आने और कुछ दवाओं के उपयोग से लाल रक्त कोशिकाओं का उत्पादन प्रभावित हो सकता है और एनीमिया हो सकता हे। 65 वर्ष से अधिक आयु के लोगों में एनीमिया का खतरा बढ़ जाता है।
- अनुपचारित छोड़ दिया तो एनीमिया कई स्वास्थ्य समस्याएं पैदा कर सकता है, जैसे:

अत्यधिक थकान: जब एनीमिया की समस्या गंभीर है, तो आप इतने थके हुए हो सकते हैं कि आप रोजमर्रा के कार्यों को पूरा नहीं कर सकते।

गर्भावस्था की जटिलताऐं: फोलेट की कमी वाले एनीमिया से गर्भवती महिलाओं में जटिलताओं का अनुभव होने की संभावना अधिक हो सकती है, जैसे कि समय से पहले जन्म।

हृदय की समस्याएं: एनीमिया एक तीव्र या अनियमित दिल की धड़कन को जन्म दे सकता है। जब कोई एनेमिक होते हैं तो उन के दिल को रक्त में ऑक्सीजन की कमी की भरपाई के लिए अधिक रक्त पंप करना होता हैं। इससे बढ़े हुए दिल या दिल की विफलता हो सकती है।

मौत: कुछ विरासत में मिला एनीमिया, जैसे सिकल सेल एनीमिया, गंभीर हो सकता है और जीवन–नाश करने वाली जटिलताओं को जन्म दे सकता है। बहुत अधिक रक्त खोने से तीव्र, गंभीर एनीमिया होता है और यह घातक हो सकता है।

एनीमिया के निवारण

विटामिन युक्त आहार लें। कई प्रकार के एनीमिया को रोका नहीं जा सकता है। लेकिन आयरन की कमी से होने वलो एनीमिया और विटामिन की कमी से होने वाले एनीमिया से बचा जा सकता है, जिसमें कई तरह के विटामिन और पोषक तत्व शामिल हैं:

आयरन: आयरन युक्त खाद्य पदार्थों में बीफ़ और अन्य मीट, बीन्स, दाल, आयरन–फोर्टिफाइड अनाज, गहरे हरे पत्ते वाली सब्जियाँ और सूखे मेवे शामिल हैं।

फोलेट: यह पोषक तत्व, और इसके सिंथेटिक रूप फोलिक एसिड, फल और फलों के रस, गहरे हरे पत्तेदार सब्जियां, हरी मटर, किडनी बीन्स, मूंगफली, और समृद्ध अनाज उत्पादों जैसे कि ब्रेड, अनाज, पास्ता और चावल में पाया जा सकता है।

विटामिन बी 12: विटामिन बी–12 से भरपूर खाद्य पदार्थों में मांस, डेयरी उत्पादन, और फोर्टिफाइड अनाज और सोया उत्पाद शामिल हैं।

विटामिन सी से भरपूर खाद्य पदार्थों में खट्टे फल और रस, मिर्च, ब्रोकली, टमाटर, खरबूजे और स्ट्रॉबेरी 'शामिल हैं। ये वस्तुएं लौह अवशोषण को बढ़ाने में मदद करती हैं।

मल्टीविटामिन पर विचार करें: यदि आप अपने द्वारा खाए जा रहे भोजन से पर्याप्त विटामिन प्राप्त करने के बारे में चिंतित हैं, तो अपने डॉक्टर से पूछें कि क्या आपके लिए एक मल्टीविटामिन सही हो सकता है।

एनीमिया से पोड़ित मानव शरीर के लिए एक स्वस्थ आहार योजना आवश्यक मानी जाती है। प्राकृतिक खाद्य पदार्थ आयरन और विटामिन का समृद्ध श्रोत होते हैं। आयरन और विटामिन से भरपूर खाद्य पदार्थ एनीमिया के लिए सबसे बेहतर होते हैं तथा यह शरीर में आयरन और विटामिन के स्तर को बढ़ाने में मदद करते हैं। नीचे दिए गए खाद्य पदार्थों को आहार में शामिल करके हम काफी हद तक एनीमिया से निजात पा सकते हैं।

पालकः पालक आयरन, कैल्शियम, फाइबर और ऑक्सलेट से समृद्ध होता है। पालक हमारे प्रतिरक्षा तंत्र को बेहतर बनाने और एनीमिया के लक्षणों का कम करने में मदद करता है। अपनी दैनिक दिनचर्या के आहार में पालक को शामिल करके शरीर में रक्त संचार को बढ़ाया जा सकता है। आप पालक को उबालकर तथा उसमें पसंदीदा मसाला डालकर सूप भी तैयार कर सकते हैं या आप पालक का हरी पत्तेदार सलाद के रूप में भी उपयोग कर सकते हैं।

टमाटरः टमाटर में काफी मात्रा में विटामिन सी होता है, जो आहार से आयरन प्राप्त करने के लिए आवश्यक माना जाता है। आप अपने शरीर में आयरन की मात्रा बढ़ाने के लिए हर रोज कच्चे टमाटर का सेवन कर सकते हैं।

चुकंदरः चुकंदर आयरन का एक समृद्ध श्रोत हैं और य रक्त की कमी से ग्रसित रोगियों के लिए काफी अच्छे माने जाते हैं। यह लाल रूधिर कणिकाओं को ठीक करने और उनके पुनरूरभवन के प्रभाव को बढ़ाने में अहम भूमिका निभाते हैं। ऐसा माना जाता है कि सुबह एक गिलास चुकंदर का रस लेने से लाल रूधिर कणिकाओं में काफी सुधार होता है। इसे अन्य सब्जियों के साथ मिश्रित करने के अलावा सलाद के रूप में भी उपयोग किया जा सकता है।

मांसः मांस हीम आयरन का एक मुख्य श्रोत है। हीम आयरन पशु खाद्य पदार्थों में पाया जाता है और यह मानव शरीर में शीघ्र ही अवशोषित हो जाता है। जा रोगी आयरन की कमी के कारण एनीमिया से पीड़ित हैं, वह अपने शरीर में आयरन की उचित मात्रा बनाए रखने और यकृत, किडनी और हृदय को सुरक्षित रखने के लिए लाल मांस का उपभोग कर सकते हैं।

अंडेः अंडों में आयरन का अभाव होता है, लेकिन वह एंटी ऑक्सिडेंट और प्रोटीन से समृद्ध होते हैं। यह कोशिकाओं के निर्माण में मदद करते हैं। एनीमिया से पीड़ित लोगों को अपने प्रतिरक्षा स्तर को बढ़ाने के लिए, अपने दैनिक हजार में अंडों को शामिल करना चाहिए।

मछलियोंः मछलियों और शेलफिशों (आवरण वाली मछली) में हीम आयरन होता है, जिसे मानव शरीर आसानी से अवशोषित कर सकता है। वसायुक्त मछली जैसे ट्यूना, और सैल्मन यहाँ तक कि शेलफिश जैसे ऑस्टर और शीसेल जैसी वसायुक्त मछलियों में भरपूर मात्रा में आयरन होता है। जो लोग समुद्री भोजन को पसंद करते हैं और वह एनीमिया से पीड़ित हैं, तो वह रक्त में वृद्धि करने के लिए अपने दैनिक भोजन में समुद्री भोजन शामिल कर सकते हैं।

किशमिश और खजूरः खजूर, किशमिश, सूखे खुबानी और आड़ू जैसे फल आयरन और विटामिन सी से समृद्ध होते हैं। विटामिन सी रक्त के जरिए आयरन के अवशोषण में मदद करता है। इससे मानव शरीर में आयरन और विटामिन के स्तर में काफी सुधार होता है।

अनार: अनार न केवल विटामिन सी से समृद्ध होता है, बल्कि यह आयरन और फोलेट का एक समृद्ध श्रोत भी है। एनीमिया से पीड़ित लोगों को इसका उपभोग करना चाहिए, क्योंकि इसम आयरन की मात्रा बहुत अधिक नहीं होती है, लेकिन यह विटामिन सी से काफी समृद्ध होते हैं, तथा यह रक्त के जरिए आयरन को अवशोषित करने में मदद करता है।

सूखे मेवे: सूखे मेवे जैसे पाइन नट (चीढ़ की सुपारी), अखरोट, पेकार, अखरोट और पिस्ता, आयरन से समृद्ध हाते हैं और यह हमारे शरीर में आयरन के स्तर को बढ़ाने में मदद रकते हैं। आपकों एक मुट्ठी पिस्ता और अखरोट का प्रत्येक दिन अपने नाश्ते या मध्य–दोपहर के हल्के भोजन के रूप में उपयोग करना चाहिए।

'**शहद**: गाढ़ा शहद अपरिष्कृत शहद होते है, जिसमें मैंगनीज, आयरन और कॉपर पर्याप्त मात्रा में उपस्थित होता है। जो लोग दूध के साथ गाढ़े शहद का उपभोग करते हैं, उनके रक्त में हीमोग्लोबिन का स्तर बेहतर बना रहता है। एक गिलास पानी में नींबू का रस और एक चम्मच शहद मिलाकर सुबह खाली पेट पीने से, एनीमिया को काफी हद तक नियंत्रित किया जा सकता है।

दूध: दूध विटामिन बी 12 का एक बेहतर श्रोत है। भोजन करने के बाद, फलों को पीसकर व उसमें दूध को मिलाकर शेक के रूप में या इसका शहद के साथ सेवन किया जा सकता है। यह कम समय में एनीमिया के लक्षणों को रोकने में मदद करता है।

सेब: सेब में विटामिन सी भरपूर मात्रा में होती है। सेब शरीर के भीतर आयरन को अवशोषित करने में मदद करता है, जिसके परिणामस्वरूप शरीर में आयरन का स्तर बढ़ जाता है। सेब के छिलके में समृद्ध मात्रा में फाइबर होता है।

ओट्स (जई): ओट्स में फाइटिक एसिड होता है, जो मानव शरीर द्वारा किए जाने वाले आयरन के अवशोषण को बाधित कर सकता है। आयरन वाले खाद्य पदार्थों के साथ ओट्स का उपयोग करके एनीमिया की समस्या को कम किया जा सकता है। ओट्स विटामिन बी 12 में समृद्ध होते हैं, इसलिए यह एनीमिया से निजात दिलाने में मदद करते हैं।

सोयाबीन: बहुगुणों से परिपूर्ण सोयाबीन आयरन से भी भरपूर होते है और यह कई स्वादिष्ट व्यंजनों का हिस्सा होते हैं या आप इनका ऐसे भी उपयोग कर सकते हैं। इसमें कम वसा और उच्च मात्रा में प्रोटीन होती है। चूंकि इसमें फाइटिक एसिड होते हैं, इसलिए सोयाबीन को इस तरह से तैयार किया जाना चाहिए कि हम इससे अधिक स्वास्थ्य लाभ प्राप्त कर सकें।

गुड़: काली गुड़ आयरन, विटामिन बी और खनिज पदार्थ में समृद्ध मानी जाती है। रोजाना काली गुड़ खाने से कुछ हफ्तों में ही, आयरन के स्तर को नवीनीकृत किया जा सकता है। आप अपने पसंदीदा व्यंजनों को बनाने में भी गुड़ का इस्तेमाल कर सकते हैं।

केला: केला खाना एनीमिया पर काबू पाने के सर्वोत्तम तरीकों में से एक है। इस फल में आयरन और पोटेशियम की पर्याप्त मात्रा होती है। यह रक्त में हीमोग्लोबिन के स्तर को बढ़ाने में मदद करता है।

मशरूम: मशरूम आपके शरीर में आयरन की मात्रा को बढ़ाने का एक बेहतर उपाय है। इसमें राइबोफ्लेविन नियासिन, आयरन और बीटा–ग्लूकेन्स मौजूद होते हैं, जो रक्त कोशिकाओं को क्रियान्वित करने में सहायता करते हैं।

इस के इलवा मसाले जैसे धनिया, अजवायन और पुदीना आयरन से समृद्ध होते हैं और यह शरीर में हीमोग्लोबिन की मात्रा को बढ़ाने का काम करते हैं।

एक स्वस्थ शरीर के लिए स्वास्थ्यवर्धक भोजन महत्वपूर्ण है। इन प्राकृतिक खाद्य पदार्थों को अपनाने से आपको आयरन और विटामिन के स्तर में एक बड़ा अंतर देखने का मिलेगा। लेकिन समय पर अपनी दवाइयों को लेना न भूलें। एनीमिया एक बहुत ही महत्वपूर्ण बीमारी है जिसे कभी भी अनदेखा नहीं करना चाहिए। यह ज्यादातर (महिलाओं एवं बच्चों) में पाया जाता है तथा इनके शरीरिक एवं मानसिक विकास में बाधा प्रदान करता है। यदि आपके परिवार में किसी में भी एनीमिया के लक्षण दिखें तो तुरंत नजदीकी अस्पताल अथवा स्वास्थ्य केंद्र में संपर्क करें। याद रखिए एनीमिया जानलेवा भी होता है। जागरूकता, सटीक भोजन और उपचार से इस रोग को मिटाया जा सकता है।

ज्वारः पशुधन के लिए एक आदर्श पौष्टिक चारे की फसल

हंसराज हंस[1*], राकेश कुमार[2], जे. एस. मिश्र[2] एवं बाल कृष्ण[3]
[1]एस. आर. एफ., भा. कृ. अनृ. प. का पूर्वी अनु. परिसर, पटना
[2]वैज्ञानिक, भा.कृ.अनृ.प. का पूर्वी अनु. परिसर, पटना
[3]पी. एच. डी. शोध छात्र, बिहार कृषि विश्वविद्यालय, सबौर, भागलपुर
* प्रेषक ई मेल –*hrhans13@gmail.com*

"भारत में सबसे अधिक पशुधन की आबादी 520 मिलियन है, जो दुनिया की पशुधन आबादी का लगभग 20 प्रतिशत है। दुनिया के भैंसों, मवेशियों, बकरियों और भेड़ आबादी का क्रमशः 55, 16, 20 और 5 प्रतिशत, भारत का भागीदारी है। चारा उत्पादन सफेद क्रांति का 'अग्रदूत' है। चारे की आपूर्ति के संबंध में वर्तमान स्थिति और भारत में पशुधन के लिए चारा उत्पादन संतोषजनक से बहुत दूर है। वास्तव में, देश का वर्तमान चारा और चारा संसाधन आवश्यकता के केवल 50 प्रतिशत को पूरा कर सकता है। अनाज की फसल के अवशेष यानी गेहूं, चावल और मोटे अनाज के तिनके/घास पशु चारे की खपत का 70 प्रतिशत योगदान करता है। हरे चारे की उप्लब्धता केवल 23 प्रतिशत है। वर्तमान में, देश में जानवरों के लिए कोई चारा और चारा सुरक्षा नहीं है। पशुओं के विशेष रूप से बेहतर वर्ग जैसे क्रॉसब्रिड के लिए अपनी पूरी आनुवंशिक क्षमता व्यक्त करने के लिए उच्च दूध उत्पादन और विकास ऐसी स्थिति में कठिनाइयों को बढ़ाने के लिए बाध्य है। लेकिन, देश में चारे की फसलों का केवल 4.4 प्रतिशत खेती के क्षेत्र म वार्षिक उत्पादन होता है। मौजूदा पशुधन आबादी को पूरा करने के लिए वार्षिक चारा की आवश्यकता 1594 मी. टन है। इस कमी को दूर करने के लिए, डेयरी किसान महंगे सांद्रता वाले चारे के संवर्धित का उपयोग करते हैं, जो अंतिम उत्पादन की लागत को बढ़ाता है। यह ध्यान रखना उचित है कि दूध उत्पादन की कुल लागत में अकेले चारे का लागत 65 से 70 प्रतिशत है।"

उच्च उपज क्षमता और बेहतर पोषक मूल्य उपयुक्तता के कारण, ज्वार व्यापक रूप से अपनाई जाने वाली चारा फसलों में से एक है। ज्वार, दुनिया की पांचवीं सबसे महत्वपूर्ण अनाज की फसल होने के अलावा है यह चारे के लिए भी मूल्यवान है। इसका प्रयोग साइलेज और घास बनाने के लिए उपयुक्त है और खरीफ के मौसम के दौरान चारे की दो तिहाई मांग

को पूरा करता है। गर्म एवं उपजाऊ मिट्टी ज्वार के लिए सबसे उपयुक्त है, जबकि ठंडा, गीला मिट्टी इसके विकास को सीमित करती है। फसल अपेक्षाकृत अच्छी तरह से सूखा सहन करती है, हालांकि पर्याप्त उर्वरता है और मिट्टी की नमी से अधिकतम पैदावार होती है। पर्याप्त नमी की अनुपस्थिति में पौधा सुप्त हो जाता है, लेकिन यह आसानी से नहीं झुकता है।

चारे की आपूर्ति और मांग के बीच बड़े अंतर को पाटने का एकमात्र तरीका मौजूदा कृषि प्रणालियों के भीतर प्रति यूनिट क्षेत्र और इकाई समय में चारा उत्पादन को अधिकतम करना है और चारा और चारा संसाधनों के विकास के लिए सीमांत, उप सीमांत, शुष्क भूमि और समस्याग्रस्त मिट्टी का उपयोग करना है।

देश में हरे चारे और चराई के संसाधनों की कमी ने पशुधन को कुपोषण सहन करने के लिए मजबूर कर दिया है। भारत में, खाद्य फसलों की बढ़ती आबादी के दबाव और प्रतिस्पर्धा की वजह से चारा फसलों के तहत क्षेत्र में वृद्धि संभव नहीं है। ज्वार परिवार के सदस्यों में ड्यूरिन होता है, जो एक ग्लूकोसाइड है जो हाइड्रोसेनिक एसिड को रिलीज करने के लिए टूट जाता है जिसे प्रूसिक एसिड भी कहा जाता है। ठंढ, सूखा या कटाव के रूप में वृद्धि का अचानक व्यवधान, प्रुसिक एसिड को पौधे के अंदर अधिक तीव्र गति से जारी करने का कारण बनता है। उच्च प्रूसिक एसिड का स्तर मवेशियों के लिए घातक है। प्रूसिक एसिड एक से दो सप्ताह में टूट जाता है, इसलिए घास या सिलेज में बनाई गई सामग्री का उपयोग करना सुरक्षित है।

तालिका 1– सूखे एवं चारे की उपलब्ध्ता तथा आवश्यकता

मिलियन टन

वर्ष	**चारे की उपलब्ध्ता**		**आवश्यकता**		**चरों की कमी (प्रतिशत) में**	
	हरा चारा	**सूखा चारा**	**हरा चारा**	**सूखा चारा**	**हरा चारा**	**सूखा चारा**
1995	379.30	421.00	947.00	526.00	59.95	19.95
2000	304.50	420.00	988.00	549.00	61.10	21.93

2005	389.90	443.00	1025.00	569.00	61.96	22.08
2010	395.20	451.00	1061.00	509.00	62.76	23.46
2015	400.60	466.00	1097.00	609.00	63.50	23.56
2020	405.90	473.00	1134.00	630.00	64.21	24.81
2025	411.30	488.00	1170.00	650.00	64.87	24.92

स्रोतः पशुपालन व दुग्धव्वयसाय वर्किंग ग्रुप रिपोर्ट, 11 वीं पंचवर्षीय, योजना आयोग, भारत सरकार

भूमि और भूमि की तैयारी

जलमग्न अवस्था से मुक्त मिट्टी के लिए खेती उपयुक्त होती है। हालांकि, रेतीले दोमट मिट्टी में ज्वार अच्छी तरह से विकसित होता है। ज़मीन तैयारी फरवरी मध्य में की जानी चाहिए। एक गहरी जुताई और 3 से 4 बार हैरोइंग पर्याप्त है।

खाद और उर्वरक

ज्वार उर्वरकों के उपयोग के लिए बहुत ही उत्तरदायी है। फार्मयार्ड खाद 20 टन प्रति हेक्टेयर, 100 किग्रा.नत्रजन और 60 किग्रा. फॉस्फोरस प्रति हेक्टेयर मल्टी कटाई प्रभेद के लिए और 80 किग्रा. नत्रजन एवं 40 किग्रा. फॉस्फोरस प्रति हेक्टेयर एकल कटाई वाली प्रभेद में प्रयोग करना चाहिए। फार्मयार्ड खाद और फॉस्फोरस की कुल मात्रा क्षेत्र की तैयारी के समय किया जाना चाहिए। नाइट्रोजन की आधी मात्रा को बुवाई का समय और शेष राशि को दो समान खुराक में विभाजन किया जाना चाहिए। बुवाई के 30 दिनों के बाद शीर्ष ड्रेसिंग किया जाना चाहिए। 25 किग्रा. प्रति हेक्टेयर जिंक और सूक्ष्म खनिज का अनुप्रयोग सल्फेट हरे चारे की उपज को बढ़ाते हैं।

उन्नत प्रजातियाँ

तालिका 2– **ज्वार चारे की उन्नतशील प्रजातियाँ एवं अनुमोदित क्षेत्र**

किस्में	**अनुकूल क्षेत्र**
एकल कटाई	
पूसा चरी–1	उत्तर प्रदेश
एस. एल–44	उत्तर पश्चिम
एम. पी. चरी	सम्पूर्ण भारत
पूसा चरी– 6	सम्पूर्ण भारत
पूसा चरी– 9	सम्पूर्ण भारत
एच. सी चरी–136	मध्य प्रदेश
जवाहर चरी–6	मध्य प्रदेश

यू. पी चरी–1	उत्तर भारत
यू. पी चरी–2	उत्तर भारत
हरियाणा चरी–171	सम्पूर्ण भारत
राजस्थान चरी–1	सम्पूर्ण भारत
राजस्थान चरी–2	सम्पूर्ण भारत
दो कटाई	
सी. ओ–27	दक्षिण भारत
ए. एस–16	गुजरात
जी. एफ. एस. एच–1	गुजरात
मल्टी कटाई	
मीठी सूडान	उत्तर भारत
रुचिरा चरी	महाराष्ट्र
प्रोएग्रो चरी–69	मध्य प्रदेश
पंजाब सुडेक्स चरी–1	पंजाब
हरा सोना–855	सम्पूर्ण भारत
पन्त चरी–5	सम्पूर्ण भारत
पूसा चरी–615	दिल्ली क्षेत्र
हरियाणा ज्वार–513	हरियाणा
दो उद्देशीय ज्वार	
जे एस–20	उत्तर भारत

एस. पी. वी–669	महाराष्ट्र
सी. एस. एच–13	उत्तरी पश्चिमी एवं मध्य भारत
सी. एस. वी–15	महाराष्ट्र
के–11	तमिलनाडु

स्रोतः भारतीय चरागाह एवं चारा अनुसन्धान संस्थान

बुवाई का समय तथा बीज दर

मिट्टी की नमी और वायुमंडलीय तापमान पर बुवाई निर्भर करता है। ज्वार मार्च से जुलाई के अंत तक बोया जा सकता है। 15 किग्रा एकल कटाई वाली प्रभेद में और मल्टी–कट प्रभेद के लिए 30-35 किग्रा. प्रति हेक्टेयर प्रयोग करना चाहिए। बेहतर अंकुरण के लिए बुवाई से पहले बीज को कार्बेन्डाजिम (बैविस्टिन) से उपचारित कर लेना चाहिए। बीज की बुवाई 3-5 से.मी से ज्यादा गहराई में बुवाई नहीं करना चाहिए एवं लाईन से लाईन की दूरी 30 से.मी रखना चाहिए। लाइन में बुवाई करने से चारे की पैदावार में सुधार होता है।

सिंचाई

सामान्य वर्षा वितरण के तहत सिंचाई की आवश्यकता नहीं होती है। सूखे के मामले में, 15 दिनों के अंतराल पर सिंचाई करना वांछनीय है।

पौधा–संरक्षण

चारा ज्वार आमतौर पर कीड़े की कोई समस्या नहीं है और कोई रासायनिक नियंत्रण को सिफारिश नहीं की जाती है। यद्यपि कभी–कभी एफिड्स का संक्रमण हो सकता है, ये शायद ही कभी कोई आर्थिक क्षति का कारण बनते हैं।

कटाई

मल्टी–कट कार्यक्रम के तहत सर्वोत्तम गुणवत्ता और पैदावार के लिए, 40-45 दिन पर फसल की पहली कटाई एवं दूसरी कटाई 30 दिनों के बाद किया जाना चाहिए। मल्टी–कट प्रभेद में कटाई के समय कम से कम 8-10 सेंमी की मात्रा छोड़ दें ताकि अगली कटाई के लिए कल्ले जल्दी से निकल आए। एक कट प्रभेद में 50 प्रतिशत पुष्पावस्था पर फसल की कटाई किया जाना चाहिए।

उपज

अच्छे प्रबंधन से खेती करने से ज्वार की एकल कटाई वाली प्रभेद 400–500 क्विंटल तथा मल्टी कटाई वाली प्रभेद से 600–800 क्विंटल हरा चारा आसानी से प्राप्त किया जा सकता है।

ई–मार्केटिंग: किसानों की आय दोगुना करने का एक माध्यम

मीरा कुमारी, रामनाथ कुमार राय, अनीता कुमारी और कुमार वरुण विजय

भारतीय अर्थव्यवस्था कृषि पर आधारित है। भारत के सकल घरेलू उत्पाद में कृषि एवं इससे संबंधित क्षेत्रों को योगदान लगभग 13 प्रतिशत है। हम उत्पादन में तो काफी हद तक सक्षम है परंतु हमारे किसानों को उनकी उपज का उचित दाम नहीं मिल पता है इसका मुख्य कारण व्यवस्था का जटिल होना है। आज का दौर आर्थिक दौर है और इंटरनेट का भी दौर है हर व्यक्ति अपने व्यवसाय में ऊँचाइयाँ छूना चाहता है ऊँचाइयों छूने के लिए ई– मार्केटिंग किसानो की आय बढ़ाने का एक उत्तम माध्यम है।
ई–विपणन उन रणनीतियों और तकनीकों के लिए संबंधित संदर्भ है जो कम्प्यूटर , लेपटॉप , टेबलेट और स्मार्ट या एंड्राइड फोन का उपयोग करते हैं। विपणन ऑनलाइन या इंटरनेट विज्ञापन के रूप में जाना जाता है।

ई–विपणन का महत्व :

देश की लगभग 70 प्रतिशत आबादी इंटरनेट का इस्तेमाल कर रही है। इसलिए आज के परिवेश में कम समय में ज्यादा निवेश और अधिक से अधिक लोगों तक अपने उत्पाद को बाजार में पहुँचा सकते हैं जो कि पारंपरिक बाजार से संभव नहीं है। इसके लिए हमारे किसान भाइयों को इंटरनेट विपणन की रणनीतियों की बारे में जानना जरुरी है। इन रणनीतियों में सामाजिक नेटवर्क, प्रतिकूल भुगतान, एसइओ, संबंध विपणन, ब्लॉग, ई – मेल व्यापार, मोबाइल विज्ञापन इत्यादि माध्यम समाहित है।

ई–मार्केटिंग का अर्थ

ई – मार्केटिंग को इंटरनेट मार्केटिंग ,वेब मार्केटिंग,डिजिटल मार्केटिंग या ऑनलाइन मार्केटिंग के रूप में भी जाना जाता है। ई– मार्केटिंग एक उत्पाद या सेवा के विपणन के लिए इंटरनेट का उपयोग करने की प्रक्रिया है, ई–मार्केटिंग न केवल इंटरनेट पर विपणन शामिल है बल्कि ई–मेल और वायरलेस मीडिया के माधयम से विपणन भी शामिल है। यह अपने ग्राहकों को व्यवसायों से जुड़ने में मदद करने के लिए कई तकनीकों का उपयोग करता है।
१) पारम्परिक विपणन की तुलना में निवेश पर बेहतर रिटर्न में सहायक

२) विपणन अभियान लागत काम करना

३) अभियान का फास्ट परिणाम

४) वेब ट्रैकिंग क्षमताओं के माधयम से आसान निगरानी के लिए ई– मार्केटिंग अत्यधिक प्रभावी बनाने में मदद करती है।

५) विपणन को वायरल करने में भी मदद करती है।

ई–मार्केटिन के तरीके

ऐसे कई तरीके है जिनमें कम्पनियाँ विपणन के लिए इंटरनेट का उपयोग कर सकती है। जैसे :

१) आलेख विपणन

२)सम्बद्ध विपणन

३) ई–मेल विपणन

४) वीडियो विपणन

५) ब्लॉगिंग इत्यादि

इन सभी तरीकों से ई – मार्केटिंग, एक कंपनी या ब्रांड की सहायता करते हैं और इंटरनेट के माध्यम से ग्राहक तक पहुंचते हैं जबकि पारम्परिक बाजार में दूर–दराज तक पहुँच बनाना संभव नहीं है।

इन माध्यमों से उपभोक्ता अपने खरीद के लिए एवं उत्पादक अपने उत्पाद के विक्रय के लिए सोशल मीडिया पर शोध कर रहे हैं। नियमित सस्ती अनुकूलित संचार के माध्यम से किसान बाजार के सभी सम्भावनाओं और ग्राहकों के साथ सम्बन्ध बना सकते है। यह सामूहिक विपणन के दिनों के विपरीत रणनीति है, जो धीरे – धीरे विलुप्त हो रहा है। वो दिन चले गए है जब केवल शीर्ष रेट वाले कॉपोरटे निकाय ही इंटरनेट मार्केटिंग पर अपने उत्पादों को उपभोक्ताओं तक पहुंचाने में समर्थ होते थे, क्योंकि तकनीकी विशेषज्ञ ही ऑनलाइन मार्केटिंग के बारे में सोचते थे। आज हमारे माननीय प्रधानमंत्री जी डिजिटल इंडिया के तहत पूरे भारत के हर कोने में इंटरनेट की व्यवस्था पर जोड़ डाला है। इसकी सहायता से किसान भाई माउस कि एक क्लिक पर अपनी बिक्री में सुधार ला सकते हैं। आज सभी उम्र, पृष्ठभूमि, जातीय और सामाजिक स्थिति के लोग एक तरफ या दूसरे रास्ते में डिजिटल मार्केटिंग से जुड़े है। इस तरह की सुविधा अब हर गांव तक पहच गयी है, जिसकी सहायता से किसान अपने उत्पाद को मनचाहे बाजार में उचित मूल्य पर आसानी से बेच सकते है। इससे :–

१) व्यापक और वैश्विक पहुँच बन सकती है।
२) मल्टीटास्किंग के लिए भी अनुकूल है।
३)विपणन व्यवस्था को सुगम बनाने के लिए उत्पादों से सम्बंधित सभी विपणन सेवा उपलब्ध हो सकती है।
४)त्वरित गति से इनपुट किसानों को उपलब्ध कराने में सहायक है।
५)लागत प्रभावशीलता, समय प्रभावशीलता
६)सुविधाजनक ,आसान और त्वरित सेवा विस्तार की व्यवस्था

७) अनुवर्ती और बिक्री के बाद सम्बन्ध
८)बाजारों को लक्षित करने के लिए विज्ञापन देने में सहायक

९) डिजिटल भुगतान सेवा के साथ त्वरित लेनदेन निष्पादन करना

१०) ग्राहकों के डाटा संग्रह और निजीकरण करने में भी सहायक सिद्ध हो सकता हैं।

सोशल मीडिया :— मार्केटिंग पे पर क्लिक, इ मेन मार्केटिंग ब्लॉग, कुटेव मार्केटिंग जैसी रणनीतियों के माध्यम से समय मुक्त में किसान अपनी उत्पाद को बाजारो में पकड़ बनाने में कामयाब हो सकते हैं। इसके साथ लाखों ग्राहकों और उपभोक्ताओं को एक साथ एक प्लेटफॉर्म पर मिल सकते हैं। इसकी सबसे बड़ी खासियत यह है कि ग्राहक अपने सुविधाजनक समय पर उपलब्ध उत्पादों को तब तक खोजते हैं जब तक वे पसंद करते हैं, क्योंकि 24 घंटे इसकी सुविधा उपलब्ध होती है।

डिजिटल मार्केटिंग की सहायता से आप कम से कम निवेश के साथ ब्लॉग मार्केटिंग, सोशल मीडिया मार्केटिंग, ई मेन मार्केटिंग शुरू कर सकते है, इसकी शुरुवात के लिए कोई स्टार्ट उप कैपिटल शामिल नहीं है। ई–मेल की सहायता से घंटो में आप ऑटो रेस्पोंसर सेट उप कर सकते हैं और ग्राहक की सूची के साथ विपणन शुरू कर सकते है, जबकि पारंपरिक बाजार के लिए इसकी ढांचागत व्यवस्था में लगभग सालों लग जाते हैं। डिजिटल मार्केटिंग आयतको एवं निर्यातकों के लिए भी एक बढ़िया अवसर प्रदान करता है क्योंकि घर बैठे आराम से ऑनलाइन आर्डर कर सकते हैं। इससे समय एवं विपणन खर्च भी कम हो जाते हैं। सुविधाओं में बिक्री वस्तुओं की वितरण प्रक्रिया पारंपरिक बाजार में बहुत ही कठिन है, जबकि डिजिटल मार्केटिंग की सहायता से आप बिक्री वस्तुओं की वितरण प्रक्रिया को आसानी से ऑनलाइन चेक कर कर सकते हैं। उपभोक्ताओं को माउस की एक क्लिक पर डाउनलोड करने योग्य उत्पाद प्राप्त होते हैं। ग्राहकों के साथ सम्बन्ध बनाने के लिए न ही पते कि जरुरत है और न ही फोन कॉल की। आपूर्तिकर्त्ता आसानी से दोनों खरीददार और सम्भावनाओं का ई–मेल सर्च कर उन तक पहुँच सकते है। ई–मेल से खरीदे गए उत्पाद और सामानों और सेवाओं पर उपलब्ध कूपन इत्यादि का जानकारी भी प्रदान करता है। इसकी सहायता से अच्छे ग्राहकों को आकर्षित किया जा सकता है, चूँकि खरीद का निर्णय लेने के दौरान लक्ष्य सम्भावनाएं अकेले होती है। इसलिए वे एक साथ साथ सहयोगियों द्वारा विचलित नहीं होते हैं। किसान पारम्परिक बाजार का सर्वे करने में असमर्थ है लेकिन ई–मार्केटिंग की सहायता से आप लिंग ,आय ,स्थान ,रुचि और शौक के आधार पर बाजार निर्धारित कर विज्ञापन से लाभ उठा सकते है। मार्केटिंग एवं उपभोक्ताओं के लिए अपने व्यवसाय का विज्ञापन करने में विविधीकरण महत्वपूर्ण है। इसका अर्थ है सम्भावनाओं तक पहुंचाने के लिए रणनीति के नई रूपों का उपयोग करना। ऑनलाइन मार्केटिंग ऐसी विविधता को बहुत आसान बनाता हैं। ऑनलाइन विपणन आप को आसानी से हर विपणन अभियान को ट्रैक करने का अवसर प्रदान करता है।

निष्कर्ष :— किसान डिजिटल मार्केटिंग के विभिन्न माध्यमों जैसे सोशल मीडिया, फेसबुक ,गूगल प्लस, व्हाट्सप्प इत्यादि से जुड़कर न सिर्फ बिचौलियों की संख्या को कम करने में कामयाब हो सकते हैं बल्कि कृषि उत्पादों को उचित बाजार में कम लागत पर अच्छे मूल्य पर प्राप्त कर आय को दोगुना कर सकते हैं।

धान सघनीकरण विधि (एस.आर.आई. /श्री) द्वारा धान उत्पादन

संत कुमार सिंह
पूर्वी क्षेत्र के लिए भा.कृ.अनु.प. का अनुसन्धान परिसर, पटना (बिहार)

धान विश्व की खाद्यान्न फसलों में सबसे अधिक महत्वपूर्ण फसल है. भारत में मुख्य रूप से धान की खेती खरीफ मौसम में की जाती है. विभिन्न अनुसन्धान कार्यों से प्राप्त परिणामों के अनुसार एक किलोग्राम चावल पैदा करने के लिए ३०००–५००० लीटर पानी को आवश्यकता होती है. यद्यपि अभी तक यही मान्यता रही है कि अच्छी पैदावार लेने के लिए बहुत अधिक पानी एवं बीज की जरुरत होती है, परन्तु १६८० के दशक में सर्वप्रथम मेडागास्कर के कृषि वैज्ञानिकों ने एक ऐसी नई तकनीक को अपनाया जिस विधि में मात्र ५ किलोग्राम धान बीज प्रति हेक्टेयर की जरुरत होती है. इसकी रोपाई के लिये बिचड़ा की उम्र मात्र ८–१२ दिन होती है. उक्त तकनीक से न केवल बीज की कम मात्रा एवं बिचड़ा तैयार होने में लगनेवाला अधिक समय की बचत होती है बल्कि पहले से प्रचलित विधि द्वारा रोपे गए धान की तुलना में अधिक उत्पादन भी होता है . यह विधि खरीफ मौसम में जलक्रांत क्षेत्रों में नहीं अपनाना चाहिए. जिन क्षेत्रों में जल–निकास की उचित संभावना हो, श्री विधि अपनाई जानी चाहिए. इस विधि के लिए भूमि का समतल होना आवश्यक है,ताकि पूरे खेत में एक समान सिंचाई की जा सके.

श्री विधि से धान उगाने हेतु छः मूल सिद्धांत

१. ८–१२ दिनों के बिचड़ा की रोपाई करना ताकि उसके कल्लों के फूटने की क्षमता को बरकरार रखा जा सके.

२. एक–एक बिचड़ा को सावधानीपूर्वक धीरे से खुरपी के सहारे निकालकर मुख्य क्यारी में लगाना. इसे सहजता से मिट्टी के साथ ही बीना नुकशान पहुंचाए लगाना.

३. पौधे से पौधे की दूरी १० ईंच एवं इतनी ही दूरी कतार से कतार भी होनी चाहिए.

४. हस्त चालित ध्ऊर्जा चालित घास निकालने वाली मशीन का उपयोग करना ताकि घास भी निकले एवं मिट्टी भी हल्की होकर फसल के जड़ को समूचित हवा प्रदान कर सके.

५. मिट्टी को हमेशा भिंगोकर रखें पर कभी भी भरा हुआ पानी न रखें. पानी डालकर निकाल दें. आधा ईंच से एक ईंच तक ही पानी रखें.

६. मिट्टी की उर्वरता को बनाए रखने के लिए जैविक खाद का व्यवहार करें.

एक हेक्टेयरहेतू श्री विधि द्वारा धान नर्सरी की तैयारी

१. ५.० किलोग्राम बीज लें.

२. अंडे की सहायता से नमक घोल बनाकर ५.० किलोग्राम बीज का शोधन करें. नमक घोल में बीज डालने से रोगी, खखरी अन्य विक्रीत बीज सतह पर आ जायेंगे या तैरते रहेंगे. जो बीज नमक घोल में नीचे बैठ गए उन्हें निकालकर फिर से शुद्ध पानी में डालकर नमक के अंश को हटा दें.

३. बीज को भींगा हुआ जूटध्सूती बोरे में बांध कर उसे पानी में डुबाकर १८ घंटे तक रखें.

४. फिर उस बंधे हुए बोरे को पानी से निकालकर , बंधा हुआ खोल दें एवं पानी गिरने पर २० ग्राम ट्राईकोडर्मा भुरभुराकर छिड़क दें एवं अच्छी तरह दोनों हाथ से मिला दें.

५. उपचारित बीज को फिर से उसी बोरे में बांध कर कहीं ऊंची जगह पर रखें. अगले १२–१८ घंटे तक उसपर समय–समय पर पानी का छिडकाव इतना ही हो कि पानी नीचे न टपकने लगे. बीज को अंकुरण आने पर उसे नर्सरी बेड में तरीके से–

- समतल किए गए खेतों में पानी डालकर गीली बीजस्थली तैयार करना. तत्पश्चात बीजस्थली के चारों कोने में ६ ईंच लकड़ी अथवा केले का थुम्बा का पट्टी लगा देने से प्रत्येक बीजस्थली की मिट्टी बाहर नहीं बहती.
- बीजस्थली के लिए हल्की एवं भुरभुरी मिट्टी को जमीन से ३–४ ईंच ऊँची करना.
- इसके बाद बीजस्थली के ऊपर कम्पोस्ट ध्वर्मीकम्पोस्ट की महीन एवं हल्की परत दाल दिया जाता है.
- **मुख्य खेत में धान की रोपाई**
- खेत को उन्नत विधि के समान ढैंचा के फसल को सड़ा कर भी तैयार करते हैं. अथवा एक हेक्टर खेत में १५–२० टन कम्पोस्टध्गोबर की भलीभांति सडी खाद अथवा ५–७ टन वर्मीकम्पोस्ट में से किसी एक को डालना चाहिए.
- अपने क्षेत्र विशेष के हिसाब से फोस्फेट और पोटाश खाद का इस्तेमाल करें.
- अपने क्षेत्र विशेष के हिसाब से फोस्फेट और पोटाश खाद का इस्तेमाल करें.
- खेत के चारों ओर ८ ईंच गहरी और १.५ फूट चौडी नाली बनाते हैं.
- रोपाई करते समय खेत गीला होना चाहिए तथा कादो के ऊपर एक इंच से कम पानी होना चाहिए.
- लाइन से लाइन और बिचड़े से बिचड़े की दूरी १०च होनी चाहिए. जो श्री मार्कर यंत्र से निर्धारित होना चाहिए.
- बिचड़े की आयु ८–१२ दिनों की होनी चाहिए तथा प्रत्येक बिचड़े की रोपाई श्री मार्कर के द्वारा चिन्हित स्थानों पर करना चाहिए.

- नर्सरी से निकलने के बाद बिचड़े को आधे घंटे के अंदर तैयार खेत में रोप देना चाहिए.
- बिचड़े को मिट्टी के साथ हलके से कादो में बैठा दें.

पोषक तत्व प्रबंधन

- प्रायः इस विधि में रासायनिक उर्वरकों का उपयोग नहीं किया जाता है.
- परन्तु जैविक अथवा कार्बनिक खाद उपलब्ध नहीं होने पर रोपनी के समय ६२.५ किलोग्राम नेत्रजन, ७५ किलोग्राम स्फूर तथा ३७.५ किलोग्राम पोटाश का प्रती हेक्टर प्रयोग करते हैं.
- नेत्रजन का ऊपरिवेशन दूसरी निकौनी के समय ३० किलोग्राम तथा गाभा निकलने के एक सप्ताह पूर्व ३० किलोग्राम की मात्रा से करते हैं
-

खरपतवार नियंत्रण

- खरपतवार के नियंत्रण के लिए कल्ले निकलने के १० दिन बाद तक हस्तचलित अथवा ऊर्जचलित घास निकालने वाली मशीन की सहायता से निकौनी करनी चाहिए.
- निकौनी की प्रक्रिया १५ दिनों के अतराल पर कम से कम दो बार करनी चाहिए.
- घास निकालनेवाली यंत्र मिट्टी को नीचे से पलट देती है जिससे मिट्टी में हवा लगती है ओर खरपतवार इसमें मिलकर खाद (प्रति हेक्टर लगभग १.० टन) बन जाते हैं.
- खरपतवार को धान के पौधों की पंक्ती के दोनों तरफ से निकलना चाहिए.

सिंचाई प्रबंधन

इस विधि के अंतर्गत खेत में अधिक नमी की आवश्यकता नहीं होती है. शोध से पता चला है कि यदि श्री विधि के सम्पूर्ण अवधि में सिर्फ नमी बनाये रखें, तो किसान एक इंच खड़ा पानी रखने की तुलना में ३८ प्रतिशत और एक इंच पानी कल्लों के निकलने के बाद से बनाये रखने की तुलना में २८प्रतिशत तक जल की बचत कर सकते हैं.

गन्ने से जैव इथेनॉल का उत्पादन एक वैकल्पिक ऊर्जा स्रोत

राजीव कुमार[1], पुष्पा सिंह[1] और अभिषेक कुमार दूब[2]
[1]भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ
भारतीय कृषि अनुसन्धान परिषद् का पूर्वी अनुसंधान परिसर, पटना

जैव ईंधन के रूप में इथेनॉल परिवहन क्षेत्र में तेल के लिए पर्यावरण के अनुकूल विकल्प के रूप में दुनिया भर में स्वीकृति प्राप्त कर रहा है। भारत सरकार ने अक्टूबर 2006 से पेट्रोल में 5 प्रतिशत इथेनॉल सम्मिश्रण क साथ निकट भविष्य म 25 प्रतिशत इथेनॉल के मिश्रण की योजना बनाई है। राष्ट्र (भारत) का लक्ष्य 2030 तक ऊर्जा के क्षेत्र में आत्मनिर्भर होना है और इसलिए जैव–ईधन भारत की ऊर्जा जरूरतों को पूरा करने में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाने जा रहा है। वर्तमान में केवल इथेनॉल के उत्पादन के लिए गन्ना से प्राप्त शिरा का उपयोग किया जाता है, जो हमारे रसायनिक और पेय उद्योगों की मॉग को पूरा करने के लिए प्रर्याप्त है। जैव ईंधन योजना को बनाए रखने के लिए, ब्राजील और संयुक्त राज्य अमेरिका में उपयोग किए जा रहे इथेनॉल उत्पादन के लिए वैकल्पिक कियाधार का पता लगाना अनिवार्य है और यह अच्छी तरह से स्थापित है कि लिग्नो–सेल्युलोसिक पादप जैव भार मिश्रित शर्करा के सबसे मान्यता प्राप्त संभावित स्रोत में से एक है, जो कि इथेनॉल को ईंधन के लिए किण्वन के लिए बड़े पैमाने पर उपलब्धता, कम लागत और पर्यावरणीय सौम्य उत्पादन के लिए है।

भारत की सबसे महत्वपूर्ण नकदी फसलों में से एक गन्ने की खेती 4.2 मिलीयन हेक्टेयर के क्षेत्र में की जा रही है, जिसकी औसत उत्पादकता 60–70 टन/हे. है। गन्ने के 100 टन फसल से लगभग 8–10 टन सूखी पत्तियॉ खेतों में गिरी रहती है जबकि शर्करा (चीनी) के निष्कर्षण के बाद लगभग 50–60 टन गन्ने की खोई चीनी कारखाने के क्षेत्र में उत्पन्न होती है। आमतौर पर चीनी मिल चलाने के लिए और बिजली पैदा करने के लिए भी ताप ऊर्जा के लिए कच्चे माल के रूप में गन्ने के खोई का उपयोग किया जा रहा है, जबकि गन्ने के खेत में गिरी गन्ने की सूखी पत्तियों का सिर्फ गीली घास (Mulch) के रूप में उपयोग किया जाता है। यह आम तौर पर खेतों में जलाया जाता है और इसकी धीमी गति से जलने के कारण वातावरण में कार्बन मोनोऑक्साइड का उत्सर्जन होता है, जिसके फलस्वरूप मृदा से कार्बनिक पदार्थ का ह्रास होता है और मृदा के अन्तःभाग का सूक्ष्मजीव समूह असंतुलित हो जाता है जिसके फलस्वरूप मृदा की उर्वरता भी कम हो जाती है और लम्बे समय के लिए यह मृदा के स्वास्थ्य पर भी प्रतिकूल असर डालता है। गन्ने की खोई और सूखी पत्तियॉ एक विशिष्ट लिग्नो सेल्यूलोसिक पदार्थ है जो कि 18–23 प्रतिशत लिग्न्नि, 40–45 प्रतिशत सेल्यूलोज और 25–28 प्रतिशत अर्द्धसेल्यूलोज जो कि किण्वयीकरण के पश्चात् सी–5 या सी–6 शर्करा में परिवर्तित हो जाता है और इस प्रकार यह इथेनॉल उत्पादन के लिए नवीकरणीय संसाधन का एक समृद्व भण्डार के रूप में काम करता है (चित्र 1)।

सूक्ष्मजीवों के पास विविध अपचयी गतिविधियॉ होती है जो कि सेल्यूलेसेस, जाइलेनेसेस और लिग्निसेस है लेकिन ये सारी गतिविधियों का किसी एक जीव में होने की संभावना बहुत कम है।

गन्ने के जैवभार (Biomass) शर्करीकरण का प्रभावकारी मूल्य ओर मिश्रित शर्करा का अनुकूलतम सूक्ष्मजीवों के नस्ल जिनके पास उपर्युक्त लिखित किण्वन प्रक्रिया स्थापित करने के लिए दक्ष या कार्यकुशल उत्पादन की क्षमता हो तथा इसके लिए उपर्युक्त सूक्ष्म जीवों का संघ होना आवश्यक है।

गन्ने से उत्पादित लिग्नोसेल्यूलेसिक पदार्थ (खोई और सूखी पत्तियॉ) का उपयोग इथेनॉल के उत्पादन के लिए एक सस्ता स्रोत है जो कि पूरे वर्ष भर उपलब्ध रहता है तथा साथ ही यह पदार्थ इथेनॉल उत्पादन के लिए सस्ता कच्चा माल है जोकि पूरे वर्ष भर गन्ने के पौधों के पास ही बहुत साधारण तरीके से उपलब्ध रहता है।

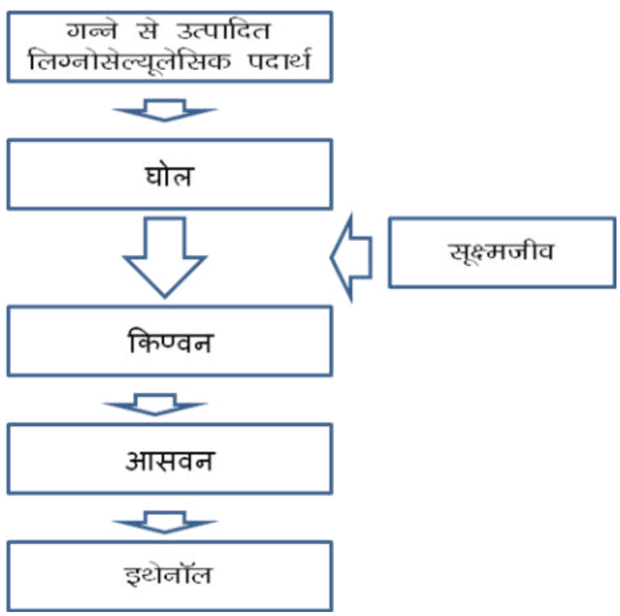

चित्र 1: गन्ने के जैवभार से इथेनॉल उत्पादन की विधि

पारिस्थितिकी तंत्र और पारिस्थितिकी तंत्र सेवाएं

अकरम अहमद, समीर कुमार बरारी सुरजीत मंडल और मणिभूषण

पारिस्थितिकी तंत्र क्या है?

पारिस्थितिकी तंत्र पौधों और जानवरों का एक गुट है जो एक क्षेत्र में एक दूसरे के साथ इंटरैक्ट करते हैं। इसके अलावा, उनके अजैव वातावरण के साथ भीइंटरैक्ट करते हैं। अजैविक वातावरण में मौसम, जलवायु, सूरज की रोशनी, मिट्टी और पानी आदि शामिल हैं। पारिस्थितिक तंत्र इस तरह से संबंधित है कि ये सभी अलग–अलग जीव और पौधे रहते हैं और सभी एक दूसरे के करीब निकटता से इंटरैक्ट करते हैं।

पारिस्थितिकी तंत्र सेवाएं क्या है?

पारिस्थितिक सेवाएं पारिस्थितिक तंत्र में पारिस्थितिक कार्यों से उत्पन्न होने वाले लाभ हैं। इस तरह की सेवाएं जानवरों, पौधों और मनुष्यों सहित आला में सभी जीवित जीवों को लाभान्वित करती हैं।

पारिस्थितिकी तंत्र सेवाओं का वर्गीकरण

पारिस्थितिक तंत्र की सेवाओं का चार श्रेणियो म ंवर्गीकृत कियाग या है:

प्रावधान सेवाओं

पारिस्थितिक तंत्र से प्राप्त उत्पाद प्रावधान सेवाओं के अंतर्गत आते हैं। उदाहरण के लिएरू जल आपूर्ति, भोजन, कच्चे माल, आनुवंशिक संसाधन, औषधीय संसाधन, सजावटी संसाधन आदि।

विनियमन सेवाएं

पारिस्थितिक तंत्र प्रक्रियाओं के विनियमन से प्राप्त लाभ इससेवाओं के अंतर्गत आता है। उदाहरण के लिएः जलवायु विनियमन, जल विनियमन, रोग विनियमन, प्रदूषण, जल शोधन आदि।

सांस्कृतिक सेवाएं

पारिस्थितिक तंत्र से प्राप्त अभौतिकलाभ सांस्कृतिक सेवाओं के अंतर्गत आते हैं। उदाहरण के लिएरू मनोरंजन, सौंदर्यात्मक, शैक्षिक, विरासत, आध्यात्मिक, धार्मिक और प्रेरणादायक आदि।

सहायक सेवाएँ

अन्य सभी पारिस्थितिकी तंत्र सेवाओं के उत्पादन के लिए आवश्यक सेवाएं सहायक सेवा के अंतर्गत आती हैं। उदाहरण के लिएरू मृदा गठन, पोषक तत्वो का आवर्तनतथा प्राथमिक उत्पादन आदि।

पारिस्थितिकी तंत्र सेवाओं को समझने के लिए एक सचित्र उदाहरण

क्या हम पारिस्थितिक तंत्र को महत्व देते हैं?

पारिस्थितिक तंत्र समाज को आवश्यक सेवाएं प्रदान करते हैं फिर भी उन्हें अक्सर माना जाता है जैसे कि उनका कोई मूल्य नहीं है। वे अक्सर समाज के लिए दीर्घकालिक लाभों की कीमत पर अल्पकालिक लाभ के लिए प्रबंधित किए जाते हैं। बड़े पैमाने पर मानवीय गतिविधियाँ पारिस्थितिकी प्रणालियों और उनके द्वारा प्रदान की जाने वाली सेवाओं के लिए खतरा हैं, और यह समाज को अपने निर्णय लेने में अपने मूल्य को शामिल करने के तरीके पर पुनर्विचार करने के लिए मजबूर कर रहा है।

पारिस्थितिकी तंत्र सेवाओं के लिए भुगतान

जब लोग सेवाओं के लिए भुगतान करने को तैयार हों तो पारिस्थितिक तंत्र सेवाओं का वास्तविक मूल्य हो सकते हैं। पारिस्थितिकी तंत्र सेवाओं के लिए भुगतान बाजार बनाने और पारिस्थितिकी तंत्र सेवाओं के लिए मूल्य जोड़ने का एक साधन है। वे उन लोगों को जोड़ते हैं जिसको सेवाओं दी गई हैं और जो उन्हें सेवा प्रदान करते हैं। वाटरशेड के संदर्भ में, अपस्ट्रीम में भूमि उपयोग और डाउनस्ट्रीम मेंजल उपयोग ये दोनों को लिंक किया जा सकता है पारिस्थितिकी तंत्र सेवाओं के लिए भुगतान के में।डाउन स्ट्रीम के किसानों और शहरी निवासियों द्वारा उपयोग के लिए पानी अधिक छोड़ने के लिए अपनी भूमि–उपयोग प्रथाओं को बदलने के लिए सहमत हुए एक कैचमेंट के अपस्ट्रीम पर भूमि के मालिक इसका एक उदाहरण होंगे। यह बढ़ती शहरी आबादी के लिए अतिरिक्त पानी का एक मूल्यवान स्रोत हो सकता है। यह एक ऐसी सेवा है जिसके लिए शहरों को भुगतान करने की इच्छा हो सकती है। एक अन्य उदाहरण, निम्न–भूमि के मालिकों अपनी भूमि को भरने की अनुमति देगा शहरी क्षेत्रों को महंगी क्षति से बचाने के लिए ।

पारिस्थितिकी तंत्र सेवाओं की कोमत कितनी है?

जैवक्षेत्र	कुल वैश्विक पारिस्थितिकी तंत्र सेवाओं का मूल्य **($ वर्ष $^{-1}$* 10^9)**
खुला महासागर	8381
तटीय	12568

वन	4706
घास/रेंजभूमि	906
गीली भूमि	4879
फसल भूमि	128
झील/नदियों	1700

पारिस्थितिकी तंत्र पर खतरे क्या हैं?

उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध के बाद से, पारिस्थितिकी तंत्र में परिवर्तन व्यापक रूप से हुआ है, बडो पैमाने पर जनसंख्या वृद्धि और विकास के कारण। वास्तव में, अधिकांश पारिस्थितिक तंत्र अब मानव गतिविधियों से प्रभावित हैं। कुछ का मानना है कि मिलेनियम डेवलपमेंट गोल्स (मिलेनियम इकोसिस्टम अससमेंट, 2005) को प्राप्त करने में पारिस्थितिक तंत्र की गिरावट बाधा उत्पन्न करने वाले बाधाओं में से एक है। पारिस्थितिकी तंत्र की गुणवत्ता गिराना और खतरे में डालने वाले प्रभावों में मानव गतिविधि और जल, भोजन, ऊर्जा, स्वास्थ्य और जलवायु परिवर्तन आदि शामिल ह।

निष्कर्ष

आज हम भूमि और जल संसाधनों का उपयोग करने के लिए जो तरीका चुनते हैं, वह पृथ्वी के पारिस्थितिकी तंत्र और उनके द्वारा प्रदान की जाने वाली सेवाओं की भविष्य की स्थिरता पर भारी परिणाम होंगे।

जैविक खेती के लिए संसाधनों का समुचित प्रबंधन

रविकान्त चौबे[1], सर्वेश कुमार[2],सुमित कुमार सिंह[3] अंजनी कुमार[3] सुमित कुमार सिंह
(1,2) वरीय शोधकर्ता, (4) निदेशक, आई. सी. ए. आर. अटारी, जोन–IV, पटना (बिहार)

जैविक खेती:–

"जैविक खेती कृषि की वह पद्धति है जो पार्यावरण की भाुद्धता, जलवायु की भाुद्धताः भूमि की प्राकृतिक स्वरूप बनाये रखने वाली, जलधरण क्षमता बढ़ाने वाली, धैर्यशील कृत संकल्पित होते हुए रसायनों का उपयोग आवश्यकता अनुसार कम से कम करते हुए कृषक को कम लागत में दीर्धकालीन स्थिर व अच्छी गुणवता देने वाली पारम्परिक पद्धति है।"

जैविक खेती को आर्गेनिक खेती, प्राकृतिक खेती कार्बनिक खेती एवं रसायन विहिन खेती आदि नामों से जाना जाता है।

जैविक खेती का उद्देश्य:–

- मृदा की दीर्घकालीन उर्वरता को बनाए रखना।
- मृदा में जैविक कार्बन की मात्रा को बढाना जिससे मृदा की जल ग्रहण क्षमता बढ़े।
- उच्च गुणवता वाले खाद्य पदार्थों को पर्याप्त मात्रा में उत्पादित करना।
- कृशि प्रक्रिया द्वारा उत्पन्न होने वाले सभी प्रकार के प्रदूशणों को कम करना जैसे:– मृदा प्रदूशण, वाय प्रदूशण इत्यादि।
- मृदा एवम् जल संरक्षण को बढ़ावा देना।
- कृशि पद्धति में सूक्ष्मजीवों, मृदा पादपों, मृदा जीवों पौधों एवं प"ाुओं के जैविक चक्र को प्रात्साहित करना एवं बढ़ाना।
- पर्यावरण को प्रदूशण से बचाना एवं सुरक्षित करना।
- पौधो एवं पशुओं की जैव विविघता को बरकरार रखना।

जैविक खेती के मूलभूत सिद्धांत निम्नलिखित हैं:–

1 प्रकृति धरोहर हैं
2 प्रत्येक जीव के पोशण के लिए मृदा ही स्त्रोत है।
3 पौधे जिन को हम उगाना चाहते हैं के साथ–साथ मृदा को भी पोशण देना हैं।
4 उर्जा प्राप्त करने वाली लागत में पूर्ण स्वतंत्रता।
5 परिस्थितिकी का पुनरूधार।

जैविक खेती के लाभ:–

जैविक खेती के दीर्घकालिक लाभ है जो निम्नवत् है–

1 मृदा की उर्वरा भाक्ति को बढ़ाना हैं।
2 मृदा की संरचना एवं स्वास्थ्य को सुधारने एवं सही रखने में मदद करता है।
3 पौधो द्वारा ग्रहण करने वाले सभी आवश्यक पोशक तत्व की आपूर्ति होती हैं।
4 जैविक खेती सस्ती व टिकाउ होती है।
5 कृशि में उपयोग होने वाली मशीनों के प्रयोग की आवश्यकता कम होती है।
6 इसमें कृशि उत्पादन में लागत कम लगती है तथा कम उर्जा की आव''यकता होती है।
7 इसमें प्राकृतिक संसाधनों का ज्यादा से ज्यादा एवम् समुचित उपयोग होता हैं।
8 इसका कोई अवशेषिक प्रभाव मृदा एवं फसल पर नहीं होता हैं।
9 इसके द्वारा उत्पादन किये हुए उत्पाद की गुनवता अच्छी एवं टिकाऊ होती हैं।
10 इसके द्वारा उत्पादित उत्पाद के प्रयोग से मनुश्यों, पशुओं और पक्षियों पर कोई बुरा प्रभाव नहीं पड़ता हैं।
11 इसके द्वारा उत्पाद या पैदा की गई उत्पादों की किमत अधिक मिलती हैं।

जैविक खेती की प्रारूप को प्राप्त करने के लिए क्या करना होगाः–

जैविक खेती की प्रारूप को प्राप्त करने के लिए या क्रियान्वित करने के लिए निम्नलिखित क्रियाओं को अपनाना होगा–

1 कार्बनिक खादो का उपयोग।
2 जीवाणु खादो का उपयोग।
3 फसल अव''ाशो का उचित उपयोग
4 जैविक तरिको द्वारा कीट एवं रोगो का नियंत्रण।
5 फसल चक्र में दलहनी फसलों को अपनाना।
6 मृदा संरक्षण क्रियाएं अपनाना।

जैविक खेती के संसाधनः–

जैविक खेती के संसाधन निम्नलिखित हैः–

1. जैविक खाद एवं उर्वरक

(क) गोबर की खाद
(ख) हरी खाद
(ग) वर्मी कम्पोस्ट
(घ) नाडेप
(ड.) सींग खाद
(च) नीलहरीत काई
(छ) बायोगैस स्लरी
(ज) जैव उर्वरक (कल्चर)

(झ) नादेप कास्फो कमपोस्ट

2. जैविक पद्धति द्वारा बनाये गये कृषि रोग नियंत्रणः—

(क) गौ—मूत्र
(ख) नीम उत्पाद
(ग) मट्ठा
(घ) मिर्च व लहसुन
(ङ.) लकड़ी की राख
(च) ट्राइकोडर्मा

(क) गोबर की खादः—

गोबर की खाद तैयार करने के लिए मुख्य रूप से तीन अवयव गोबर,गौ मूत्र एवम् विछावन का इसतेमाल किया जाता है गोबर में 0.5—0.7%0.2%फास्फोरस तथा 0.05—0.06% पोटा''ा पाया जाता हैं। इसके अतिरिक्त कैल्सियम,मैगनि''ायम,गंधक,लोहा, मैगनीज, तांबा व जस्ता आदि तत्व सूक्ष्म मात्रा में पाये जाते है।

बनाने की विधिः— गोबर की खाद बनोने के लिए 6 मी0 लम्बा 1.5 मी0 चौड़ा तथा 1.0 मीटर गहरा गढ़्ढ़ा बनाऐं। यह गढ़्ढ़ा प''ाु बांधने के स्थान के पास होना चाहिए। इस गढ़्ढ़े में गोबर,बिछाबन,मुत्र,कुडा आदि डालते रहना चाहिए। गोबर तथा बिछाबन को अच्छी तरह मिलाकर गढ़्ढ़े आधे भाग को भरते रहे।

जब गढ़्ढ़े का आधा भाग भरते—भरते जमीन से 45cm ऊँचा हो जाए तो इसे ढेर के रूप में बनाकर मिट्टी से ढ़क दें। इस तरह एक गढ़्ढ़े में दो ढ़ेर बन जाते है। दो तीन माह में जब तक दूसरा ढ़ेर बनता है तब तक पहले ढ़ेर की खाद सड़ गलकर खेत में डालने योग्य बन जाती है। इस खाद को खेत में प्रयोग करने के लिए निकाल लें तथा इस भाग को फिर से भरना भ्ाुरू कर दें।

जब तक यह गढ़्ढे से पूरे साल भर की सड़ी गोबर की खाद प्राप्त होती रहेगीं।

प्रयोग विधिः— खेतो में 10—12 टन प्रति हेक्टेयर डाले। फसल बोने से एक माह पूर्व खेतो में छिटकर हल द्वारा जुताई कर अच्छी तरह मिट्टी में मिला दें।

सावधानियाँः—

1. बरसात एवं धूप से बचाने के लिए गढ़्ढे के उपर छाया की व्यवस्था करनी चाहिए।
2. खाद बनाने वाली स्थान ऊँचा होना चाहिए।
3. खाद में नमी की मात्रा बनाऐ रखना चाहिए ।
4. खाद को भ्ाुरू के तीन चार माह तक इसकी पलटाई न करें।
5. खाद को पक्के फा''र्ा पर इक्ट्ठा करें।

(ख) हरी खाद

मृदा की भौतिक एवं रासायनिक द''ाा में सुधार तथा इसकी उर्वरता एवं उत्पादकता बढाने के उद्दे''य से दलहनी अथवा अदलहनी फसलों को वानस्पतिक वृद्धिकाल में उपयुक्त समय पर जुताई करके मिट्टी में अपघटन के लिए दबाना ही हरी खाद कहलाता है जो मृदा में नाइट्रोजन या जीवां''ा की मात्रा स्थिर रखने एवं बढ़ाने में सहायक होता है।

हरी खाद के लिए उपयुक्त फसलें–

क्र. सः	फसल का नाम	मौसम	हरी खाद (क्वि / है0)	नत्रजन उपलब्धता (कि0ग्रा0 / है)
1	सनई	खरीक	152	84.0
2	ढैंचा	"	144	77.1
3	ग्वार	"	144	62.3
4	ज्वार	"	200	56.0
5	मूँग	"	57	38.6
6	सेंजी	रबी	206	134.4
7	बरसीम	"	111	60.7
8	खेसारी	"	88	61.4
89	मसूर	"	56	37.0
10	मटर	"	210	67.0

संदर्भः यावलकर के.एस.अग्रवाल जे.पी. एवं बोकडे एस. 2011, मैन्योर्स एण्ड फर्टीलाइजर्स,11 एडि''ान

हरी खाद बनाने की विधिः–

(i) हरी खाद की स्थानिक विधिः– इस विधि में हरी खाद की फसल को उसी खेत में उगाते है जिसमें हरी खाद का उपयोग करना है। यह विधि समुचित वर्शा अथवा सुनि''चत सिंचाई वाले क्षेत्रों में अपनाई जाती है। इस विधि में फूल आने से पूर्व वानस्पतिक वृद्धि काल (45–60 दिन) में हरी खाद की फसल को मिट्टी में पलट दिया जाता है। मिश्रित रूप से बोई हरी खाद की फसल को उपयुक्त समय पर जुताई द्वारा खेत में दबा दिया जाता है।

(ii) हरी पत्तियों की हरी खादः– इस विधि में खाद की फसलो की पत्तियों एवं कोमल भााखाओं को तोड़कर खेत में फैलाकर जुताई द्वारा मृदा में दबा दिया जाता है, जो मिट्टी में थोड़ी नमी होने पर भी सड़ जाती है। यह विधि कम वर्शा वाले क्षेत्रों में उपयोग की जाती है।

ढैचा हरी खाद

हरी खाद की गुणवता बढ़ाने के उपायः–

(i) उपयुक्त फसल का चुनावः– जलवायु एवं मृदा द''ााओं के आधार पर उपयुक्त फसल का चुनाव करना आव''यक होता हैं। जलमग्न तथा सामान्य मृदाओं में सनई एवं ढ़ैचा दोनों फसलों से अच्छी गुणवता वाली हरी खाद प्राप्त होती हैं।

(ii) हरी खाद की खेप में पलटाई का समयः– अधिकतम हरा पदार्थ प्राप्त करने के लिए फसलों की पलटाई या जुताई बुआई के 6–8 सप्ताह बाद करनी चाहिए। आयु बढ़ने से पौधों के भााखाअें म रे''ाे की मात्रा बढ़ जाती हैं, जिससे जैव पदार्थ के अपघटन में अधिक समय लगता हैं।

(iii) हरी खाद के प्रयोग के बाद अगली फसल की बुवाई या रोपाई का समयः– जिन क्षेत्रों में धान की खेती होती हैं, वहा जलवायु नम तथा तापमान अधिक होने से अपधटन क्रिया तेज होती है। अतः खेत में हरी खाद की फसल की आयु 40–45 दिन से अधिक नहीं होनी चाहिए।

(iv) समुचित उर्वरक प्रबंधन :– कम उर्वरता वाली मृदाओं में नत्तजन धारी उर्वरकों का 15–20 कि0ग्रा0 / हे0 का प्रयोग उपयोगी होती है; राइजोबियम कल्चर का प्रयोग करने से नत्तजन स्थिरीकारक सहजीवी जीवाणओं की क्रिया''ाीलता बढ़ जाती है।

(ग) वर्मी कम्पोस्ट :–

सड़न”ील जैविक पदार्थों, जैविक व्यथ पदार्थों, वानस्पतिक पदार्थों के अव”ोशों एवं गोबर को सतह पर पाये जाने वाले (एपिजाइक) तथा सतह के अंदर पाये जाने वाले (एनिसिक) केंचुए के भक्षण, पाचन तथा निकासन क्रियाओं द्वारा बनायी गई जैविक खाद को केंचुआ खाद या वर्मीकम्पोस्ट कहते हैं। इसमें 10–20%ऑर्गेनिक कार्बन, 1–2.5%नत्रजन, 1–1.5%फास्फोरस तथा 2–3%पोट”ा के साथ–साथ सोडियम, कॉपर, कैल्”ायम, जिंक, मैग्नी”ायम, सल्फर, कोबाल्ट, आयरन और बोरोन की संतुलित मात्रा पाई जाती हैं। वर्मी कम्पोस्ट बनाने हेतू निम्नलिखित केंचुए की प्रजाति का चयन करना चाहिए–

- आईसीनिया फेटिडा
- यूड्रिलस यूजिनी
- पेरियोनिक्स एक्सकेवेट्स
- डाइकोगा एवीनन्सिस आदि।

वर्मी कम्पोस्ट

तैयार करने की विधि :–जिस कचरे से खाद तैयार किया जाना है उसमें से कांच–पत्थर, धातु के टुकड़े अच्छी तरह अलग करने के प”चात वर्मी कम्पोस्ट तैयार करने के लिये 10 x 4

फीट का प्लेटफार्म जमीन से 6 से 12 इंच तक ऊंचा तैयार किया जाता है। इस प्लेटफार्म के ऊपर 2 रद्दे ईंट जोड़े जाते हैं तथा प्लेटफार्म के ऊपर छाया हेतु झोपरी बनाई जाती है। प्लेटफार्म के ऊपर सुखा चारा, 3–4 क्विंटल गोबर की खाद तथा 7–8 क्विंटल कूड़ा–करकट बिछाकर झोपड़ीनुमा आकार देकर अधपका खाद तैयार हो जाता है जिसकी 10–15 दिन तक झारे से सिंचाई करते हैं, जिससे कि अधपके खाद का तापमान कम हो जाए। इसके प''चात 100 वर्ग फीट म 10 हजार केंचुए के हिसाब से छोड़े जाते है। केंचुए छोड़ने के प''चात टंकी को जूट के बोर से ढ़क दिया जाता है, और 4 दिन तक झारे से सिंचाई करते रहते हैं ताकि 45–50 प्रति''ात नमी बनी रहे। ध्यान रखे कि अधिक गीलापन रहने से हवा अवरूद्ध हो जाएगी और सूक्ष्म जीवाणु तथा केंचुए मर जायेंगे या कार्य नहीं कर पायेंगे । 45 दिनों के प''चात पानी डालना बंद कर दिया जाता है और जूट के बोरों को हटा दिया जाता है। बोरों को हटाने के बाद ऊपर का खाद सूख जाता है तथा केंचुए नीचे नमी में चले जाते है। तब ऊपर की सूखी हुई वर्मी कम्पोस्ट को अलग कर लेते हैं। इसके 4–5 दिन प''चात पुनः टंकी की ऊपरी खाद सूख जाती है और सूखी हुई खाद को ऊपर से अलग कर लेते हैं। इस तरह 3–4 बार में पूरी खाद टंकी से अलग हो जाती है और आखिरी में केंचुए बच जाते हैं जिनकी संख्या 2 माह में टंकी में डाले गये केंचुओं की संख्या से, दोगुनी हो जाती हैं। ध्यान रखें कि खाद हाथ से निकालें, कुदाल या खुरपी का प्रयोग न करें। टंकी से निकाले गये खाद को छाया में सुखा कर तथा छानकर छायादार स्थान में भण्डारित किया जाता है। वर्मी कम्पोस्ट की मात्रा गमलों में 100 ग्राम, एक वश के पौधों में एक किलोग्राम तथा फसल में 6–8 क्विंटल प्रति एकड़ की आव''यकता होती है। वर्मी वॉ''ा का उपयोग करते हुए प्लेटफार्म पर दो निकास नालियां बना देना अच्छा होगा ताकि वर्मी वॉ''ा को एकत्रित किया जा सके।

वर्मी कम्पोस्ट का उपयोगः–

- खेतों तथा बागवानी में।
- फलदार पेड़ों तथा वन पेड़ों में।
- किचन गार्डन तथा गमलों में।

खाद की मात्राः–

- खेतों में 6–10 टन प्रति हेक्टेयर।
- पेड़ों में 5–10 किलों प्रति पेड़।
- गमलों में 100 ग्राम प्रति गमला।
- भााक वाटिका में 4 भाग वर्मी कम्पोस्ट व 1 भाग मिट्टी तथा 2 भाग की खाद।
- स्ब्जी की फसलों में 5–10 टन प्रति हेक्टेयर।

वर्मीकम्पोस्ट की प्रयोग विधिः–

1. **सब्जी वर्ग की फसलें**ः– खेत की तैयारी/जुताई करते समय लगभग 10 टन वर्मी कम्पोस्ट प्रति हेक्टेयर की दर से डालकर भूमि में अच्छी तरह मिलायें, तत्प''चात सब्जी वर्ग की फसलो की बुवाई/रोपाई करें।
2. **अनाज व अन्य मौसमी फसलें**ः–भूमि में पर्याप्त नमी की मात्रा होने पर 5 से 8 टन वर्मी कम्पोस्ट प्रति हेक्टेयर की दर से फसलों की बुआई पूर्व जुताई करते समय एवं भााम के समय एक समान खेत में बिखेर कर प्रातः हल/कल्टीवेटर चलाकर भूमि में मिला दें और इसके बाद फसलों की बुआई करें।
3. **बागवानी/फलदार वृक्षों के लिए** ः– फलदार वृक्षों से अच्छा फल उत्पादन लेने कि लिए वृक्षों के चारों ओर प्रति वृक्ष 5 कि.ग्रा. वर्मी कम्पोस्ट तथा 5 कि.ग्रा. अच्छी तरह सड़ी हुई गोबर की खाद डालकर मिट्टी में मिलायें और सिंचाई कर उपयुक्त नमी बनाये रखें।
4. **फूल व गमलों के पौधे के लिए**ः– दो भाग उपजाऊ व खेत की मिट्टी तथा एक भाग वर्मी कम्पोस्ट डालकर गमलों में भरें, तत्प''चात् फूल व अन्य पसंद के पौधे की गमलों में रोपाई करें ऐसा करने से अच्छा उत्पादन मिलता हैं

(घ) नाडेपः–

यह विधि ग्राम पूसर जिला यवतमाल महाराश्ट्र के नारायम देवराव पण्डरी पाण्डे द्वारा विकसित की गई थी, इसलिए इसे नाडेप कहते हैं।

इस विधि के द्वारा कम से कम गोबर का उपयोग करके अधिक मात्रा में अच्छी खाद तैयार की जा सकती है। टंकी भरने के लिये गोबर, कचरा(बायोमास) और बारीक छनी हुई मिट्टी की आव''यकता होती है। जीवां''ा को 90 से 120 दिन तक पचाने में वायु संचार प्रक्रिया का उपयोग किया जाता है। इसके द्वारा उत्पादित की गई खाद में प्रमुख रूप से 0.5 से 1. 5%नत्रजन, 0.5 से 0.9%स्फुर एवं 1.2 से 1.4%पोटा''ा के अलावा अन्य सूक्ष्म पोशक तत्व भी पाये जाते हैं।

निम्नानुसार विभिन्न प्रकार के नाडेप टंकियों से नाडेप कम्पोस्ट तैयार किया जा सकता है–

(1) पक्का नापेड

(2) कच्चा नापेड (भू नाडेप)

(3) टटिया नाडेप

नाडेप

(1) पक्का नापेडः– पक्का नाडेप ईटों के द्वारा बनाया जाता है। नाडेप टंकी का आकार 10 फीट लंबा, 6 फीट चौड़ा और 3 फीट ऊंचा या 12x5x3घन फीट का बनाया जाता है। ईटों को जोड़ते समय तीसरे, छठवें एवं नवें ईटों में मधुमक्खी के छत्ते के समान 6–7'' के ब्लाक/छेद छोड़ दिए जाते हैं, जिससे टंकी के अन्दर रखे पदार्थ को बाह्‌य वायु मिलती रहे। इससे एक वर्श में एक ही टंकी से तीन बार खाद तैयार किया जा सकता है।

(2) कच्चा नापेड (भू नाडेप):–कच्चा नापेड में परम्परागत तरीके के विपरीत बिना गड्ढा खोदे जमीन पर एक निि"चत आकार (12फीटX5फीटX3फीट अथवा 10 फीट X 6फीट X 3फीट) का खाका देकर व्यवस्थित ढ़ेर बनाया जाता है। इसकी भराई नापेड टंकी के अनुसार ही की जाती है। इस प्रकार लगभग 5 से 6 फीट तक सामग्री जम जाने के बाद एक आयताकार व व्यवस्थित ढ़ेर को चारों ओर से गीली मिट्टी व गोबर से लीप कर बंद कर दिया जाता है। बंद करने के दूसरे अथवा तीसरे दिन जब गीली मिट्टी कुछ कड़ी हो जाये तब गोलाकार अथवा आयताकार टीन के डिब्बे से ढ़ेर की लंबाई व चौड़ाई में 9–9 इंच के अंतर पर 7–8 इंच के

गहरे छिद्र बनाये जाते हैं। छिद्रों से हवा का आवागमन होता है और आव''यकता पड़ने पर पानी भी डाला जा सकता है, ताकि बायोमास में पर्याप्त नमी रहे और विघटन क्रिया अच्छी तरह से हो सके। इस तरह से भरा बायोमास 3 से 4 माह के भीतर भली–भांति विघटित हो जाता है तथा अच्छी तरीके से पची हुई, भुरभुरी दुर्गन्ध रहित भूरे रंग की उत्तम गुणवत्ता की जैविक खाद तैयार हो जाती है।

(3) टटिया नाडेपः– टटिया नाडेप भी भू–नापेड की तरह ही होते हैं, किन्तु इसमें आयताकार व व्यस्थित ढ़ेर को चारों ओर से लेप देने की जगह इसे बांस एवं बे''रम बेहया की लकड़ी एवं तुअर के डंठल आदि स टाटिया बनाकर चारों ओर से बंद कर दिया जाता हैं। इसमें हवा का आवागमन स्वभाविक रूप से छेद होने के कारण अपने आप ही होता रहता है।

नाडेप बनाने की विधिः–

टंकी भरने की विधिः– खाद सामग्री पूरी तरह एकत्रित करने के बाद नीचे बताए क्रमानुसार ही टंकी भरें। नाडेप पद्धति में खाद सामग्री को एक ही दिन में या ज्यादा से ज्यादा 48 घंटे में पूरी तरह से टंकी में भरकर सील कर दें।

प्रथम भराईः–टंकी भरने से पहले उसके अंदर की दीवार एवं फ''ïस गोबर व पानी के घोल से अच्छी तरह गीला कर दें।

पहली परतः–वानस्पतिक पदार्थ – कचरा, डंठल, टहनियां, पत्तियाँ आदि पूरे टंकी में छः इंच की ऊँचाई तक भर दें। इस प्रकार 30 घनफीट में 100 से 110 किलो वानस्पतिक सामग्री आएगी। इन परतों में 3 से 4 प्रति''ात नीम या पला''ा की हरी पत्तियाँ मिलाना लाभप्रद होगा, जिससे दीमक पर नियंत्रण होगा।

दूसरी परतः–गोबर का घोल– 125 से 150 लीटर पानी में 4 किलों गोबर मिलाकर पहली परत के ऊपर इस तरह छिड़कें कि पूरी वानस्पतिक सामग्री अच्छी तरह भीग जाए। गर्मी में पानी की मात्रा अधिक रखें। यदि बायोगैस की स्लरी उपयोग करें तो 10 लीटर स्लरी को 125 से 150 लीटर पानी में घोल कर छिड़कें।

तीसरी परतः–भीगी हुई दूसरी परत के ऊपर, साफ छनी हुई मिट्टी 50 से 60 किलो के लगभग समान रूप से बिछा दें। परतों के इसी क्रम में टंकी को उसके मुँह से 1.5 फीट ऊपर तक झोपड़ीनुमा आकार में भरें। सामान्यतः 11–12 परतों में टंकी भर जाएगी। टंकी भरने के बाद टंकी सील करने के लिए 3 इंच मिट्टी (400 से 500 किलो) की परत जमा कर गोबर से लीप दें। इस पर दरारें पड़े तो उन्हे पुनः गोबर से लीप दें।

द्वितीय भराईः– 15–20 दिन बाद टंकी में भरी सामग्री सिकुड़ कर 8–9 इंच नीचे चली जाएगी तब पहली भराई की तरह ही वानस्पतिक पदार्थ, गोबर का घोल एवं छनी मिट्टी की

परतों से टंकी को उनके मुँह से 1.5 फीट ऊपर तक भरकर पहले भराव के समान ही सील कर लीप दें।

सावधानियां:—नाडेप कम्पोस्ट को पूर्णतः पचने के लिये 90 से 120 दिन लगते है। इस दौरान नमी बनाए रखने के लिए एवं दरारे बंद करने के लिए गोबर पानी का घोल छिड़कते रहें व दरारें न पड़ने दें। घास आदि उगे तो उसे उखाड़ द व नमी कायम रखें। कड़ी धूप हो तो घास—फूस से छाया कर दें।

(ड.) सींग खादः—

सींग खाद निम्नलिखित प्रकार के होते हैं।

1. **गाय का सींग खाद**:— गाय के सींग के खोल में दूध देने वाली गाय का ताजा गोबर दबा—दबा कर पूरा भरें। इसे भूमि में 6 माह तक सूर्य क दक्षिणायन के दिनों में भाुक्ल पक्ष में भारद ऋतु (सितम्बर—अक्टूबर) में 60 सेमी गहरा गाडें। फिर अव''ोशों एवम् मृदा तत्व (ह्यूमस) बनाने वाले सूक्ष्म जीवों के एकत्रित होने हेतु छोड़ दें। इस गोबर की वि''ोशताएँ केंचुए खाद के समान होती है। खुदाई (मार्च—अप्रैल) चत्र नवरात्रि के कृशण पक्ष में सूर्य जब उत्तरायण हो तब कर ले। 30—35 ग्राम सींग खाद को 3 लीटर पानी में, घड़ी की दि''ाा एवम् विपरीत दि''ाा में धुमाकर मिला लें। बुआई से पूर्व अंतिम जुताई के समय, जमीन पर छिडकाव करें। इसके प्रयोग से भूमि में नाइट्रेट नत्रजन की मात्रा में अभिवृद्धि 0.06—1.7%होती है। ह्यूमस बनाने की प्रक्रिया में वृद्धि तथा जड़ों का अच्छा विकास होता हैं।
2. **सींग सिलिका**:—गाय के सींग में सिलिका (चकमक पत्थर) 500—600 ग्राम महीन चूर्ण भरकर, भूमि में 6 माह तक गाड़कर उपचारित करें। चैत्र नवरात्रि के समय मार्च—अप्रैल माह में दिन के समय जमीन में गाड़े और अक्टुबर—नवम्बर माह में निकालें। सींग सिलिका चूर्ण का 1 ग्राम चूर्ण13 लीटर पानी में मिलाकर एक घंटे तक घड़ी की दि''ाा एवम् विपरीत दि''ाा में धुमाकर मिला लें। इसके प्रयोग से तने एवम् पत्तियों के बढ़वार एवम् प्रका''ा सं''ालेशण प्रक्रिया में वृद्धि होती है। प्रका''ा सं''लेशण बढ़ने से अच्छी उपज तथा फल एवम् अनाज के पोशक तत्वों की गुणवत्ता में वृद्धि होती है।

(च)नील हरीत काईः—

नील हरित काई प्रमुख रूप से कुछ ऐसे वि''ाश सूक्ष्म जीवाणुओं का समूह है, जो वायु मण्डल में उपस्थित गैसीय नत्रजनत तत्व को स्थिर व स्थापित करने की क्षमता रखते हैं। यह एक वि''ाश प्रकार की काई (एलगी) होती है। इसकी विभिन्न प्रजातियां पायी जाती हैं, जिनमें

नॉस्टाक, एनाबिना, आइलोसिस,साइट्रोनिया आदि प्रमुख हैं। नत्रजन स्थिरीकरण केवल उन्हीं भौवालों द्वारा किया जाता है जिनमें एक वि''ाश प्रकार को''िाका (हेट्रोसिस्ट) होती है। इस प्रकार के भौवाल वायुमंडलीय नत्रजन का स्थिरीकरण तो करते ही हैं, साथ–साथ अनेक प्रकार के लाभकारी एवं आव''यक रसायनिक पदार्थ जैसे विटामिन, वृद्धि नियामक, अमीनो अम्ल इत्यादि भी अवमुक्त करते हैं। ?

नील हरित काई का प्रयोग प्रमुख रूप से धान की फसल में किया जाता है, जिससे लगभग 20–25 किलोग्रम नत्रजन प्रति हेक्टेयर की दर से पूर्ति होती है। धान की फसल की रोपाई के एक से दो सप्ताह (7–70 दिन) के अंदर नील हरित भौवाल को पूरे खेत में बराबर मात्रा में बिखेर देना चाहिए। ध्यान रखने की बात यह है कि नील हरित भौवाल के प्रयोग के बाद कम से कम 15–20 दिन तक फसल में पानी भरा रहना चाहिए, जिससे भौवाल पूरे खेत में फैल सके। नील हरित भौवाल के प्रयोग से धान में 25–30 किलोग्राम उर्वरक नत्रजन के बराबर नत्रजन मिलती है और उपज में 10–15 प्रति''ात की वृद्धि होती है। इसके प्रयोग से मृदा में स्फुर की उपलब्धता बढ़ती है तथा अम्लीय भूमि में आयरन की विशाक्तता कम होती है।

इसे तैयार करने के लिए कच्चा अथवा पक्का जमीन पर 12x4x1घन फीट आकार की टंकी का प्रयोग किया जाता है। कच्ची टंकी में पानी के रिसाव को रोकने के लिए पालीथीन बिछाई जाती है। टंकी तैयार होने के प''चात 2–3 दिन में जब पानी साफ हो जाए तब उसमें 3 किलोग्राम सुपर फास्फेट, 1/2 किलोग्राम चूना तथा 1 पैकेट (250 किलोग्राम) नील हरित काई का मदर कल्चर डालते है। जब तापमान 30–45 सेन्टीग्रेड के बीच हो तभी नील हरित काई का उत्पादन करना चाहिए। यह तापमान फरवरी–मार्च से जून–जुलाई माह में प्राप्त हो जाता है। सामग्री डालने के 4–5 दिन बाद थोड़ा–थोड़ा काई बनना प्रारंभ हो जाता है। 10–15 दिनों के प''चात् पानी के ऊपर नील हरित काई की एक तह निर्मित होती है, जिसे अलग कर छाया में सुखाते हैं। यही सूखी हुई काई नील हरित काई का मदर कल्चर कहलाता है जिसे पुनः नील हरित काई तैयार करने के लिय प्रयोग किया जा सकता है। इस तरह ऊपर तैरती हुई काई को अलग करते जाते हैं एवम् छाया में सुखाकर एकत्रित करते रहते हैं। सूखो हुई 8–10 किलोग्राम नील हरित काई को 50 किलोग्राम गोबर की खाद में प्रति हेक्टेयर के हिसाब से धान की खेत में रोपाई के समय छिडक देते हैं।

नील हरीत काई

(छ) बायोगैस स्लरीः–

बायोगैस गैस के रूप में एक स्वच्छ एवं सस्ता ईंधन है जिसका निर्माण प''ाुओं के गोबर से पाचन क्रिया द्वारा एक वि''ोश प्रकार के संयंत्र में किया जाता है। इससे निकलने वाली गैस में 55 से 70 प्रति''ात तक ज्वलन''ील मीथेन गैस होती है। संयंत्र में होने वाली पाचन क्रिया से गोबर की उर्वरा''ाक्ति बढ़कर लगभग डेढ़ गुना हो जाती है।

ग्रामीण क्षेत्र में प''ाुओं के गोबर को पाचन क्रिया द्वारा 25 प्रति''ात ठोस पदार्थ का रूपांतर गैस के रूप में तथा 75 प्रति''ात ठोस पदार्थ का रूपांतर खाद के रूप में करने वाले वि''ोश प्रकार के संयंत्र को ''गोबर गैस'' या ''बायोगैस'' संयंत्र कहा जाता है। इस संयंत्र से न केवल एक अति उत्तम खाद मिलती है बल्कि घरेलू ईंधन की जरूरतों के लिए एक स्वच्छ एवं उच्च कैलोरी वाला ईंधन भी प्राप्त होता है।

गैस संयंत्रों के प्रकार

प्रमुख रूप से बायोगैस संयंत्र तीन प्रकार के होते हैं–

- तैरते हुए गैस होल्डर वाला के.व्ही.आई.सी. प्रकार का संयंत्र।
- स्थिर गुंबद वाला जनता मॉडल का संयंत्र।
- सं''ोधित स्थिर गुंबद वाला दीनबन्धु संयंत्र।

इसके अतिरिक्त प्रगति मॉडल के.व्ही.आई.सी. प्रकार निर्मित लोहे सीमेंट डाइजेक्टर युक्त संयंत्र, बेगटाइप डाइजेस्टर तथा फाईबर ग्लास के ड्रम युक्त संयंत्र भी लगाए जा सकते हैं। संयंत्र के प्रकार का चयन करते समय यह ध्यान रखना चाहिए कि यदि चयनित संयंत्र लगाना चाहिए। यदि वर्श में गोबर की उपलब्धता घटने की संभावना रहती हो तो के.व्ही.आई.सी प्रकार के संयंत्र को प्राथमिकता देनी चाहिए।

गोबर गैस संयंत्र के लाभ

1. गोबर गैस संयंत्र से प्राप्त होने वाली खाद फसल की पैदावार बढ़ाने के लिए बहुत ही लाभकारी है।
2. ठोस संयंत्र से प्राप्त खाद को तुरंत उपयोंग में लाया जा सकता है क्योंकि यह संयंत्र से पूर्ण खाद बन कर ही बाहर आती है।
3. इस संयंत्र से खाद के साथ–साथ स्वच्छ एवं उच्च कैलोरी वाला ईंधन भी प्राप्त होता है।
4. इसके द्वारा प्राप्त गैस के उपयोग से लकड़ी, कोयला एवं मिट्टी तेल की बचत होती है।
5. ग्रामीण महिलाओं एवं बच्चों को जंगल से लकड़ी एकत्र करने एवं गोबर के उपले बनाने से छुटकारा मिलता है।

बायोगैस स्लरी के लाभ/गुण

1. यह खाद कम से कम समय में तैयर हो जाता है।
2. यह खेती के लिए एक उत्तम खाद है, क्योंकि इसमें गोबर की उर्वरा''ाक्ति बढ़कर लगभग डेढ़ गुणा हो जाती है।
3. इसमें नाइट्रोजन 1.5 से 2 प्रति''ात, फास्फोरस 1 प्रति''ात तथा पोटा''ा 1 प्रति''ात तक होता है।
4. इस खाद में मुख्य पोशक तत्वों के अतिरिक्त सूक्ष्म पोशक तत्व एवं ह्यूमस भी होता है।
5. मिट्टी की जल धारण क्षमता बढ़ती है।
6. मिट्टी में सूक्ष्म जीवाणुओं की संख्या में वृद्धि होती है।
7. संयंत्र से निकली पतली स्लरी में 20 प्रति''ात नाइट्रोजन अमोनिकल नाइट्रोजन के रूप में होता है। अतःइसको खेत में नालियां बनाकर अथवा सिंचाई के पानी में मिलाकर खेत में दिया जाये तो इसका लाभ फसल पर तुरंत होता है।

बायोगैस स्लरी को को सुखाना

संयंत्र से निकले खाद में पानी की मात्रा अधिक (लगभग 90 प्रति''ात) होती है। इसकी वजह से इसे खत तक ले जाने में कठिनाई होती है। इसे सुखाने में काफी समय भी लगता है। अतः इसे सुखाने के लिए या तो रेत की सतह पर फैला कर धूप में सुखाया जाता है या विज्ञान केन्द्र वर्धा द्वारा विकसित फिल्ट्रे''ान टैंक विधि द्वारा सुखाया जाता ह। इस विधि में 2 घनमीटर के संयंत्र के लिए 1.65 x 0.6 x 0.5 घन मीटर के दो सीमेंट टैंक बनाकर संयंत्र के निकास द्वार से जोड़ दिया जाता है। इसके दूसरी तरफ पानी के निकासी के लिए एक पक्का गड्ढा बनाया जाता है। फिल्ट्रे''ान टैंक के निचले सतह पर कचड़े की 15–20 से.मी. की परत बिछाई जाती है। जब स्लरी इस टैंक में गिरता है तो स्लरी का पानी कचड़े में छानकर गड्ढे में एकत्र हो जाता है। जब पहला टैंक 15–20 दिनों में भर जाए तो इसे ढक कर दूसरे टैंक में स्लरी निकास जोड़ दिया जाता है। इस तरह पहलें टैंक में जमा खाद को निकाल कर खेतों में डाला जा सकता हैं। गड्ढे में एकत्र पानी को या तो गोबर के साथ मिलाकर पुनः संयंत्र में डाला जा सकता हैं या इसे पानी में सभी पोशक तत्व घुलन''ील अवस्था में होते है अतः पौधों का विकास अच्छा होता है, कीड़े मरते है तथा फसल उत्पादन अच्छा होता है। इस खाद में यदि नीम की खलियों को मिलाकर उपयोंग किया जायें तो यह एक अच्छे खाद के अलावा कीटना''ाकों का भी काम करता है।

(ज) जैव उर्वरक (कल्चर)

जैव उर्वरक वास्तव में ऐसे सूक्ष्म जीवी होते है जिनकी संख्या को जब कृत्रिम रूप से बढ़ाकर विभिन्न प्रकार के कल्चर (टीका) के रूप में प्रयोग में लाया जाता है तो ये सूक्ष्म जीवी मिट्टी में या पौधों की जड़ों में रहकर सक्रिय योगदान द्वारा पौधों को आव''यक पोशक तत्व उपलब्ध कराते हैं। इस प्रकार ये सूक्ष्मजीवी वायुमण्डलीय नाइट्रोजन या भूमि में उपलब्ध फास्फोरस को पौधे के उपयोग लायक बनाते हैं तथा पौधों की वृद्धि एवं उपज बढ़ाने में सक्रिय योगदान देते हैं।

जैव उर्वरकों के प्रकार

मुख्यतः जैव उर्वरक दो प्रकार के होते हैंः–

1. नत्रजन यौगिकीकरण वाले जैव उर्वरक

इस प्रकार के जीवाणु खाद में ऐसे जीवाणु होते हैं जो वायुमंडल में उपस्थित नाइट्रोजन गैस का यौगिकीकरण करके पौधे के लिए नाइट्रोजन पोशक तत्व (अमोनिया) उपलब्ध कराते हैं जिसे पौधे आसानी से अपने भोजन के रूप म प्रयोग करते हैं। नाइट्रोजन उपलब्ध कराने वाली प्रमुख जीवाणु खादें निम्नलिखित हैं–

1.राइजोबियम कल्चर– दलहनी फसलों के लिए

2.एजोटोबैक्टर – गेहूँ, मक्का, बार्ली, जौ, कपास, तिलहन, फल, एवं सब्जी वाली फसलों के लिए।

3.एजोस्पाइरिलम – गेहूँ, मक्का, बार्ली, जौ, कपास, तिलहन, फल, फूल, एवं सब्जी वाली फसलों के लिए।

4.नीलहरित भौवाल – धान के लिए।

5.एजोला – धान के लिए।

2. फास्फोरस धालक जैव उर्वरक

इस प्रकार के खाद में ऐसे जीवाणु होते हैं जो मृदा में उपस्थित अघुलन”ील फास्फोरस को घुलन”ील रूप में परिवर्तित कर पौधों को उपलब्ध कराता है।

जैविक खाद एवं रासायनिक खाद की तुलना

जैविक खाद	रासायनिक खाद
1. अत्यधिक सस्ता होतो है।	काफी महंगे होते हैं।
2. मिट्टी की उर्वरता भाक्ति को बढ़ाता है।	निरंतर उपयोग से मिट्टी को बंजर बनाता है।
3. जल, जमीन व हवा स्वच्छ होते हैं	प्रदूशण बढ़ाता है।
4. खेती के लिए पानी की आव”यकता कम करती है।	अधिक पानी की आव”यकता होती है।
5. कीटना”ाकों के प्रयोग में कमी लाता है।	कीटना”ाकों की अधिक आव”यकता पड़ती है।
6. फसल, सब्जी एवं फलों के स्वाद में बढ़ौत्तरी करता है।	स्वाद में कमी आती है।
7. सभी तत्व एवं सूक्ष्म तत्व मौजूद है। अतः मिट्टी को संतुलित भोजन मिलता है।	प्रत्येक तत्व के लिए अलग–अलग खाद का प्रयोग करना पड़ता है।
8. किसान अपने खेत पर स्वयं तैयार कर सकते हैं।	बाहर से आयात करना पड़ता है।
9. रोजगार परक है।	

	बेरोजगारी वाला है।

(झ) नादेप फास्फो कम्पोस्टः—

यह नाडेप के समान ही कम्पोस्ट खाद तैयार करने की विधि है। अंतर केवल इतना है कि इसमें अन्य सामग्रियों के साथ रॉक फास्फेट का उपयोग किया जाता है जिसके फलस्वरूप कम्पोस्ट में फास्फेट की मात्रा बढ़ जाती है। प्रत्येक परत के ऊपर 12 से 15 किलो रॉक फास्फेट की परत बिछाई जाती है, भोश परत दर परत पक्के नाडेप टंकी अनुसार ही टंकी की भराई की जाती है और गोबर मिट्टी से लीप कर सील कर दिया जाता है। एक टंकी में करीब 150 किलो रॉक फास्फेट की आव"यकता होती है।

2. जैविक पद्धति द्वारा रोग नियंत्रणः—

(क)गौमूत्रः—

गौमूत्र को कांच की भी"ाी में भरकर धूप में रख देते हैं। जितना पुराना गौमूत्र होगा उतना अधिक असरकारी होगा। 12—15 मि.ली. गौमूत्र प्रति लीटर पानी में मिलाकर स्प्रेयर पंप से फसलों में बुआई के 15 दिन बाद, प्रत्येक 10 दिवस में छिड़काव करने से फसलों में रोग एवं कीड़ो के प्रति प्रतिरोधी क्षमता विकसित होती है, जिससे प्रकोप की संभावना कम हो जाती है।

(ख) नीम के उत्पादः—

नीम के उत्पाद निम्नलिखित है—

(i)नीम पत्ती का घोलः— नीम की 10—12 किलो पत्त्यिाँ, 200 लीटर पानी में 4 दिन तक भिगोयें। पानी हरा पीला होने पर इसे छानकर, एक एकड़ की फसल पर छिड़काव करने से इल्ली की रोकथाम होती है। इस औशधिकी तीव्रता को बढ़ाने हेतु बे"ारम, बेहया, धतूरा, तम्बाकू आदि के पत्तों को मिलाकर काढ़ा बनाने से औशधि की तीव्रता बढ़ जाती है और यह दवा कई प्रकार के कीड़ों को नश्ट करने में उपयोगी सिद्ध होती है।

(ii)नीम की निबोलीः— नीम की निबोली 2 किलो लेकर महीन पीस लें। इसमें 2 लीटर ताजा गौ मूत्र मिला लें। इसमें 10 किलो छाछ मिलाकर 4 दिन रखें और 200 लीटर पानी में मिलाकर खेतों में फसल पर छिड़काव करें।

(iii)नीम की खलीः— जमीन में दीमक तथा व्हाइट ग्रब एवं अन्य कीटों की इल्लियाँ तथा प्यूपा को नश्ट करने तथा भूमि जनित रोग विल्ट (उगरा) आदि के रोकथाम के लिये किया जा

सकता है। 6–8 क्विंटल प्रति एकड़ की दर से अंतिम जुताई करते समय बारीक कूटकर खेत में मिलावें।

(ग) मट्ठाः–

मट्ठा,छाछ,मही आदि नाम से जाना जाने वाला पदार्थ मनुश्यों के लिए अनेक प्रकार से गुणकारी है और इसका उपयोग फसलों मे कीट तथा व्याधि से उपचार के लिये लाभप्रद है। मिर्ची, टमाटर आदि जिन फसलों में चुर्रामुर्रा या कुकड़ा रोग आता है, उसके रोकथाम हेतु एक मटके में छाछ डालकर उसका मुँह पोलीथिन से बांध दे एवं 30–45 दिन तक उसे मिट्टी में गाड़ दें। इसके प"चात् छिड़काव करने से कीट एवं रोगों से सुरक्षा होती है। 100–150 मि.ली. छाछ 15 लीटर पानी में धोल कर छिड़काव करने से कीट–व्याधि का नियंत्रण होता है। यह उपचार सस्ता, सुलभ, लाभकारी होने से कृशकों में लोकप्रिय है।

(घ) मिर्च व लहसुनः–मिर्च/लहसुन आधा किलो हरी मिर्च, आधा किलो लहसुन पीसकर चटनी बनाकर पानी में घोल बनायें। इसे छानकर 100 लीटर पानी में घोलकर फसल पर छिड़काव करें। 100 ग्राम साबुन पावडर भी मिलावें, जिससे पौधों पर घोल चिपक सके। इसके छिड़काव करने से कीटो का नियंत्रण होता हैं।

(ङ.) लकड़ी की राखः–1 किलो राख में 10 मि.ली. मिट्टी का तेल डालकर पाउडर का बुरकाव 25 किलो प्रति हेक्टेयर की दर से करने पर एफिड्स एवं पंपकिन बीटल का नियंत्रण हो जाता हैं।

(च) ट्राइकोडर्माः–ट्राइकोडर्मा एक ऐसा जैविक फफूंद ना"ाक है, जो पोधों में मृदा एवं बीज जनित बीमारियों को नियंत्रित करता है। ट्राइकोडर्मा एक किफायती एवं पर्यावरण मैत्रीय जीवना"ी है तथा विभिन्न रोगों की रोकथाम में सक्षम होता हैं। बेहतर परिणाम के लिए इसे कभी भी रसायनिक कीटना"ाकों तथा उर्वरकों के साथ प्रयोग नहीं करना चाहिए एवम् हमे"ाा छाया में भंडारित करना चाहिए।

ट्राइकोडर्मा का प्रयोग घुलन"ील जैविक फफूंदी ना"ाक दवा के रूप में करते हैं। धान, गेहूं, दलहनी, औशधीय, गन्ना और सब्जियों की फसल में प्रयोग करने से उसमें लगने वाले फफूंद जनित, तना गलन, उकठा आदि रोगों से निजात मिल जाती हैं। इसका प्रभाव फलदार वृक्षों पर भी लाभदायक है। किसान अपनी फसलों एवं सब्जियों को रोगों से बचाने के लिए बहुतायत में रसायनिक दवाओं का प्रयोग करते है। इससे जहां एक ओर फसल की लागत

बढ़ जाती है। वहीं फसलों में विश का प्रभाव भी किसी न किसी रूप में रहता है। आधुनिक तकनीकी में ट्राइकोडर्मा का उपचार किसानों के लिए हर हाल में फायदेमंद है। इसकी कीमत या लागत भी रसायनिक दवाइयों से काफी कम है।

बीजोपचार में 5–10 ग्राम ट्राइकाडर्मा को 25 मिली लीटर पानी में घोल प्रति किलाग्राम बीज की दर से उपयोग किया जाता है। यह घोल एक किलोग्रम बीज को भाोधित करने के लिए पर्याप्त है। मृदा उपचार में 1 किलोग्रम ट्राइकाडर्मा को 100 किलोग्राम अच्छी सड़ी हुई खाद में मिलाकर एक सप्ताह तक छाया में रख दें तथा अंतिम जुताई के समय प्रयोग करें ।

कटिंग व जड़ उपचार– धान की नर्सरी और अन्य कन्द वाली फसलों के लिए, 200 ग्राम ट्राइकाडर्मा को 15–20 लीटर पानी में मिलाये और इस घोल में 10 मिनिट तक रोपण करने वाले पौधों की जड़ों एवं कटिंग को उपचारित करें। नर्सरी पौध को तैयार घोल में आधे घंटे तक भिगो लें, इसके बाद रापाई कर दें।

तीन ग्राम ट्राइकोडर्मा प्रति लीटर पानी में घोल बनाकर 10–15 दिन के अंतर पर खड़ी फसल पर 3–4 बार छिड़काव करने से वायुजनित रोगों का नियंत्रण होता है।

जैविक नियंत्रण गुण

- रासायनिक रोगना"ाकों की अपेक्षा अत्यधिक सस्ता होता है।
- मानव स्वास्थय एवं पर्यावरण पर कोइ दुश्प्रभाव नहीं।
- मृदा में रहने वाले अन्य लाभदायक जीवों पर कोइ दुश्प्रभाव नहीं डालता तथा मृदा में पौधों के लिए लाभकारी जीवों की संख्या व उनकी क्षमता का बढ़ाता है।
- मृदा में कोइ प्रदूशण नहीं। जल, मृदा व हवा स्वच्छ रहते हैं।
- इसके प्रयोग से पानी की कम आव"यकता पड़ती है।
- फसलों व फलों के स्वाद में बढ़ोत्तरी होती है।
- इसके प्रयोग से उत्पादित फलों व सब्जियों को लम्बे समय तक ताजा रखा जा सकता है। इसके उत्पादन के लिए किसी बड़े कारखाने की आव"यकता नहीं पड़ती है।

- ट्राइकोडर्मा उत्पादन अथवा इसके प्रयोग से जैविक फसल उत्पादन रोजगारपरक एवं अर्थोन्मुख है।
- उत्पादन में ईंधन की कम आव''यता पड़ती है।

सावधानियां–

- ट्राइकाडर्मा हारजियेनम क्षारीय मृदा में कम उपयोगी है।
- डपचारित बीज बोने के पहले सुनि''चत कर लें कि मृदा में उचित आद्रता हो।
- ठसका उपयोग भोल्फ लाइफ के अन्दर ही करें।
- बायो कन्ट्रोल एजेन्टों को कमरे के तापक्रम पर 4 महीने के लिए एवं बीज के साथ उपचार करने पर 4 महीने तक रखा जा सकता हैं।

जैविक उपाय द्वारा कीट नियंत्रणः–

हानिकारक कीटों एवं बीमारीयों की संख्या को आर्थिक हानि स्तर से नीचे रखने के लिए जैव कारकों का प्रयोग में लाना जैविक नियंत्रण कहलाता है।

इनमें निम्नलिखित प्राकृतिक भात्रुओं को प्रयोग में लाया जाता है।

1. परभक्षी
2. परजीवी
3. जैव प्रौद्योगिकी द्वारा
4. आनुवं''ाक विधि द्वारा
5. वानस्पतिक कीटना''ी द्वारा

   1. **परभक्षी कीटः**–परभक्षी जीव कीट अपने भोजन के लिए दूसरे कीड़ों का ''ाकार करते है। खोतों में इनकी उपस्थिति से हानिकारक कीटों की संख्या नियंत्रित रहती है। प्रमुख मित्र कीट जैसे मकडियां, ड्रैगन, फलाई, मिडोग्रास हॉपर्स, वाटर ट्रीडर आदि फसलों में विभिन्न हानिप्रद कीटों का भक्षण कर उन्हें नश्ट करते रहते है।

किसानों के मित्र कीट/परभक्षी कीट निम्न हैः–

- इन्द्रगोप भृंग
- क्रायसोपा
- सिरपिड
- आपियस स्पिसीस
- मकड़ी

- सोनपंखी भौरे
- झींगुर
- मिडोग्रास हॉपर
- ड्रैगन मक्खियाँ
- मिरिड बग
- वाटर स्ट्राइडर
- वाटार ट्रीडर्स
- वाटर बग
- प्रेइंग मैंटिस
- ग्राउंड बीटल
- क्रिकेट्स
- चींटी

2. परजीवी कीट :–

ऐसे कीट जो अपना जीवन चक्र दूसरे कीड़ों के भारीर पर या भारीर में पूरा करते है और जिसके परिणम स्वरूप दूसरे कीड़े मर जाते है। ये परजीवी अलग–अलग किस्म के होते हैं। जैसे अण्ड परजीवी, सुण्डी परजीवी, प्यूपा परजीवी, वयस्क परजीवी आदि। उदाहरण के तौर पर ट्राइकोग्रामा, ब्रकान, अपेन्टेलिस, टिलोनोमस, टेट्रास्टिकस, कोटिँया आदि।

- **ट्रायकोग्रामा–** यह गहरे रंग का छोटा कीट होता है तथा तना छेदक और पत्ती मोड़क कीट के अण्डें खा कर जीवित रहता है। मादा कीट पोशक अण्डों में 20 से 40 अण्डें देती है और बाद में पोशक अण्डों को चूस कर मार देती है। वयस्क बनने में 10 से 14 दिन लगतें हैं।

- **कैम्पोलेटिस–** यह एक परजीवी कीट है तथा अपना अण्डा फली छेदक कीट के अण्डों या गिडारों पर देती है। इन्ही अण्डों को खा कर अपना जीवन पूरा करती है।

- **ब्रेकान**– धान की इल्ली का परजीवी जीव है। इसके f"ा"ु कीट को इल्ली के उपर उपना जीवन चक्र पूरा करती है तथा उन पर आश्रित होकर इन्हें खा जाते हैं।
- **एपीरिकेनिया**– यह परजीवी की पायरिला के अण्डों के अंदर अपना अण्डा देती है और वहीं पल कर पायरिला के अण्डे को नश्ट कर देती है। इसके f"ा"ु एवं वयस्क पायरिला के भारीर पर चिपक कर उसका रस चूसते रहते है जिससे उासकी मृत्यु हो जाती है।
- **एनासियस**– यह कपास के अंदर मिलीबग को नियंत्रित करता है।
- **टेलीनोमस**– यह धान में तना छेदक एवं पत्ता मोड़क के अण्डों को नश्ट करता है।
- **टेट्रास्टीकस**– यह धान में पीला तथा सफेद तना छेदक के अण्डों को नश्ट करता है।
- **गोनेटोसेरस**– यह हरा एवं भूरा माहो के अण्डों को नश्ट करता है।
- **अमोयेरामोर्फा**– यह तना छेदक के इल्लिायें को नश्ट करता है।
- **स्टेनोब्रेकोन**– यह तना छेदक के इल्लियों को नश्ट करता है।
- **जैंथोपिंपला**– यह तना छेदक के इल्लियों को नश्ट करता है।
- **मेक्रोसेन्ट्रस**– यह पत्ता मोड़क के इल्लियों को खाता है।
- **गोनियोजस**– यह पत्ता मोड़क के इल्लियों को खाता है।
- **इलासमस**– यह पत्ता मोड़क के इल्लियों को खाता है।
- **केरोप्स**– यह पत्ता मोड़क एवं तना छेदक के इल्लियों को नश्ट करता है।
- **फेनेरोटोमा**– यह पत्ता मोड़क एवं तना छेदक के इल्लियों को नश्ट करता है।
- **टेमेलुका**– यह पत्ता मोड़क एवं तना छेदक के इल्लियों को नश्ट करता है।
- **कोटिसिया**– यह पत्ता मोड़क एवं तना छेदक के इल्लियों को नश्ट करता है।
- **ओलिगोसिटा**– यह पत्ता मोड़क एवं छेदक के इल्लियों को नश्ट करता है।
- **स्नेलेनियस**– यह कटवर्म के लार्वा को नश्ट करता है।

3. जैव प्रौद्यिगिकी द्वाराः–

कुछ पौधों में लैक्टिन नामक प्रोटीन पाई जाती है। इसे जैव प्रौद्योगिकी तकनीक द्वारा कीड़ों के भारीर के अंदर प्रवेि"ात किया जाता हैं। यह प्रोटीन कीट के आंत्र के अंदर पायी जाने वाली पेरीट्रोपिक झिल्ली के काइटिन को बांध देती है जिससे कीट में भोजन का अव"ाोशण नहीं हो पाता है और कीट मर जाता है।

4. आनुवंशिक विधिः–

इस विधि में आनुवंि"ाक रूप से प्रजनन में अक्षम कीटों को प्रकृति मे छोड़ा जाता है। इसके संयोग से पैदा हुए कीटों के अण्डों में या तो घातक जीन्स होते हैं या बच्चे पैदा नहीं होते।

- हानिकारक कीटों की कुछ संख्या को रसायानों द्वारा बान्ध्य बना कर भी प्रकृति में छोड़ा जाता है। इससे कीड़ों में प्रजनन नहीं हो पाता है तथा पिससे जीवित अण्डें पैदा नहीं होते हैं तथा संतति का विकास रूक जाता है।
- आजकल विभिन्न फसलों खासकर कपास, बैंगन, टमाब्र आदि के पैधे इस तरह विकसित किये जा रहे है कि पौधों मे कीटों के विरूद्ध कीटना''ाक गुण आ जाते है। इन्हें हम ट्रांसजीनिक या जी एम फसल भी कहते है। इस प्रकार की फसल वि''ोशकर हीलियोथिस कीट के विरूद्ध नियंत्रण पाने में सफल रहा है।

5. वानस्पतिक कीटनाशी :–

(i) **नीम (अजेडिरेक्टा इन्डिका)–** नीम में पाए जाने वाले तत्व अजाडिरक्टिन, सेलेनिन तथा मेलेन्ड्राईल होता है यह कीड़ें के अन्दर एक्डाईसोन एन्जाइम का बनना नियंत्रित कर देता है। जिसके कारण कीट जिस अवस्था में होता है उससे अगली अवस्था में विकसित नहीं हो पाता है।

- यह भूख को नियंत्रित करता है। पत्तियों को खाते ही कीड़ों में वमन या उल्टी जैसी अनुभूति भाुरू हो जाती है और उसके भोजन निगलने की भाक्ति खत्म हो जाती है। ?
- मदा कीट में गर्भधारण करने की क्षमता को खत्म कर कीटों की संख्या बढ़ने नहीं देते हैं।
- कीड़ों म काईटिन का बनना बन्द हो जाता है जिससे कीटों के भारीर की त्वचा कठोर नहीं बन पाती है।
- यौन क्रिया में बाधा पड़ती है।
- लार्वा और व्यस्क कीटों को दूर रखता है तथा इसमें विश फैल जाता है।
- वयस्क कीट निश्प्रभावी हो जाते है।
- कीटों में प्रतिरोधक क्षमता का विकास नहीं होता है।
- पर्यावरण के अनुकूल है।
- पौधों में कीट निरोधक क्षमता का विकास होता है।
- मित्र कीट नश्ट नहीं होते हैं।
- नीम की मींगी एवं बीज के छिलकों के अर्क के प्रयोग से सूत्रकृमि पूर्णतया खत्म हो जाते है।
- निम के तेल के साथि पैराफिन के तेल का प्रयोग करने से पौधे के वायरस को काफी हद तक नियंत्रित किया जा सकता है।
- नीम की पत्तियों का रस फफूंद को बढ़ाने से रोकता हैं तथा इससे निकलने वाले एफलाटाक्सिन को बनने से रोकता हैं।

- माहू (चेंपा), प्लाट हॉपर, डायमंड बैक मोथ, काटन बाल वर्म, चने की फली छेदक इल्ली, गोन लीफ, हापर, पत्ति मोडक, गेडा भृंग, रूट नॉट नेमाटोड, फल छेदक इल्ली, तना छेदक इल्ली, दीमक, सफेद म्कख्झभ्, तम्बाकू कैटर पिलर, झींगुर, टिड्‌डा, खपरा बीटल, अनाज छेदक इल्ली पल्स बीटल, चावल का कीड़े, मरूस्थलीय टिड्‌डा, तिलचट्‌टा, भूरा तेला , के साथ–साथ विशाणु जन्य एवं फफूंद जन्य रोगों को भी नियंत्रित करने में इसका उपयोग होता हैं।
- नीम रसायन के साथ गौमूत्र तथा मठ्‌ठा मिलाकर छिड़काव करने से कीट नियंत्रण की क्षमता बढ़ 15 दिनों के अंतराल पर छिड़काव करना चाहिए।

(ii)खम आलू (डायोस्कोर्ड अलाटा) –इसके कंदमूल एवं रस एफिडक, जूँ, कृमि के नियंत्रण हेतु प्रयुक्त होते हैं।

(iii) भूई आंवला (फिलैंथस निरूरी)–पौधें के मूल का प्रयोग डायमंड बैंक मोथ के नियंत्रण में होता हैं।

(iv) काकामाची (सोलेनम नाइग्रम)–पौधें एवं फल के सत्व का प्रयोग एफिड एवं मच्छर के नियंत्रण में हाता है।

(v)बल्यूगम ट्री (यूकेलिप्टस) –एफिड नियंत्रण के लिए पत्तों का सत्व बना कर छिकड़काव किया जाता है।

(vi) क्लेरोडेन्ड्रूम प्रजाति– मूल पत्ते एवं पुश्प का उपयोग मेंगो हॉपर, रारइस बलास्ट, राईनोसीरस इत्यादि कीटों के नियंत्रण में होता है।

(vii) धनिया (कोरिएंड्रम सटाईवम)–पत्तियों, बीज एवं तेल का उपयोग एफिड के नियंत्रण के लिए किया जाता है।

(viii) लहसुन (एलियम सटाइवम)– इसके कंद, पत्तियों, फूल एवं तेल का प्रयोग एफिड, अमेरिकन बॉल वर्म, बीटल, मोथ, मक्खी, वेज वार्म नेमाटोड, सफेद मक्खी, खपरा, बीटल, माइट्स, पल्स बीटल, थ्रिप्स इत्यादि के नियंत्रण में किया जाता है।

(ix) अदरक (झिजीबर ऑफिसिनेलिस)–अदरक कंद का प्रयोग एफिड, अमेरिकन बॉल वर्म, थ्रिप्स, पलस बीटल, सफेद मक्खी, रूटनॉट नेमाटोड येलों वेनमाजैइक वायरस (पत्तियों का पीला विशाणु रोग) इत्यादि के नियंत्रण में किया जाता हैं।

(x)विसडोडी (एजिरेटम कॉनिजॉयडिस)– इसके पत्ते, बीज, मूल, आदि का उपयोग कीट नियंत्रण के होता है। यह कीटों के लिए अपवारक विकास बाधक एवं पोशणरोधी है इससे मक्खी नेमाटोड, रेड कॉटन बग, रैड फलोर बीटल, राइस वीविल इत्यादि का नियंत्रण किया जाता है।

(xi) करन्ज (पोन्गामिया पिन्नाटा)–इसके पत्ते, गूदा, टिकिया तेल और बीज सत्व का प्रयोग ग्रेन मोंथ, आर्मी वर्म, प्लॉट हॉपर, एफिड् लीफ माइनर, लैसर ग्रेन बोरर, स्टेम

बोरर, नेमाटोड, टयूबर मोंथ, पल्स बीटल, सफेद मक्खी इत्यादि के नियंत्रण मे होता है।

(xii) लैमन ग्रास (सिम्पोपोगन सिट्रेटस)–पौधे का मूल, पत्र बीज एवं तेल के सत्व का उपयोग विशाणु व फफूंद जनित रोग, मच्छर, दिमक, भण्डारण के कीटों के नियंत्रण मे किया जात है।

(xiii) बांस (अदाटोडा बेसिका)–यह कीटपना"ाक कीट अपवाटक एवं पोशणरोधी है। इसके मूल चूर्ण एवं पत्र सत्व का उपयोग भण्डारण के कीटों, लेसर ग्रेन बोरर, ग्रेन मोथ, रैड फ्लोर बीटल आदि के नियत्रण के लिए किया जाता हैं।

(xiv) नीमास्त्र– नीमास्त्र एक ऐसी जैव कीटना"ाी है जिसका प्रयोग रस चूसने वाले कीट एवं छोटी सुंडी इल्लियो के सफल नियंत्रण हेतु किया जाता है। नीमास्त्र को बनाने हेतु 5 किलोग्राम नीम या टहनियां, 5 किलोग्राम नीम फल/नीम खली, 5 लीटर गौमूत्र एवं 1 किलोग्राम गाय के गोबर की आव"यकता होती है। नीमास्त्र को बनाने हेतु सर्वप्रथम लकड़ी के बर्तन पर 5 किलोग्राम नीम की पत्तियों की चटनी, और 5 किलोग्राम नीम के फल पीस व कूट कर डालें एवं 5 लीटर गौमूत्र व 1 किलोग्राम गाय का गोबर डालें इन सभी सामग्री को डंडे से चलाकर जालीदार कपड़े से ढक दें। यह 48 घंटे में तैयार हो जाएगा। 48 घंटे में लकड़ी के डंडे से चार बार घड़ी की दि"ाा एवं विपरीत दि"ाा में घुमा कर अच्छी तरह से घोलें। इस विधि से तैयार नीमास्त्र का प्रयोग छः माह कर सकते है। एक एकड़ खेत मे छिड़काव हेतु उपरोक्त विधि से तैयार नीमास्त्र को 100 लीटर पानी में छान कर मिलाएं एवं छिड़काव म"ाीन से आव"यकतानुसार छिड़काव करें।

(xv) ब्रह्मास्त्र–ब्रह्मास्त्र एक ऐसी जैव कीटना"ाी है जिसका प्रयोग सभी प्रकार के कीट पतंगो, बड़ी सूंडी एवं इल्लियों के सफल नियंत्रण हेतु किया जाता है। ब्रह्मास्त्र को बनाने हेतु, 10 लीटर गौमूत्र, 3 किलोग्रम नीम की पत्ती की चटनी, 2 किलोग्राम करंज की पत्तों की चटनी, 2 किलोग्राम सीताफल पत्ते की चटनी, 2 किलोग्राम बेल के पत्ते की चटनी, 2 किलोग्राम अंडी के पत्ते की चटनी एवं 2 किलोग्राम धतूरा के पत्ते की चटनी की आव"यकता होती है। उपरोक्त सभी सामग्री में से कोई भी पांच सामग्री के मिश्रण को गौमूत्र में मिट्टी के बर्तन में डाल कर आग में उबालते हैं एवं जैसे ही चार उबाल आ जाएँ तो आग से उतारकर 48 घंटे छाया में ठंडा होने दें। इसके बाद कपड़े से छानकर सुरक्षित भंडारण कर ले। इस तरह से बनाए गए ब्रह्मास्त्र का प्रयोग छः माह तक कर सकते हैं। गौमूत्र को किसी लकड़ी या मिट्टी के पात्र में एकत्रित किया जाय, धातु के बर्तन का प्रयोग कदापि न करे, ब्रह्मास्त्र का भंडारण मिट्टी के बर्तन में करें। एक हेक्टेयर खेत मे छिड़काव हेतु उपरोक्त विधि से तैयार 8 से 10 लीटर ब्रह्मास्त्र को 100 लीटर पानी में मिला कर छिड़काव म"ाीन से आव"यकातानुसार छिड़काव करें।

(xvi) अग्नि अस्त्र–अग्नि अस्त्र एक ऐसी जैव कीटना"ाी हैं जिसका प्रयोग तना कीट, फलों में होने वाली सूंडी एवं इल्लियों के सफल नियंत्रण हेतु किया जात हैं। अग्नि

अस्त्र को बनाने हेतु, 20 लीटर गौमूत्र, 5 किलोग्राम नीम के पत्ते की चटनी, आधा किलोग्राम तम्बाकू का पउडर, आधा किलो ग्राम हरी तीखी मिर्च एवं आधा किलोग्राम दे''ाी लहसुन की चटनी की आव''यकात होती हैं। फिर 48 घंटे छाया में रखें, 48 घंटे में लकड़ी के डंडे से चार बार घड़ी की दि''ाा मे घुमा कर अच्छी तरह से घोलें । अग्नि अस्त्र का प्रयोग केवल तीन माह तक प्रयोग कर सकते हैं। मिट्टी के बर्तन का ही प्रयोग करें। उपरोक्त विधि से तैयार 5 लीटर अग्नि अस्त्र को छानकर 200 लीटर पानी में मिलाकर छिडकाव म''ाीन से आव''यकतानुसार छिकड़काव करें।

जैविक खरपतवार नियंत्रणः–

खरपतवारों का जैविक विधि द्वारा नियंत्रण करने में जीवाणु, कीट, प''ाु एवं पौधों का उपयोग किया जाता है।

- **मैक्सीकन बीटल–** यह बीटल जायग्रोग्रामा बायोक्लोराटा गाजर घास को नियंत्रित करता है। वर्शा के मौसम में यह कीट गाजर घास को खाकर खत्म कर देता हैं। इसी तरह नयू केटीना ब्रुकाई नामक कीट भी खरपतवार को खाकर नश्ट कर देता है।

- **एजोला–** इसे ताजे पानी का फर्न कहा जाता है। यह पानी तें तैरता हुआ एक जलीय खरपतवार हैं जो धान के खेत में दूसरे खरपतवारों का नियंत्रण करता हैं। ताजे एजोला को 0.5 कि.ग्रा. प्रति वर्ग मीटर की दर से धान के खेत में छोड़ दिया जाता हैं। एक सप्ताह में यह दो गुना हो जाता हैं तथा पानी की सतह पर एजोला का जाल बना देता हैं जो दूसरे खरपतवारों को उगने नहीं देता हैं।

- **ग्रास कार्प–** चीनी ग्रास कार्प (टीनोफेरिंगोडान इडेला) एक मछली हैं जो जलीय खरपतवारों को नियंत्रित करता हैं। यह मछली एक दिन में अपने भारीर के वनज के दोगुने हरी घासों को खा जाती हैं। इसका वनज 1 कि.ग्रा. से 30 कि.ग्रा. तक होता हैं यह मुख्य रूप से हाइड्रिला घास को खाकर नश्ट करती हैं। एक हेक्टेयर खरपतवार के लिए 100 मछलियां पर्याप्त होता हैं।
- **सिल्वर कार्प–**
- सिल्वर कार्प (हाइपोफ्लेल्यिथिस मोलिट्रिक्स) भी एक मछली हैं जो छोटे–छोटे खरपतवारों जैसे एल्गी तथा दूसरे छोटे–छोटे तैरते घासों को खाती हैं। इसका वनज 1 से 15 कि.ग्रा. तक होता हैं। एक हेक्टेयर में700 मछलियां खरपतवारों को नियंत्रण करती हैं।
- **टिलापिया–** अन्य मछलियों में टिलापिया (टिलापिया मोजेम्बिका) प्रजाति की मछली भी खरपतवार नियंत्रण मे सहायक हैं। यह मछली 0.5 से 1 कि.ग्रा. तक की होती हैं यह रे”ादार एल्गी, लाल एल्गा मच्छर के लार्वा, छोटे कीटों तथा छोटी मछलियों को खाता हैं।

खरपतवार नियंत्रण में ध्यान देने योग्य मुख्य सावधानियाँ

- साफ एवं खरपतवार रहित फसलों के बीज का उपयोग करें।
- गोबर की खाद अच्छी तरह सड़ी–गली होनी चाहिए जिससे खाद में पड़े खरपतवारों के बीजों की अंकुरण क्षमता कम हो।
- खेत की सड़कों, मेड़ों एवं नाली में खरपतवार को न उगने दें। उगे हुए खरपतवार को नश्ट कर दें।
- ग्रीश्मकालीन गहरी जुताई अव”य करें।
- हरी खाद का उपयोग करें।
- खरपतवारों के बीज नहीं बनने दें तथा बनने से पहले ही खरपतवार नश्ट कर दें।
- खेत तें पौधों की संख्या उचित होनी चाहिए।
- खाद को फसल की जड़ से 1–2 ईंच गहराई में डालें।
- यांत्रिक विधि द्वारा खरपतवारों को नियंत्रित करें।
- फसल चक्र जरूर अपनाएं।
- कटाई एवं गहाई के समय खरपतवारों के पौधों को फसल से अलग कर नश्ट कर दें।
- मृदा सूर्यीकरण का प्रयोग नर्सरी एवं अधिक मूल्य वाली फसलों में करे।

कृषि में सूचना संचार प्रौद्योगिकी

मणिभूषण और अकरम अहमद
भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद का पूर्वी अनुसंधान परिसर, पटना

सूचना संचार प्रौद्योगिकी (आई.सी.टी.–I.C.T.)

सूचना और संचार प्रौद्योगिकी (आईसीटी) लगभग सूचना प्रौद्योगिकी (आईटी) के समान है जिसमें इंटरनेट, वायरलेस नेटवर्क, मोबाइल फोन, कंप्यूटर, सॉफ्टवेयर, वीडियो–कॉन्फ्रेंसिंग, सोशल नेटवर्किंग और अन्य मीडिया अनुप्रयोगों और सेवाओं सहित सभी संचार प्रौद्योगिकी शामिल हैं। उपयोगकर्ताओं को डिजिटल रूप में जानकारी पहुचाने पहुंचने, पुनः प्राप्त करने, स्टोर करने, संचार करने और संशोधन करने में सक्षम बनाता है। आईसीटी दुनिया भर के आर्थिक और सामाजिक विकास के लिए एक शक्तिशाली उपकरण है जिसका उपयोग कृषि और संबंधित क्षेत्रों में किया जाता है। किसानों के लिए आईसीटी सेवाओं के विस्तार में सुधार करने से कृषि के लिए वैश्विक खुले आंकड़ों के प्रसारण में सुधार होगा जो कृषि विकास, अधिक फसल उत्पादन और किसान समुदाय की आय बढ़ाने में उपयोग किया जा सकता है। ग्रामीण आईसीटी अनुप्रयोगों का उद्देश्य गांवों के लोगों को सेवाएं प्रदान करना है। ई–प्रशासन बहतर और उचित कनेक्टिविटी और प्रसंस्करण समाधान के लिए वर्तमान में आईसीटी का उपयोग करता है। आईसीटी के उद्भव ने अपने उपयोगकर्ताओं को सूचना के उपयोग के लिए तेज और बेहतर संचार, कुशल भंडारण, पुनर्प्राप्ति, प्रसंस्करण और डेटा के आदान–प्रदान के लिए साधन प्रदान किए हैं।

कृषि में सूचना संचार प्रौद्योगिकी

कृषि भारतीय अर्थव्यवस्था का एक महत्वपूर्ण क्षेत्र है क्योंकि सकल घरेलू उत्पाद (जीडीपी) में इसकी हिस्सेदारी लगभग 17 प्रतिशत है। बढ़ती आबादी के कारण खाद्यान्न की मांग बढ़ रही है। कृषि अनुसंधान और विस्तार में ईमानदार प्रयासों के साथ ही खाद्य मांग को पूरा किया जा सकता है। लेकिन कृषि कई पहलुओं में पीछे है क्योंकि खराब कनेक्टिविटी और बाजार की अनुप्लभ्ता है, किसानों के लिए अविश्वसनीय और विलंबित जानकारी, छोटे भूमि जोत, गैर–गोद लेने या बेहतर तकनीक को कम या नही अपनाने में है। आधुनिक तकनीकों और प्रासंगिक जानकारी के बारे में हमारे किसानों को अपडेट रखने के लिए विभिन्न तरीकों का पता लगाना आवश्यक हो गया है।

सूचना प्रौद्योगिकी तेजी से आगे बढ़ रही है और अब बहुत महत्वपूर्ण हो गई है। आईसीटी सूचना प्रौद्योगिकी का एक हिस्सा है। सूचना और संचार प्रौद्योगिकियों की शुरुआत के साथ, पारंपरिक कृषि विशेष रूप से छोटे और सीमांत किसानों की दक्षता और क्षमता में सुधार के लिए सही समय और जगह पर सही जानकारी के साथ कृषि उत्पादकता, स्थिरता और किसानों को सशक्त बनाने के लिए कार्य कर रहा है। आवश्यक डेटा और सूचना को प्रभावी

ढंग से उत्पन्न, संग्रहीत, विश्लेषण, प्रसार और सूचना और संचार प्रौद्योगिकी के समावेश द्वारा कृषि का उन्नयन करने के लिए उपयोग किया जा सकता है। यह उत्पादन बढ़ा सकता है और किसानों के लिए उपयोगी हो सकता है। इसलिए, कृषि में आईसीटी ई–कृषि से संबंधित अनुसंधान और अनुप्रयोग का एक उभरता हुआ क्षेत्र बन गया है। कृषि में सूचना और संचार हमेशा आवश्यक होता है। चूंकि लोगों ने फसल, पशुधन और मछली पालन करना शुरू कर दिया है। आईसीटी इलेक्ट्रॉनिक साधनों का उपयोग सूचनाओं के प्रसंस्करण और प्रसार के लिए जल्दी, आसानी से और समय पर करता है। उन्नत आईसीटी उपकरण जैसे ग्लोबल पोजिशनिंग सिस्टम (जीपीएस), जीआईएस, रिमोट सेंसिंग, निर्णय समर्थन प्रणाली (डिसिशन सपोर्ट सिस्टम– वै) का उपयोग कृषि में स्मार्ट कृषि, सटीक कृषि, स्थिरता, पर्यावरण के अनुकूल और खाद्य सुरक्षा के लिए किया जा रहा है। आईसीटी प्रसार कार्यकर्ता (एक्स्टेन्शन वर्कर) को किसानों से आवश्यक जानकारी एकत्र करने, संग्रहीत करने, पुनः प्राप्त करने और प्रसारित करने में मदद कर सकता है।

आईसीटी देश में कृषि विस्तार प्रणाली की सुविधा प्रदान करता है। देश में लगभग 60ः किसान अभी भी अन–पहुंच बने हुए हैं, किसी भी विस्तार एजेंसियों द्वारा सेवा नहीं दी गई है। किसानों की कृषि संबंधी जानकारी के प्रमुख स्रोत रेडियो और टेलीविजन हैं। इंटरनेट का समर्थन करने वाला सूचना–केंद्र देश के कइ हिस्सों में कृषक समुदाय की सेवा कर रहा है। इसलिए आईसीटी कृषि विस्तार वैज्ञानिकों, शोधकर्ताओं और किसानों के लिए बहुत उपयोगी है। कृषि अनुसंधान, शिक्षा और विस्तार में आईसीटी के विभिन्न अनुप्रयोग निम्नलिखित हैं।

किसान सलाहकार सेवाएं

किसानों की सलाहकार सेवाओं में सबसे व्यापक रूप से उपयोग में आने वाले साधन हैं– टेलीफोन आधारित, मोबाइल आधारित, टेलीविजन और रेडियो आधारित सलाहकार सेवाएं। किसान प्रदर्शनी ध् मेला सहित कृषि, वीडियो–कॉन्फ्रेंसिंग, समाचार पत्र और पत्रिकाओं के लिए इंटरनेट आधारित ऑनलाइन सलाहकार सेवाएं भी इस्तेमाल की जा रही हैं। कृषि संस्थानों और संगठनों के पास किसानों के लिए अपनी टेलीफोन आधारित सलाहकार सेवाएं हैं जो एक समर्पित टेलीफोन नंबर के माध्यम से टेलीफोन आधारित कृषि सलाहकार सेवाएं प्रदान करती हैं। किसानों के लिए ऑन लाइन फोन ध् मोबाइल आधारित विशेषज्ञ सलाह सेवाएं, किसान कॉल सेंटर (केसीसी) भी काम कर रहे हैं।

ग्रामीण विकास में आईसीटी

कृषि क्षेत्र में बढ़ती जनसंख्या को कम करने की स्थिति में भूमि और पानी जैसे प्राकृतिक संसाधनों की उपलब्धता कम होने की स्थिति में उत्पादन बढ़ाने की बड़ी चुनौती का सामना करना पड़ रहा है। उच्च्च गुणवत्ता वाले उत्पादों सहित बढ़ती मांग से ग्रामीण लोगों की आजीविका में सुधार के अवसर भी मिलते हैं। कृषि विकास और गरीबी उन्मूलन में आईसीटी

का योगदान अब बहुत महत्वपूर्ण है। यदि शहरी और ग्रामीण लोगों की अंतर आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए आईसीटी का उचित रूप से उपयोग किया जाता है, तो वे आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक सशक्तिकरण और आजीविका सुधार के शक्तिशाली साधन बन सकते हैं। आईसीटी का उपयोग महिलाओं के आर्थिक सशक्तीकरण के लिए भी किया जा रहा है।

मृदा गुणवत्ता मूल्यांकन के लिए आई.सी.टी.

खेत की मिट्टी, जलवायु और भूमि उपयोग के आधार पर मिट्टी की गुणवत्ता का आकलन किया जा सकता है। कुछ उपयोगी प्रौद्योगिकियां मिट्टी की प्रकृति और इसकी समस्याओं को समझने में सहायता करती हैं। मिट्टी की गुणवत्ता के आकलन में आईसीटी का उपयोग किया जा रहा है। सुदूर संवेदन (रिमोट सेंसिंग) जैसे कुछ उपयोगी तकनीकों के साथ मिट्टी की गुणवत्ता का मूल्यांकन भी किया जा रहा है। रिमोट सेंसिंग, सेंसर और स्पेक्ट्रल सिग्नेचर (कलर/रंग) की मदद से किसी दूरस्थ स्थान से किसी वस्तु के बारे में डेटा एकत्र करने की एक प्रक्रिया है।

बाजार की जानकारी के लिए आई.सी.टी.

ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों के विकास के लिए कृषि क्षेत्र में समय पर और सही बाजार की जानकारी बहुत आवश्यक है। सार्वजनिक और निजी संस्थानों द्वारा सूचना और संचार प्रौद्योगिकी (आईसीटी) उपकरणों का उपयोग किया जा रहा है ताकि उपयोगकर्ताओं को विशेष रूप से किसानों को बाजार की जानकारी उपलब्ध कराई जा सके। मोबाइल फोन, कंप्यूटर और इंटरनेट की तेजी से बढ़ती पहुंच के साथ इनका उपयोग दूरदराज के क्षेत्रों में उपयोगकर्ताओं द्वारा उपयोग किया जा रहा है ताकि अधिक उत्पादन करने के लिए उन्नत तकनीकों के बारे में ज्ञान प्राप्त किया जा सके और किसान समुदाय की आय में वृद्धि हो सके।

भारत में कृषि विकास के लिए आईसीटी की पहल उपयोग

मृदा स्वास्थ्य के लिए ई–एक्सटेंशन

कृषि विभाग और आईसीएआर संस्थान राज्यों के गांवों में विकसित प्रौद्योगिकियों और मृदा स्वास्थ्य के लिए ई–एक्सटेंशन कर रहे हैं और किसानों को उनकी मिट्टी की स्वास्थ्य स्थिति, उर्वरक उपयोग और सटीक फसल पैटर्न पर ऑनलाइन मार्गदर्शन प्रदान करते हैं।

एग्री बिजनेस सेंटर

यह किसानों और किसान समूहों, सस्थानों, निर्माण कंपनियों, व्यवसायी, सहकारी समितियों, खाद्य प्रोसेसर, फसल प्रबन्ध विशेषज्ञों को एक साथ एक ही मंच पर लाने के लिए छोटे, मध्यम और बड़े किसानों के मालिकों को एक वेब आधारित समाधान प्रदान करता है। आईटीसी के एग्री बिजनेस डिवीजन ने जून 2000 में ष्ई–चौपालष लॉन्च किया जिसमें किसान इंटरनेट के माध्यम से जुड़े हुए हैं जो कृषि समुदाय को वैज्ञानिक कृषि पद्धतियों, मौसम और खेत की

उपज बेचने के लिए बाजार की कीमतों पर उनकी स्थानीय भाषा में तैयार जानकारी पहुचाने में सक्षम बनाते हैं।

ई– कृषि विपणन (e-KRISHI VIPNAN)

यह मंडी बोर्ड के कृषि व्यापार व्यवसाय के बारे में वास्तविक समय की ऑनलाइन जानकारी प्रदान करता है, जिसमें आईसीटी में नवीनतम तकनीक का उपयोग करके लागत प्रभावी डिजिटल बुनियादी ढांचे को स्थापित करके किसानों और व्यापारियों सहित सभी हितधारका को लाभान्वित किया जाता है, जिससे वे प्रभावी निर्णय लेने के लिए सटीक और समय पर जानकारी प्राप्त करते हैं।

किसान कॉल सेंटर

किसान समुदाय को प्रसार (एक्स्टेन्शन) सेवाएं देने के लिए देश में व्यापक दूरसंचार बुनियादी ढांचे के साथ देश भर में किसान कॉल सेंटर स्थापित किए गए हैं। इसका उद्देश्य राज्य के विभागों, एसएयू (राज्य के कृषि विश्वविद्यालय), आईसीएआर संस्थानों आदि के विशेषज्ञों द्वारा स्थानीय भाषा में किसानों को मुफ्त में कृषि ज्ञान उपलब्ध कराना है।

ज्ञानदूत

मध्यप्रदेश के धार जिले में ज्ञानदूत परियोजना संचालित है जो एक दूरस्थ, आदिवासी बहुल, सूखा प्रभावित क्षेत्र है। यह एक ई–गवर्नेंस परियोजना है जिसका मुख्य उद्देश्य सूचना प्रौद्योगिकी (आईटी) का प्रभावी ढंग से उपयोग करना है ताकि गांव, ब्लॉक और जिला स्तर पर शासन में सुधार एवं कृषि के साथ–साथ समग्र ग्रामीण विकास हो सके।

वार्ना वायर्ड विलेज प्रोजेक्ट (warana wired village project)

महाराष्ट्र में वाराना सहकारी परिसर सफल एकीकृत ग्रामीण विकास के लिए प्रसिद्ध है। वार्ना सहकारी चीनी कारखाने को 1956 में पंजीकृत किया गया था। इस परियोजना का उद्देश्य ग्रामीणों को कृषि, चिकित्सा और शैक्षिक जानकारी प्रदान करके इंटरनेट का उपयोग करके सहकारी समितियों की दक्षता और उत्पादकता बढ़ाने के लिए उपयोग करना है।

पज्ञपेंद परियोजना (आई किसान)

पज्ञपेंद आंध्र प्रदेश और तमिलनाडु के कंपनियों के नागार्जुन समूह की एक आईसीटी पहल है। यह किसानों को कृषि जरूरतों की आपूर्ति करने वाली सबसे बड़ी निजी कंपनी है। इसकी एक वेबसाइट है जिसका नाम ूपज्ञपेंद.बवउ है। पज्ञपेंद का मुख्य उद्देश्य इस क्षेत्र में फसलों की उत्पादकता बढ़ाने के लिए, ग्रामीण स्तर पर कृषि आधारित विशेषज्ञता प्रदान करना है।

निर्णय समर्थन प्रणाली (डिसिशन सपोर्ट सिस्टम–DSS)

निर्णय समर्थन प्रणाली (डिसिशन सपोर्ट सिस्टम– वै) कम्प्यूटरीकृत डेटा संचालित सूचना प्रणाली है जो संगठनात्मक निर्णय लेने की गतिविधियों का समर्थन करती है। एक अच्छी तरह से डिजाइन किया गया वै एक इंटरैक्टिव सॉफ्टवेयर–आधारित प्रणाली है, जो निर्णयकर्ताओं का समस्याओं को हल करने और निर्णय लेने के लिए कच्चे डेटा, दस्तावेजों, व्यक्तिगत ज्ञान और मॉडल से उपयोगी जानकारी संकलित करने में मदद करती है। कृषि में डीएसएस का उपयोग कृषि उत्पादन, आय और किसानों की आजीविका बढ़ाने के लिए प्रौद्योगिकियों का पता लगाने, सुझाव देने और प्रचार करने के लिए एक महत्वपूर्ण उपकरण के रूप में किया जाता है। कुछ वै जैसे एग्रो–टेक्नोलॉजी ट्रांसफर के लिए निर्णय समर्थन प्रणाली और जल संसाधन प्रबंधन के लिए निर्णय समर्थन प्रणाली हैं।

जलवायु परिवर्तन के लिए आई.सी.टी.

रिमोट सेंसिंग तकनीक और भौगोलिक सूचना प्रणाली (GIS)

कृषि में जलवायु परिवर्तन के प्रभाव का आकलन करने के लिए कई आईसीटी उपकरण उपलब्ध हैं। इन उपकरणों का उपयोग जलवायु परिवर्तन स्थितियों के तहत स्थानीय फसल मॉडलिंग से कृषि क्षेत्र की विभिन्न प्रक्रियाओं का विश्लेषण करने के लिए किया जाता है। कुछ उपकरण विशिष्ट फसलों के विकास को अनुकरण करने की अनुमति देते हैं, विभिन्न जलवायु परिवर्तन परिदृश्यों के तहत उनकी विविधता की पुष्टि करते हैं। रिमोट सेंसिंग और भौगोलिक सूचना प्रणाली (जीआईएस) का उपयोग कृषि को सही दिशा में करने के लिए किया जाता है। रिमोट सेंसिंग (ते) वस्तु के साथ संपर्क में आए बिना ऑब्जेक्ट (वस्तु) की छवियों ध तस्वीरों को लेने का विज्ञान है। भौगोलिक सूचना प्रणाली (जीआईएस) एक सॉफ्टवेयर आधारित तकनीक है जो मानचित्र रूप में जानकारी का विश्लेषण प्रस्तुत करता है। जीआईएस एक कम्प्यूटरीकृत डेटा भंडारण और पुनर्प्राप्ति प्रणाली है, जिसका उपयोग फसल उत्पादकता और कृषि संबंधी कारकों से संबंधित स्थानिक डेटा का प्रबंधन और विश्लेषण करने के लिए किया जा सकता है। यह अन्य निर्णय समर्थन उपकरणों के साथ सभी प्रकार की जानकारी और इंटरफेस को एकीकृत कर सकता है।

मौसम पूर्वानुमान में आईसीटी

मौसम कृषि उत्पादन में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है और यह फसल की वृद्धि, विकास और पैदावार, कीटों और रोगों की घटनाओं, पानी की जरूरतों और उर्वरक की आवश्यकताओं और फसलों के कल्चरल प्रक्टिस (पैकेज ऑफ प्रक्टिस) पर सांस्कृतिक संचालन को प्रभावित करता है। आईसीटी किसी भी जलवायु परिवर्तन, मौसम की जानकारी जैसे वर्षा, आर्द्रता, धूप, तापमान, बाढ़ और सूखे के पूर्वानुमान में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है, जो किसानों को सही

समय के साथ–साथ सही दिशा में कृषि कार्य करने में मदद करता है। अंततः ये जानकारी किसानों को फसल उत्पादकता और आय बढ़ाने में मदद करती हैं।

इस प्रकार सूचना और संचार प्रौद्योगिकियां (आईसीटी) उन प्रौद्योगिकियों को संदर्भित करती हैं जो दूरसंचार के माध्यम से सूचना प्रदान करती हैं। सूचना और संचार प्रौद्योगिकी (आईसीटी) सूचना प्रौद्योगिकी (आईटी) के समान है, लेकिन यह मुख्य रूप से संचार तकनीकों पर केंद्रित है जिसमें इंटरनेट, वायरलेस नेटवर्क, मोबाइल फोन और अन्य संचार प्रौद्योगिकियां शामिल हैं, जिन्होंने एक ष्वैश्विक गांवष बनाया है, जिसमें दुनिया भर के लोग संचार कर सकते हैं । इस प्रकार, कृषक समुदाय को फसल उत्पादन और आय में वृद्धि के लिए किसानों के लिए तकनीकी ज्ञान हस्तांतरण संभव है। इसलिए आईसीटी वैज्ञानिकों, प्रसार कर्मियों (एक्स्टेन्शन वर्कर) और किसानों के लिए बहुत महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

वर्तमान कृषि समस्याएँ और समाधान

अनूप कुमार चौबे[1], कीर्ति सौरभ[1], के राव[1], एस के समल[1]
1. भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद का पूर्वी अनुसंधान परिसर, पटना
2. आइ. सी. ए. आर. एम. जी. आई. एफ. आर. आई. पूर्वी चम्पारण, बिहार

किसी भी देश के विकास के लिए सबसे महत्त्वपूर्ण बात वहाँ की मौलिक पूँजी होती है। मौलिक पूँजी का अर्थ है देश के प्राकृतिक संसाधनों द्वारा प्रदत्त उपहार। कृषि प्रधान देश होने के कारण भारत की मौलिक पूँजी है– कृषि उत्पाद। जिस देश मे 1.36 अरब के लगभग आबादी निवास करती है और देश की 70 प्रतिशत कृषि पर आधारित है, उस देश ने कृषि शिक्षा के विश्वविद्यालय और कॉलेज नाम–मात्र के हैं, उनमें भी गुणवत्तापरक शिक्षा का अभाव है। भूमंडलीकरण के दौर में कृषि पर आधुनिक तकनीकी बहुराष्ट्रीय कंपनियों के माध्यम से जो इस देश में आती हैं उसे कृषि का प्रचार–प्रसार तंत्र उन किसानों तक पहुंचाने में लाचार नजर आता है, यह गंभीर और विचारणीय विषय है।

किसान ईश्वरीय कृपा पर ही आज भी निर्भर हैं। कृषि शिक्षा का व्यापक प्रचार–प्रसान ग्रामीण क्षेत्रों में होना चाहिए और प्रत्येक शिक्षण संस्थन में न्यूनतम माध्यमिक स्तर की शिक्षा अवश्य होनी चाहिए। उन लोगों का उपयोग कृषि के निचले स्तर के व्यापक प्रचार–प्रसार और उत्पादन वृद्धि में किया जाना चाहिए। जीडीपी में करीब 18 फीसदी का योगदान करने के बाद भी कृषि क्षेत्र आज संकट के दौर से गुजर रहा है, इसकी मुख्य वनज मानसून के बारिश पर निर्भरता है, इस दुसरे साल मानसुन की बारिश कम होने के वजह से खेती में दिक्कतें आती हैः हम वास्तव में जलावयु परिर्वतन के प्रभाव से बच नही सकते, हम मौसम के मिजाज का सही आकलन करके, सिंचाई के अच्छ स्रोत विकसित करके, तकनीकि रूप से उन्नत तरीके अपनाकर कृषि क्षेत्र की स्थिति में सुधार ला सकते हैं। इस सबके बाद भी हालांकि किसानों के पास कर्ज की आसान उपलब्धता और बीमा की सुविधा होनी चाहिए।

आज कृषि जगत में हमारे सामने सबसे बड़ी चुनौती यही है कि युवा खेती नहीं करना चाह रहे। यह स्थिति एक सकट की स्थिति है। युवा गांव में नहीं रहना चाह रहे और अगर वे वहां रह रहे तो खेती को हाथ नहीं लगाना चाहते। हमारे सामने ये चुनौती है कि किसानों की अगली पीढ़ी कैसे तैयार हो। अगर युवा इसमें नहीं आएंगे तो हम आगे किसान कहां से लाएंगे। ये पूरे देश के नीति नियंताओ के सामने चुनौती है कि ऐसी नीतियों बनाए कि गांवों में युवा रह सके और किसानी कर सके।

हमारे देश के आजादी के सयय 50 करोड़ जनता के लिए भी अनाज की कमी थी और अब हम 135 करोड़ जनता का पेट भरने में सक्षम है। कई गुना जनसंख्या बढ़ने के बाद भी उत्पादन बढ़ाकर ही हम ऐसा कर पाए। ये प्राइमरी एग्रोकल्चर का हिस्सा था। अब जरूरत हैं सेकेंड्री एग्रीकल्चर पर जोर डालने की। इसका मतलब फूड प्रोसेसिंग, वेल्यू एडिशन, मार्केटिंग। कैसे मार्केट लिंकेज हो जाए। किसानों को सिर्फ मार्केट दे दीजिए तो खेती अपने आप लाभकारी हो जाएगी। गांव में ही प्रोसेसिंग हो, गांव में ही पैकेजिंग हो और वहीं से सीधे मार्केट तक सामान पहुंचे। कई किसान ऐसे हैं जिनका इंटरनेशनल मार्केट में लिंक हो गया

और वे लाभ कमा रहे हैं। दुसरी समस्या है कि जो कृषि क्षेत्र का उत्पादक है, उसकी हिस्सेदारी ज्यादा हो। जैसे उपभोक्ता को अधिक पैसा देना पड़ा रहा है और उत्पादक को वह पैसा मिल भी नहीं रहा है।

कृषि समस्याएँ

देश में कृषि भूमि के मालिकाना हक को लेकर विवाद सबसे बड़ा है, असमान भूमि वितरण के खिलाफ किसान कई बार आवाज उठाते रहे हैं। जमीनों का एक बड़ा हिस्सा बड़े किसानों और साहुकारों के पास है जिस पर छोटे किसान काम करते हैं, ऐसे में अगर फसल अच्छी नहीं होती तो छोटे किसान कर्ज में डुब जाते हैं,

अच्छी फसल के लिए अच्छे बीजों का होना बेहद जरूरी है, लेकिन सही वितरण तंत्र न होने के चलते छोटे किसानों की पहुंच में ये महंगे और अच्छे बीज नहीं होते हैं इसके चलते इन्हें लाभ नहीं मिलता और फसल की गुणवत्ता प्रभावित होती हैं

भारत में मॉनसून की सटीक भविश्यवाणी नहीं की जा सकती दृ इसके बावजूद देश के तमाम हिस्सा में सिंचाई व्यवस्था की उन्नत तकनीकों का प्रसार नहीं हो सका है. उदाहरण के लिए पंचाब, हरियाणा और प''चमी उत्तर प्रदे''ा के क्षेत्र में सिंचाई के अच्छे इंतजाम है लेकिन देश का एक बड़ा हिस्सा ऐसा भी है जहां कृशि, मॉनसून पर निर्भर है. इसके साथ ही भूमिगत जल के गिरते स्तर ने भी लोगों की समस्याओं में इजाफा किया है. तमाम मानवीय कारणो के साथ कुछ प्राकृतिक कारण भी किसानों और कृशि क्षेत्र की परे''ानी को बढ़ा देते हैं. दरअसल उपजाऊ जमीन के बड़े इलाकों पर हवा और पानी के चलते मिट्टी अपनी मूल क्षमता को खो दती है और इसका असर फसल उत्पादकता पर पड़ता है.

कृशि क्षेत्र म अब म''ीनों का प्रयोग होने लगा है लेकिन अब भी कुछ इलाके ऐसे हैं जहां एक बड़ा काम अब भी किसान स्वयं करते हैं. वे कृशि में पारंपरिक तरीकों का इस्तेमाल करते हैं. खासकर ऐसे मामले और सीमांत किसानों के साथ अधिक देखने को मिलते हैं. इसका असर भी कृशि उत्पादों की गुणवत्ता और लागत पर साफ नजर आता है.

भारत के ग्रामीण इलाकों में अच्छे भंडारण की सुविधाओं की कमी है. ऐसे में किसानों पर जल्द से जल्द फसल का सौदा करने का दबाव होता है और कई बार किसान औने–पौने दामों में

फसल का सौदा कर लेते ह. भंडारण सुविधाओं को लेकर न्यायालय ने भी कई बार केंन्द्र और राज्य सरकारों को फटकार भी लगाई है लेकिन जमीनी हालात अब तक बहुत नहीं बदले हैं.

सभी क्षेत्रों की तरह कृशि को भी पनपने के लिए पूंजी की आव''यकता है. तकनीकी विस्तार ने पूंजी की इस आव''यकता को और बढ़ा दिया है. लेकिन इस क्षेत्र में पूंजी की कमी बनी हुई है. छोटे किसान महाजनों, व्यापारियों से ऊंची दरों पर कर्ज लेते हैं. लेकिन पिछले कुछ सालों में किसानों ने बैंकों से भी कर्ज लेना भारू किया है. लेकिन हालात बहुत नहीं बदले हैं.

भारत में अधिकां''ा कृशि क्षेत्र असिंचित होने के कारण कृशि क्षेत्र में समग्र विकास के लिए मानसून महत्वपूर्ण है. ऐसे मामले में मानसून पर ग्रामीण अर्थव्यवस्था की निर्भरता को नजरंदाज नहीं किया जा सकता है. बीज बोने का पैटर्न हमे''ाा उस क्षेत्र के मॉनसून पर निर्धारित होता है. खराब मॉनसून के कारण खेती पर बहुत बुरा असर पड़ता है और किसानों को बहुत भारी नुकसान उठाना पड़ता है. ऐसी ही स्थिति खरीफ फसलों के उत्पादन और उपज में भी उत्पन्न होती है. अधिकां''ा कृशि राज्यों में मॉनसून पर निर्भरता के कारण खरीफ फसलों का उत्पादन किसानों को बिना किसी फायदे के करना पड़ता है.

नदियों एवं वर्शाजल को संचित कर असिंचित भूमि के आंचल को हरीतिमा बनाने के प्रयास ने देश मे नहरों एवं बहुउद्दे''ाीय परियोजनाओं को जन्म दिया, किन्तु इनका गलत उपयोग उद्दे''य प्राप्ति में बाधक रहा। प्रायः नहरा में पानी तभी आता है, जब या तो फसल सुखने लगती है या खेत लबालब भरे रहते हैं। वि''व बैंक द्वारा प्रायोजित नलकूप आज महज मूक साधना कर रहे हैं। विद्युतीकरण पर विद्युत आपूर्ति एवं भ्रश्टाचार (नागरिक एवं प्र''ाासनिक) ने पर्दा डाल दिया है।

कृशि में निवे''ा करना अन्य वेंचरों में निवे''ा की तुलना में कम लाभदायक होता है अन्य क्षेत्रों में निवे''ा कृशि की बजाय उच्च्च रिटर्न देने वाले सिद्ध होते हैं. परिणाम स्वरूप कृशि में निवे''ा में कमी हुई है और इस क्षेत्र का नक़सान हुआ हैं

आज भी गांव के किसान अपने उत्पादों के लिए बाजार की कमी को झेल रहे हैं. इसके चलते बिचौलिए कम दामों पर उनका अनाज खरीद अधिक लाभ कमा रहे हैं. सरकार के ही

अधिकारिक आंकड़ो के अनुसार ,वर्श 2002–03 से 2017–18 तक भारत में 134 करोड़ टन गेहूं पैदा हुआ. जबकि सरकारी खरीद महज 35.88 करोड़ टन की ही हुई

इस तरह देश की प्रमुख फसल धान का इसी समय अवधि में 155.77 करोड़ टन का कुल उत्पादन हुआ. लेकिन सरकारी एजेसियों ने सिर्फ 48.76 करोड़ टन की खरीद की. बचे हुए अनाज के बड़े हिस्से को अगर खपत भी मान लें तब भी एक बहुत बड़ा आंकड़ा यह स्पश्ट करता है कि आज भी किसान और बाजार के बीच बिचौलिए हावी हैं.

इस प्रकार हम देखते हैं कि इस तमाम योजनाओं के सहयोग एवं तकनीकों के विकास के होते हुए भी सामान्य किसान आज अपने जीवन–स्तर में सुधार नहीं कर पा रहें हैं। उत्पादकता के अनेक झण्डे पकड़ने वाले हाथ आज भी क्यों विकलांग हैं? यह विचारणीय हैं। इस दि"ाा में सुधार करके ही हम विकास के धरातल को प्राप्त कर सकते हैं तथा छोटी सी भूमि से जुड़ा किसान भी अपनी अपरिहार्य आव"यकताओं को हस्तगत कर सकता है।

भारत में अधिकत्तर किसान आज भी अ"ािक्षित हैं जिसके कारण वो अपने आस–पास के साहुकारों से कर्ज उधार लेते हैं जो कि 70% से 120% तक का इंटरेस्ट (सुद) लेते हैं जबकि यह बैंको से लेने पर 12% से 17% तक देना होता है।

भारत में सरकार काफी पैसा कृशि से संबंधित सरकारी केन्द्रों के संचालन में लगाती हैं. इन केन्द्रों के अफसर किसानो की समस्या का कोई समाधान नही देते हैं. ऐसे अफसर उलटे उन किसानो से फर्जी तरीके से धन प्राप्त करने की कोि"ा"ा करते हैं. से सरकारी अफसर हम और आप में से ही लोग होते हैं हमें सोचना चाहिए कि कोई किसान हमारी इक गलत निर्णय से आत्महत्या न कर ले सरकार को जागरूक करने के साथ–साथ हमें खुद को भी जागरूक करना होंगा.

निरक्षरता एवं अज्ञानता सम्पूर्ण समाज के लिए अभि"ााप है। परन्तु ग्रामीण समाज में साधन विहीन जीवनवृत्ति में इसकी भूमिका और भी दुर्भाग्य"ाली है। अनेक सीमांत कृशक तथा भुमिधर अज्ञानता एवं निरक्षरता की वजह से आज न केवल भूमिहीन हो गये वरन व्यर्थ की

मुकद्दमेबाजी से आर्थिक स्थिरता भी खो चुके हैं। कर्जे में ब्याज की दरें कर्जदार पर पीढ़ी दर पीढो अपना आधिपत्य बनाए रखती हैं। निरक्षरता का नूतन अभि”ााप ही है सुविधाओं का उपभोग वास्तविक सेवाथी नहीं कर पर रहा है।

जीवन सुधारने के उपाय

इसके लिए निम्न सुझाव लाभप्रद हो सकते हैः

सर्वप्रथम तो जन–जागरण एवं आत्यचेतना का वह मंच तैयार हो जो सामान्य किसान को उसकी वास्तविक जीवन रेखा दिखा सके। वि”ाशकर युवाओं में खेतों से जुड़ने के लिए प्रेरक कार्यक्रम चलाए जाने चाहिए।

किसानों का प्रतिनिधित्व किसान ही करे तथा कृशि नीतियों के लिए गाँवों से ईमानदारी से जनसमर्थन एकत्रित कर के ही योजना फलीभूत कराने की सोचना चाहिए।

सरकार को हर खेत तक पानी के संसाधन उपलब्ध कराने के लिए नए तौर–तरीकों पर काम करना होगा. बाढ़ के समय अतिरिक्त जल को नहरों के माध्यम से कम पानी वाले क्षेत्रों में पहुंचाना होगा. साथ ही सरकार को बढ़ते जल संकट के विशय में भी तेजी से काम करना होगा, पानी का भण्डारण कर समय पर उन क्षेत्रों में पानी दे जहाँ इसकी आव”यकता हो। नलकूपों को पुनर्चालित कर इसकी समुचित देखरेख हो।

दूसरी जो प्रमुख समस्य किसान हर वर्श देखतें हैं. वह उनकी फसलों के उचित दाम न मिलता है. ऑर्गेनाइजे”ा फॉर इकनामिक कॉपरे”ान एवं डेलवमेंट (OECD-ICAIR)की रिपोर्ट के अनुसार , साल 2000 से साल 2017 के बीच किसानों को कृशि उत्पादों की कम कीमत मिलने से किसानों की करीब 45 लाख करोड़ रूपए का नुकसान हुआ.

किसानों को उनकी फसलों पर कम कीमत की बड़ी वजह कृशि उत्पादों के बाजारों की अपर्याप्त संख्या का होना भी है. किसानों की आमदनी बढ़ाने के लिए गठित स्वामीनाथन आयोग की सिफारि”ों के मुताबिक, हर पांच किलोमीटर पर एक मंडी होनी चाहिए. लेकिन वर्तमान में यह दर की कौड़ी है.

कृशि क्षेत्र में एक बड़ी चुनौती गांव से हो रहे पलायन की है. कृशि क्षेत्र में आई निरा''ाा की वजह से मजदूर किसान गांव से निकलकर भाहरों की तरफ पलायन कर रहे हैं. भारत की 2011 की जनगणना के मुताबिक, साल 2001 से 2011 के बीव 86 लाख किसान कम हो गए थे. सरकार को गांव मे ही रोजगार के संसाधन उपलब्ध कराने होंगे ताकि बड़े स्तर पर हो रहे ग्रामीण पलायन को रोका जा सके.

सरकारी बैंक नियोजित कृशि विकास कार्यक्रमों के लिये ग्रामीण किसानों को सस्ते ब्याज की दर पर आव''यकतानुसार अल्पकालीन, माध्यकालीन व दीर्घकालीन ऋण प्रदान करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है। बैंकों के कु''ाल सहायोग की कृशि विकास को मजबूर आधार दे सकती है। बैंको के लेन–देन की प्रक्रिया को आसान बनाने को कोि''ा''ा करे और किसानों को बैंक सम्बंधित कार्यो की जानकारी देनी चाहिए. बैंको से लोन या कर्ज लेने पर किसानों बैंक मेनेजर को भी पैसे देने पड़ते हैं.

भारत में बहुत से ऐसे लघु उद्योग हैं जो किसान आसानी से अपने घर से कर सकते हैं. इसके लिए सरकार का जागरूक होना चाहिए किसानो को लघु उद्योगो को बारे में उचित जानकारी दे ताकि वे अच्छे तरीके से कर सके.

कृशि उत्पादों के अतिरिक्त कुटीर उद्योगों एवं कुक्कुट पालन आदि व्यवसायों को समृद्ध किया जाए। नकद पूँजी के इन उत्पादों की पद''र्ानी लगाकर अथवा नजदीकी बाजार उपलब्ध कराकर श्रम का सही मूल्य निर्धारित किया जाए। सरकार की सबसे बड़ी उपलब्धि किसान की फसल को बाजार से जोड़ने, स्टोरेज सुविधा उपलब्ध कराना आदि है. इस वजह से किसान के लिए खेती करने को मुनाफे का सौदा बनाया जा सकता है."

यहां यह भी देखना होगा कि जिन फसलों को हम बोना चाहते हैं, उनके लिए आव''यक जलवायु, पानी, भूमि आदि कैसा होना चाहिए। इसका परीक्षण कर संबंधित किसानों को ि''ाक्षित किया जाए ताकि वह सुझावानुसार कार्य करने के लिए सहमत हो। इस हेतु अच्छी प्रजाति के बीचों की व्यवस्था सुनि''चत की जानी चाहिए और जो खेत या किसान चिन्हित किए जाएं, उन्हें ये बीज उपलब्ध कराए जाने चाहिए।

खेतों में जो भी फसल बोई जाए, उस फसल को सहकारी समिति के माध्यम से बीमाकृत कराया जाए और सरकार की नीतियों में आव''यकतानुसर परिवर्तन करके यह सुनि''चत किया

जाना चाहिए कि जिस किसान की फसल को जिस तरह से भी क्षति हुई जैसे अतिवृश्टि, सुखा, ओलावृश्टि, आग, चोरी, बाढ़ या कोई अन्य कारण हो तो उस व्यक्ति को उसका क्लेम तत्काल दिया जाना चाहिए और क्लेम की रा''ा उसको दिए गए ऋण में समायोजित हो जिससे कि किसान अपनी 6 माह से पालन – पोशण करके तैयार की गई फसल की बर्बादी से गरीबी की ओर जाने से बच सके।

विचारणीय विशय यह है कि किसान की फसल छः माह में तैयार होती है और उस फसल को तैयार करने के लिए आज भी किसान नंगे पांव जाड़ा, गर्मी बरसात में खुले आका''ा के नीचे रात–दिन परिश्रम करके फसल तैयार कर लेता है। खेतों में रात–दिन कार्य करते समय दुर्भाग्यव''ा यदि कोई जानवर काट लेता है या कोई दु''मन उसकी हत्या कर देता है तो ऐसी द''ाा में उसका कोई बीमा आदि नहीं होगा। ऐसे में उनके बच्चे सड़क पर आ जाते हैं, दिन – रात एक करके दे''ा की सूरत बदलने वाला किसान और उसका परिवार न केवल भूखा सोने को मजबूर होता है बल्कि सदैव के लिए निराश्रित हो जाता है। अतः फसल बीमा के अतिरिक्त कृशक बीमा भी कराया जाना चाहिए।

भारत में किसान उत्पादक संगठनों (एफपीओ) को मजबूत किया जाना चाहिए, क्या छोटे और सीमान्त किसान एफपीओ से लाभान्वित हो रहे हैं यह नहीं इस मुद्दे पर वि''ोश ध्यान देना चाहिए, एफपीओएस द्वारा दूध सहकारी समितियों से सबक सीखा जाना चाहिए, मुल्य श्रृंखलाओं के विकास के लिए कमोडिटी–वि''िश्ट एफपीओ को प्रोत्साहन दिया जा सकता है, उदाहरण स्वरूप दालों के लिए एफपीओ बड़े पैमाने पर विकसित किए जा सकते हैं

दे''ा की 70 फीसदी आबादी गांवों में रहती है और कृशि पर ही निर्भर है। ऐसे में किसानों की खु''ाहाली की बात सभी करते हैं और उनके लिए योजनाएं भी बनातें हैं किंतु उनकी मूलभूत समस्या ज्यों की त्यों बनी रहती है। हमने किसानों की समस्याओं की उठाते हुए उनकी भाीघ्र निराकरण की जरूरत पर जोर दिया है। हम यही कर सकते हैं कि कृशि विकास एवं ग्राम्य समस्याओं की क्षणिक मानवीय लिप्सा की भट्ठी में झोंकने वाले हाथों को मजबूती से रोका जाए। अन्यथा भारत माँ ग्राम्यवासिनी की भावना का तो नाम मिटेगा ही साथ–साथ हरे आंचल की तरह मानव अस्तित्व भी धुएँ में उड़ जाएगा। इसमें हाम सभी की परोक्ष एव प्रत्यक्ष भूमिका अपेक्षित है।

वस्त्र उद्योग से प्रदूषण: इसकी विशेषतायें और पर्यावरणीय प्रभाव

[1,3]गुप्ता, डी.के., [2]दूबे, रचना [1]कीर्तिका, ए., [1]नूर मोहम्मद, एम.बी., [1]चौधरी, के.के., [1]शुक्ला, ए.के., [1]जांगिड़, बी.एल., [4]गुप्ता, सी.के. एवं [1]मेहता, आर.एस.

[1]भाकृअनुप – केन्द्रीय शुष्क क्षेत्र अनुसंधान संस्थान, क्षेत्रीय अनुसंधान स्टेशन, पाली-मारवाड़, राजस्थान
[2]भाकृअनुप – भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद का पूर्वी अनुसंधान परिसर, पटना
[3]भाकृअनुप – भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान,झारखण्ड
[4]रांची कृषि कॉलेज, बिरसा कृषि विश्वविद्यालय, कांके, रांची, झारखंड

प्रस्तावना

वस्त्र उद्योग दुनिया के प्रमुख उद्योगों में से एक है जो कई देशों की अर्थव्यवस्था में एक प्रमुख भूमिका निभाता है। दुनिया के कुल वस्त्र निर्यात में चीन का 32% हिस्सा है, इसके बाद यूरोपीयन संघ (26.1%) और भारत (5.1%) का है। इसके अलावा यह उद्योग बांग्लादेश , वियतनाम, श्रीलंका और मॉरीशस जैसे गरीब देशों को भी रोजगार प्रदान करने में एक प्रमुख भूमिका निभाता है। इसलिये , यह उद्योग इन देशों के सकल घरेलू उत्पाद (जीडीपी) मूल्य में वृद्धि के लिये महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। हालांकि , बड़ी मात्रा में उत्पन्न अत्यधिक प्रदूषित अपशिष्ट जल के कारण वस्त्र निर्माण के संयंत्रों को सबसे प्रदूषणकारी औद्योगिक क्षेत्र के रूप में वर्गीकृत किया जाता है। वस्त्र उद्योग में विभिन्न फाइबर जैसे कपास , रेशम, ऊन के साथ-साथ सिंथेटिक फाइबर आदि सभी को पूर्व-उपचारित, संसाधित, रंग का उपयोग किया जाता है जिनमें बड़ी मात्रा में पानी और विभिन्न रसायनों का उपयोग होता है। वस्त्र रंगाई उद्योग धागों एवं फेब्रिक्स की रंगाई एवं परिष्करण प्रक्रियाओं के विभिन्न चरणों के दौरान काफी मात्रा में पानी का उपभोग करते हैं। नतीजतन इन क्रियाओं से अपशिष्ट जल की बहुत बड़ी मात्रा उत्पन्न होती है।

मुद्रण और रंगाई इकाइयों से उत्पन्न अपशिष्ट जल में अक्सर रंग की भारी मात्रा मौजूद रहती है जिसमें प्रतिक्रियाशील रंगों और रसायनों के अवशेष भी मौजूद होते हैं और पर्यावरण में छोड़ने से पहले इसको उचित उपचार की आवश्यकता होती है। वस्त्र उद्योग के अपशिष्ट जल के विभिन्न मानक काफी उतार चढ़ाव की विशेषता वाले होते हैं जैसे कि रासायनिक ऑक्सीजन मांग (COD), बायोकेमिकल ऑक्सीजन मांग (BOD), पीएच, रंग और लवणता आदि में। देश के कई हिस्सों में मुख्य रूप से सूखे क्षेत्रों की नदियों और मृदा में इसके सीधे ही निर्वहन से नदियों और भूजल के सिंचाई जल की गुणवत्ता और साथ ही मृदा के गुणों में गिरावट के परिणाम प्राप्त हुये हैं। पर्यावरणीय मुद्दों के बारे में सार्वजनिक चिंताओं को बढ़ाने से कई छोटे पैमाने पर वस्त्र मरने वाले उद्योग उद्योगों को बंद कर दिया गया है। वर्तमान लेख ने कपड़ा प्रदूषण और इसके पर्यावरणीय प्रभावों की विशेषताओं के बारे में जानकारी प्रदान की है।

वस्त्र उद्योगों में जल का उपभोग और अपशिष्ट जल की उत्पत्ति

अधिकतर वस्त्र उद्योगों में जल एक प्रमुख इनपुट है तथापि , इनमें ताजे जल की मात्रा की आवश्यकता और इनसे उत्पन्न अपशिष्ट की गुणवता और मात्रा बदलती रहती है। वस्त्र उद्योग सामान्य रूप से उत्पादन के तीन या चार चरणों में सम्पन्न होता है जैसे कि धागों का निर्माण , फ़ैब्रिक रचना , वेट प्रसंस्करण और वस्त्र संविरचन आदि। वस्त्र निर्माण के सभी चरणों के दौरान वस्त्र उद्योग अनेक प्रकार के रसायनों और जल की अत्यधिक मात्रा का उपयोग करता है। जल का मुख्य रूप से इन प्रक्रियाओं के लिये उपयोग होता है (अ) वस्त्रों में रासायनिकों के प्रयोग हेतु (ब) तैयार हुये वस्त्रों की धुलाई हेतु। करीब 200 लीटर जल का उपयोग 1 किलोग्राम वस्त्रों के उत्पादन के लिये किया जाता हैं। उद्योग दर उद्योग आगे जल की आवश्यकता उत्पन्न फेब्रिक के प्रकार और रंगाई की प्रक्रिया पर पर निर्भर करता है। सभी फेब्रिक उत्पाद चरणों के बीच वेट प्रसंस्करण की प्रक्रिया में जल की अधिक मात्रा का उपयोग होता है और इस प्रक्रिया में अत्यधिक प्रदूषित प्रवाह की अधिक मात्रा भी उत्पन्न होती है (तालिका-1)। वेट प्रसंस्करण की प्रक्रिया में 1 किलोग्राम फेब्रिक के उत्पादन हेतु करीब 80-150 घनमीटर जल की मात्रा का प्रयोग किया जाता है। यह अनुमान लगाया गया है कि प्रतिदिन करीब 12-20 टन के वस्त्रों के प्रसंस्करण के बाद 1000 से 3000 घनमीटर अपशिष्ट जल प्रवाह का पुनः उत्पादन होता है।

वस्त्र उद्योगों के अपशिष्ट प्रवाह की विशेषता

वस्त्र अपशिष्ट का संघटन अधिक आयतन और चरम परिवर्तनशीलता की विशेषता वाला होता है जिसमें गैर-बायोडिग्रेडेबल रंगाई पदार्थ और विषाक्त प्रदार्थ शामिल होते हैं। परिवर्तनशीलता दोनों प्रकार की होती है पहली इसमें शामिल औद्योगिक प्रक्रिया के प्रकार में विविधत्ता के कारण और दूसरी औद्योगिक श्रेणी के अंदर पदार्थो और रसायनों के अत्यधिक उपयोग के कारण (तालिका 1)। वस्त्र उद्योग से उत्पन्न अपशिष्ट प्रवाह में सामान्य रूप से कार्बनिक और अकार्बनिक रसायनों की अधिक सांद्रता होती है जिसके कारण इसकी अधिक रासायनिक ऑक्सिजन माँग (COD) और बायोलोजिकल ऑक्सिजन माँग (BOD), भी होती है। इसमें मजबूत रंग के साथ अधिक कुल विघटित ठोस ,पीएच, कुल निलंवित ठोस और कम घुलनशील ऑक्सिजन आदि भी होते हैं (तालिका-2)। मुख्य पदार्थों में दूषित पदार्थों के जटिल मिश्रण जैसे रंग , ओरगेनो-क्लोराइड, सोडियम हाइड्रोक्साइड , हाइपोक्लोराइट , क्लोरिन , परोक्साइड़ , सल्फाइड , हाइड्रो सल्फाइड, एसीटिक एसिड , भारी धातु (Cr. As, Cu, और Zn आदि) के साथ अधिक पीएच >8.5 और अधिक बायोलोजिकल ऑक्सिजन माँग/ केमिकल ऑक्सिजन माँग (BOD/COD) आदि मौजूद रहते हैं। वस्त्र उद्योग के अपशिष्ट में रंगों का प्रकार और इसकी मात्रा प्रसंस्करण के लिये उपयोग में लिये जाने वाले फाइबर के प्रकार पर निर्भर करती है। अनेक वस्त्र उत्पादों के निमार्ण में तीन विभिन्न प्रकार के फाइबरों का

उपयोग किया जाता हैं जैसे कि सेलुलोज फाइबर , प्रोटीन फाइबर और कृत्रिम फाइबर। प्रत्येक प्रकार के फाइबर को विभिन्न प्रकार के रंगो के साथ रंग दिया जाता है। सेलुलोज फाइबर की प्रतिक्रियाशील रंग , प्रत्यक्ष रंग, नेपथोल रंग और इंडिगो रंग आदि का उपयोग करके रंगाई की जाती है। प्रोटीन फाइबर को अम्लीय रंगो और लांससेट रंगो का उपयोग करके रंगा जाता है। कृत्रिम फाइबर की विसर्जित रंग , मूल रंग और प्रत्यक्ष रंग का उपयोग करके रंगाई की जाती है। वस्त्र रंगाई प्रक्रिया में हमेशा अघुलनशील रंग के अंश जल के साथ धुलाई से दूर चले जाते हैं और यह अनुमान लगाया गया हैं कि यह धुले हुये रंगों की 10-50% तक मात्रा पर्यावरण में पहुँच सकती है (तालिका-3)। वस्त्र उद्योग के अपशिष्ट जल में इन धुले हुये रंगो की सांद्रता अधिक होती है। एक रंगाई घर के परिसर में रंग के प्रकार एवं प्रक्रिया के आधार पर रंग की सांद्रता 0.01 ग्राम/लीटर से 0.25 ग्राम/लीटर तक होती है। हैं गीले रंग की सांद्रता 0.05-0.1 ग्राम/लीटर जबकि इंडिगो रंग की 0.02 ग्राम/लीटर तक की सांद्रता का उपयोग होता है।

वस्त्र उद्योग के अपशिष्ट प्रवाह में अधिकत्तर बीओडी /सीओडी अनुपात लगभग 1.4 पाया जाता है जो नॉन-बायोडिग्रेडेबल पदार्थों की उपस्थिती की ओर संकेत करता है। इस अपशिष्ट की विशेषताओं को तालिका 4 में दिखाया गया है। रंग इकाइयाँ कुशलतापूर्वक फेब्रिक पर रंगो की निधारण दक्षता के लिये रंगाई प्रक्रिया में सोडियम क्लोराइड/सोडियम सल्फेट के लवणों का उपयोग करती हैं। ये लवण अपशिष्ट प्रवाह में कुल विघटित ठोस और क्लोराइड के रूप में अधिक योगदान देते हैं। मृदा के लिये वस्त्र उद्योग के अपशिष्ट प्रवाह की सबसे अधिक हानिकारक विशेषता इसमें अधिक Na का होना और अपेक्षाकृत कम Ca और Mg अंश का होना है।

वस्त्र उद्योगों के अपशिष्ट जल का पर्यावरण पर प्रभाव

वस्त्र उद्योग के अपशिष्ट जल में ऐसे कई हानिकारक तत्व मौजूद रहते हैं जो मानव स्वास्थ और पर्यावरण के लिये नुकसानदायक हैं। इन तत्वों में निलंबित और विघटित ठोस, बायोलोजिकल ऑक्सिजन माँग, केमिकल ऑक्सिजन माँग, अन्य रसायन, सुगंध और रंग आदि का समावेश इस अपशिष्ट जल में रहता है। वस्त्र उद्योग के अपशिष्ट जल की विषाक्तता और हानिकारकता का स्तर विभिन्न उद्योगों के बीच अलग अलग रहता है। वस्त्र उद्योग के अपशिष्ट जल को प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से नदियों में डाला जाता है जिससे नदियों के जल की गुणवता खराब हो जाती है और वहाँ पर आस पास के क्षेत्रों का भूजल भी प्रदूषित हो जाता है। इस प्रदूषित जल से सिंचाई करने से कृषि भूमि के खराब या क्षरित होने की कई रिपोर्टें सामने आई हैं जिसके परिणामस्वरूप कृषि उत्पादन में कमी आयी है। इसके अन्य पर्यावरणीय प्रभावों में से मानव स्वास्थ पर बुरा प्रभाव और भारी धातुओं की विषाक्तता आदि हैं।

नदी और भूजल प्रदूषण

भारत की अनेक नदियां वस्त्र उद्योग के अपशिष्ट जल के डाले जाने से प्रदूषित हो चुकी हैं। तमिलनाडू राज्य के तिरुपूर में कुल 729 वस्त्र रंगाई इकाइयाँ प्रचालन में है , ये सभी इकाइयाँ 96.1 मिलियन लीटर/दिन अपशिष्ट जल को उत्पन्न करती हैं। और इस उपचारित तथा अनुपचारित अपशिष्ट प्रवाह को नोयल नदी में डाल दिया जाता है। रंग इकाईयों में कुशलतापूर्वक फेब्रिक पर रंगो के निधारण के लिये रंग प्रक्रिया में सोडियम क्लोराइड/ सोडियम सल्फेट का उपयोग किया जाता है। इस अपशिष्ट प्रवाह में कुल विघटित ठोस और क्लोराइड की मात्रा अधिक होती है जिसके द्वारा नदी के जल की गुणवत्ता प्रभावित होती है। राजकुमार और नागन (2010) ने एक रिपोर्ट में बताया कि इस नदी के जल में टीडीएस (900-6600 मिलीग्राम/लीटर) और क्लोराइड (230-2700 मिलीग्राम/लीटर) की अधिक मात्रा मौजूद है। तिरुपुर से 32 किलोमीटर नीचे की ओर नोयल नदी के किनारे ओर्थुपालयम बाँध स्थित हैं जिसमें टीडीएस (4250-7900 मिलीग्राम/लीटर) और क्लोराइड (1600-2700 मिलीग्राम/लीटर) की अधिक मात्रा मौजूद है। बाँध की तलछट में भी सीसा , ज़िंक, कॉपर, क्रोमियम जैसी भारी धातुओं की अधिक मात्रा उपस्थित है। तमिलनाडू राज्य के करूर के पास 487 वस्त्र प्रसंस्करण इकाईयां प्रचालन में है और ये सभी इकाइयाँ प्रतिदिन करीब 14610 किलो लीटर अपशिष्ट जल प्रवाह को अमरावती नदी में छोड़ती हैं जिससे इस नदी का जल प्रदूषण बढ़ गया है।

राजामानीक्क्म और नागन (2010) ने अपनी रिपोर्ट में बताया कि अमरावती नदी के नीचे की धारा की ओर भूजल की गुणवत्ता बहुत खराब हो चुकी है। इस भूजल में टीडीएस, कुल क्षारीयता, कुल कठोरता, कैल्सियम, क्लोराइड और सल्फेट की मात्रा वांछनीय सीमा को पार कर चुकी हैं। ठीक ऐसी ही स्थिति राजस्थान के पाली जिले की बांडी नदी में भी देखने को मिली है जहाँ करीब 1300 पंजीकृत सूती और कृत्रिम वस्त्र प्रसंस्करण की औद्योगिक इकाइयाँ प्रचालन में है। राठौर (2011) ने मानसून मौसम और मानसून की पूर्व अवधि में बांडी नदी की गुणवत्ता का मूल्यांकन किया और यह पाया कि नदी के जल में मानसून की पूर्व अवधि में pH (8.4-9.6), ईसी (8.5-12 डेसीसिमन्स/मीटर), सोडियम अवशोषण अनुपात (39-92) और क्रोमियम (0.11-0.16 मिलीग्राम/लीटर) आदि की अधिक मात्रा थी। साहा (2005) ने चंबल नदी के जल की गुणवत्ता का विश्लेषण किया जो कि वस्त्र उद्योग के अपशिष्ट जल से प्रदूषित हो गई है और यह पाया कि इस नदी के जल में लवणों (ईसी >2.25 डेसीसिमन्स/मीटर) की अत्यधिक मात्रा मौजूद थी तथा और सोडिसिटी का जोखिम भी अधिक था।

मृदा प्रदूषण

वस्त्र उद्योग के उपचारित तथा अनुपचारित अपशिष्ट प्रवाह को आस पास के क्षेत्र की नदियों में बहाने से इनके जल के साथ-साथ भूजल भी बहुत प्रदूषित हो रहा है। इस जल के साथ सिंचाई से मृदा की गुणवत्ता में भी गंभीर गिरावट के परिणाम प्राप्त हुये हैं जिससे यहाँ की मृदाएँ खेती के लिये अनुपयुक्त होती जा रही हैं। इस समस्या के कारण किसानों को अपनी खेत की भूमि को परती या बंजर छोड़ने पर मजबूर होना पड़ रहा है। वस्त्र उद्योग के अपशिष्ट प्रवाह की सबसे बड़ी हानिकारण विशेषता मृदा में अधिक pH, अधिक लवण सामग्री,

अधिक Na का हो जाना और Ca और mg की अपेक्षाकृत कम मात्रा हो जाना है। जब ऐसा अपशिष्ट जल भूमि में सिंचाई के लिये प्रयोग किया जाता है तो वहाँ विषेशरूप से मृदा में Na(Ca/mg) के अनुपात में असंतुलन जैसा हानिकारण प्रभाव का कारण बनता है जिसके परिणामस्वरूप मृदा के भौतिक गुण प्रभावित होते हैं और मृदा उर्वरता कम हो जाती है। इसके कारण ज्यादातर फसलों की खेती प्रभावित हो रही है। प्रदूषित मृदा के मिश्रण के चरण के साथ साथ केटायन एक्सचेंज कॉम्प्लेक्स में सोडियम आयनों की अधिकतता कुछ भौतिक क्रियाओं (चिकनी मृदा का स्लेकिंग , फूलना और डिस्पर्सन) एवं विशेष स्थितियों (सतह पर कठोर परत एवं हार्ड सेट्टीन्ग) के परिणामस्वरूप विशेष प्रकार की संरचनात्मक समस्याओं को दिखाती है।

साहा (2005) ने बताया कि वस्त्र उद्योग से प्रदूषित चंबल नदी के जल के साथ लगातार 7 वर्षो से अधिक सिंचाई करने से बिना प्रदूषित क्षेत्रों की तुलना में प्रदूषित क्षेत्रों की मृदा की लवणता (ईसी 4.7 गुना) एवं क्षारीयता (सोडियम अवशोषण अनुपात 10 गुना और इसपी 20.6 गुना) बढ़ गई थी। कृष्णा और गोविल (2004) ने राजस्थान के पाली जिले के आस पास के औद्योगिक क्षेत्र के नजदीक की छोटी-छोटी नदियों के पास से मृदा के नमूने इकट्ठे किये और बताया कि यहाँ की मृदा में सामान्य वितरण की तुलना में भारी धातुओं जैसे कि सीसा (293 मिलीग्राम/किलोग्राम) , क्रोमियम (240 मिलीग्राम/ किलोग्राम) , जस्ता (1364 मिलीग्राम/किलोग्राम), स्ट्रांशियम (2694 मिलीग्राम/ किलोग्राम) एवं वेनेडियम (377 मिलीग्राम/ किलोग्राम) का अधिक स्तर पाया गया है। मलारकोढ़ी एट अल (2007) ने भी तमिलनाडू के कोयंबटूर जिले में वस्त्र उद्योग अपशिष्ट प्रवाह के कारण भारी धातुओं के प्रदूषण का उल्लेख किया है। भारी धातुओं का प्रदूषण इस प्रकार था , निकल (86.84±19.48) , सीसा (94.95±26.86) , केडमियम (3.04±1.68) , क्रोमियम (136.9±47.24), तांबा (57.94±17.9) और जस्ता (157.7±64.38) मिलीग्राम/लीटर।

अन्य पर्यावरणीय प्रभाव

वस्त्र उद्योग के अपशिष्ट प्रवाह में ट्रेस धातुयेँ जैसे कि Cr, As, Cu, और zn आदि मौजूद रहती हैं जो पर्यावरण को क्षति पहुँचाने में सक्षम हैं। पानी में रंगों का मौजूद रहना एक खराब गंध देता है जो अनेक बीमारियों का कारण भी बन सकता है जैसे कि हीमोरेज , त्वचा पर फफोले , नाक से पानी बहना तथा त्वचा पर गंभीर जलन और खुजली आदि। ये पानी की सतह से सूर्य के प्रकाश के प्रवेश में रुकावट बनकर प्रकाश संश्लेषण की प्रक्रिया में बाधा डाल सकते हैं। ये रंग प्राप्त हुये पानी की केमिकल ऑक्सीजन माँग को बढ़ा देते हैं जिसके बदले में रीऑक्सिजिनेसन प्रक्रिया कम हो जाती है जिसके कारण फोटोट्रोफिक जीवों की वृद्धि में कम हो जाती है। अपशिष्ट जल में निलंबित ठोस की सांद्रता पर्यावरण को प्रभावित करने में एक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती है क्योंकि ये तैलीय गंदगी के साथ मिल जाते हैं और वायु-पानी इंटरफेस में ऑक्सिजन

स्थानांतरण की क्रियाविधि को अवरोध कर देते हैं। अपशिष्ट जल प्रवाह में अकार्बनिक पदार्थों की मौजूदगी से घुलनशील लवणों की अत्यधिक सांद्रता की उपस्थिती के कारण जल को उपयोग हेतु अनुपयुक्त बना देती है। इन पदार्थों की कम से कम मात्रा भी जलीय जीवों के जीवन के लिये विष के समान होती है। कुछ अकार्बनिक रसायन जैसे हाइड्रोक्लोरिक एसिड , सोडियम हाइपोक्लोराइट , सोडियम हाइड्रोक्साइड , सोडियम सल्फाइड और प्रतिक्रियाशील रंग समुद्री जीवों के जीवन के लिये हानिकारक होते हैं।

कुछ ऐसे कार्बनिक पदार्थ भी पाये जाते हैं जो विभिन्न रासायनिक और जैविक क्रियाएँ करते हैं जिसके परिणामस्वरूप जल से ऑक्सिजन अलग हो जाती है। जल प्रदूषण की गंभीरता वेट प्रक्रिया में जल और रसायनों की मात्रा के उपयोग पर निर्भर करती है। वस्त्र उद्योग में काम में लिये जाने वाले रंगों में कार्बनिक पदार्थों की बहुत अधिक मात्रा पायी जाती है जो बहुत ही कठिनाई से अपघटित होते हैं और एरोबिक डीग्रेडेसन के प्रति प्रतिरोधी होते हैं। ये एनेरोबिक स्थितियो के अंतर्गत कार्सिनोजेनिक पदार्थों में बदल जाते हैं। इन वस्त्र रंगाई उद्योगों के संपर्क में आने के फलस्वरूप मनुष्यों में फेफड़ों का केन्सर , त्वचा पर जलन , सिर दर्द, जन्मजात कुरूपता और नौजिया आदि बीमारियाँ हो जाती हैं। जो मजदूर वस्त्र रंगाई उद्योगों में लंबे समाय तक कार्य करते हैं उनमें वृक्क , यकृत, मूत्राशय केन्सर के होने के साक्ष्य भी पाये गये हैं। यह भी पाया गया है कि प्रतिक्रियाशील रंगों के अधिक संपर्क में आने से श्रमिकों में खुजली , अस्थमा, नाक की समस्या और रिनीटिस जैसी बीमारियाँ हो जाती हैं।

वस्त्र उद्योगों के अपशिष्ट प्रवाह का उपयोग

वस्त्र उद्योगों से अपशिष्ट जल की बहुत बड़ी मात्रा उत्पन्न होती है। यद्धपि इसके अधिक प्रदूषित होने के कारण इसका किसी भी गतिविधि के लिये प्रत्यक्ष उपयोग करना खतरनाक होता है। अपशिष्ट जल उपचारित सयंत्र से प्राप्त अनुपचारित और उपचारित अपशिष्ट जल ने कृषि में सिंचाई स्त्रोत के प्रत्यक्ष उपयोग के लिये खराब गुणवत्ता को दिखाया। एक अध्ययन से पता चला कि जब सिंचाई के लिये अपशिष्ट जल का उपयोग किया जाता है तो बीजों का बहुत कम अंकुरण होता है और फसलों की वृद्धि भी कम होती है। यधपी , कुछ अध्ययनों ने उल्लेखित किया है कि अपशिष्ट जल को ताजे जल , जिप्सम, राख़ एवं गोबर की खाद के साथ एक उपयुक्त अनुपात में मिश्रित या संयोजित करने से इसकी गुणवत्ता को बढ़ाया जा सकता है और इसका पेड़-पौधों की वृद्धि के लिये उपयोग किया जा सकता है। एकेसिया निलोटिका , एकेसिया टोरटिलीस , अल्बिजियालेब्बेक्क, एजेडीरेक्टा इंडिका , पार्किंसोनिया एकुलेटा , और प्रोसोपिस जुलिफ्लोरा आदि की सिंचाई के लिये इस संयोजन का उपयोग किया जा सकता है। हालांकि , अभी भी फसल उत्पादन में सिंचाई के उपयोग के लिये वस्त्र उद्योग के अपशिष्ट जल प्रवाह की गुणवत्ता बढ़ाने हेतु लागत प्रभावी तकनीकों की कमी है।

निष्कर्ष

वस्त्र उद्योगों में जल की बड़ी मात्रा का उपयोग होता है और उससे अपशिष्ट जल प्रवाह की बहुत अधिक मात्रा उत्पन्न होती है जो गुणवत्ता में अत्यधिक प्रदूषित और परिवर्तनशील है। जल निकायों में अनुपचारित वस्त्र

उद्योगों के अपशिष्ट प्रवाह को बहा दिया जाता है जिससे कृषि भूमि की मृदा , भूजल स्रोत, नदियों के जल की गुणवत्ता बहुत अधिक प्रभावित होती है और मानव स्वास्थ्य पर भी हानिकारक प्रभाव पड़ता है। आजकल इस गंभीर जल संकट के दौर में ताजा एवं स्वच्छ जल बहुत ही बहुमूल्य संसाधन है और इसकी उपलब्धता खतरे के निशान की दर के साथ कम होती जा रही है। अत: इस बात को ध्यान में रखते हुये सीमांत गुणवत्ता वाले जल/अपशिष्ट जल के उचित उपयोग हेतु इसका सरंक्षण करना समय की आवश्यकता है। सिंचाई हेतु इस अपशिष्ट जल की वांछित गुणवत्ता प्राप्त करने या इसकी गुणवत्ता को बढ़ाने के लिये उचित लागत-प्रभावी तकनीकों की आज भी कमी है जो कि यह प्रमुख पर्यावरणीय मुद्दा बना हुआ है। वस्त्र उद्योगों के अपशिष्ट जल प्रवाह के पुनःउपयोग हेतु इस दिशा में और भी अध्ययन और अनुसंधान करने की आवश्यकता है ताकि भविष्य में हम सभी को गंभीर जल संकट का सामना ना करना पड़े।

तालिका 1. वस्त्र उद्योगों के अपशिष्ट प्रवाह की गुणवत्ता में परिवर्तन और विभिन्न प्रक्रियाओ की अवधि में उपयोग हुये जल की मात्रा ।

रेशा	प्रक्रिया	पीएच	बीओडी (मिलीग्राम/लीटर)	टीएस (मिलीग्राम/लीटर)	जल का उपयोग (किलोग्राम उत्पाद/लीटर)
सूती/कपास	डीसाइजिंग	...	1700-5200	16000-32000	3-9
	स्काउरिंग /किएरिंग	10-13	50-2900	7600-17400	26-43
	ब्लीचिंग	8.5-9.6	90-1700	2300-14400	3-124
	मेर्केरिजिंग	5.5-9.5	45-65	600-1900	232-308
	रंगाई	05-10	11-1800	500-14100	8-300
ऊन	स्काउरिंग	9-14	30000-40000	1129-64448	46-100
	रंगाई	4.8-8	380-2200	3855-8315	16-22
	धुलाई	7.3-10.3	4000-11455	4830-19267	334-835
	न्यूट्रेलाइजेसन	1.9-9	28	1241-4830	104-131
	ब्लीचिंग	6	390	908	3-22
नाइलॉन	स्काउरिंग	10.4	1360	1882	50-67
	रंगाई	8.4	368	641	17-33
अक्रिलीक /मोडेक्रिलिक	स्काउरिंग	9.7	2190	1874	50-67
	रंगाई	1.5-3.7	175-2000	833-1968	17-33

	फाइनल स्काउर	7.1	668	1191	67-83
पॉलिइस्टर	स्काउरिंग	...	500-800	...	25-42
	रंगाई	---	480-27000	----	17-33
	फाइनल स्काउर	...	650	...	17-33
विस्कोस	ब्लीचिंग और रंगाई	8.5	2832	3334	17-33
	साल्ट बाथ	6.8	58	4890	4-13
ऐसीटेट	ब्लीचिंग और रंगाई	9.3	2000	1778	33-50

(कोर्रीया एट अल , 1994)

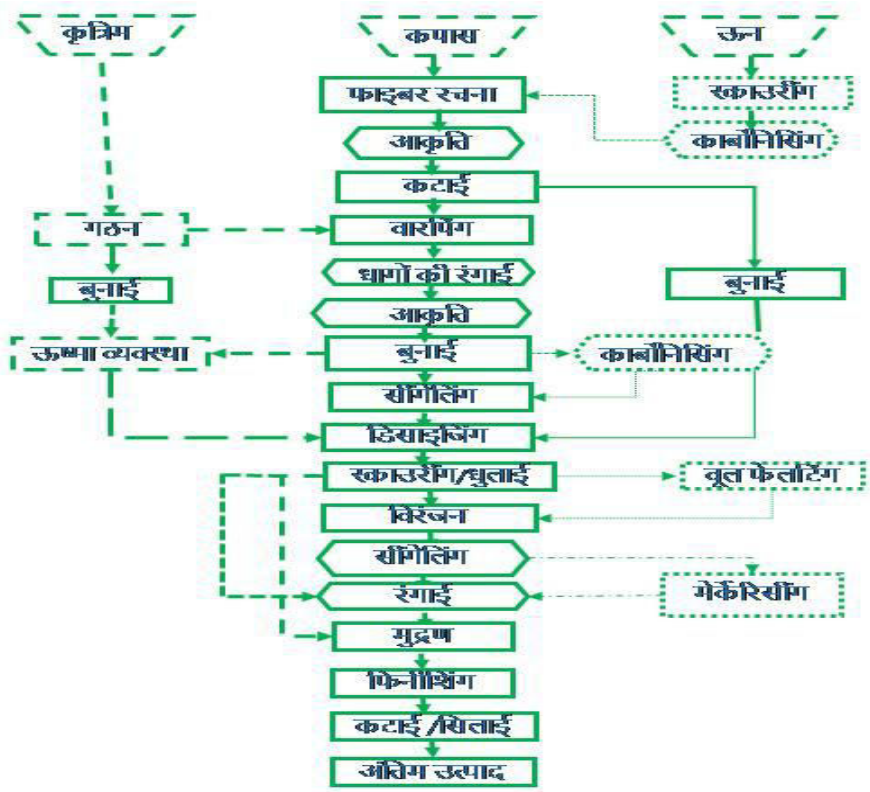

वस्त्र विनिर्माण में होने वाली प्रक्रियाओं के लिये सामान्य फ्लो चार्ट

तालिका-2:- वस्त्र प्रसंस्करण के अनेक चरणों में जल प्रदूषण का स्त्रोत

प्रक्रिया	संभावित प्रदूषक	अपशिष्ट प्रवाह की प्रकृति
डिसाइजिंग अल्कलिज, एसीड्स , एंजाइम्स और सर्फेक्टेंट्स द्वारा आकार वाले पदार्थों का निष्कासन (जैसे स्टार्च , PVA, पॉलीअक्रिलेट्स, कार्बोक्सीमिथाइल सेलुलोज जिनका उपयोग कटाई या बुनाई से पहले फाइबर की मजबूती बढ़ाने के लिये और रेशों को टूटने से बचाने के लिये किया जाता है।	स्टार्च, ग्लूकोज, पीवीए, रेजिन, वसा, और मोम जो बीओडी को अधिक नहीं बढ़ाते हैं।	अत्यधिक कम आयतन, अधिक बीओडी (कुल अपशिष्ट का 30-50%), पीवीए
कीयरिंग/स्काउरिंग यह प्राकृतिक फाइबर , स्पिन फिनिशेज और निटटिंग ऑइल सिंथेटिक फाइबर से अशुद्धियों जैसे तेल , वसा , मोम, तत्व एवं पौधों के अवशेष आदि को एल्केलाइन लिकर (आमतौर पर कास्टिक सोडा या सोडा राख) के साथ स्टील कंटेनर में लगातार उबालने के द्वारा दूर करने की एक प्रक्रिया हैं।	कास्टिक सोड़ा, मोम, सोडा राख, सोडियम सिलिकेट और वस्त्रों के टुकड़े	बहुत कम, मजबूत एल्केलाइन, गहरा रंग, अधिक बीओडी मूल्य (कुल अपशिष्ट का 30%)
विरंजन (ब्लीचिंग) विरंजन का उपयोग सामान्य रूप से सूती , ब्लेन्ड फाइबर या धागों से प्राकृतिक रंगों को हटाने के लिए किया जाता है। कभी कभी इसका उपयोग ऊन एवं सिंथेटिक फाइबर से रंग हटाने के लिये भी किया जाता है। जिससे वस्त्रों की सफेदी को बढ़ाया जा सके। इसके लिये सोडियम हाइपोक्लोराइट एवं और हाइड्रोजन परऑक्साइड जैसे रसायनों का उपयोग किया जाता है।	हाइपोक्लोराइट , क्लोरिन, कास्टिक सोडा, हाइड्रोजन परऑक्साइड, एसिड	बहुत कम आयतन, मजबूत एल्केलाइन, कम बीओडी (कुल अपशिष्ट का 5%)
मर्कराइजिंग इसको विशेष रूप से शुद्ध सूती रेशों पर किया जाता है जिसमें इनको सांद्रित कास्टिक सोडा बाथ से उपचारित किया जाता है और बाद में न्यूट्रेलाइज करने के लिये एसिड बाथ किया जाता है। इसका उदेश्य वस्त्रों पर चमक प्रदान करना और रंग पकाव और लचीलेपन में वृद्धि करना होता है।	कास्टिक सोडा	बहुत कम आयतन, मजबूत एल्केलाइन, कम बीओडी (कुल अपशिष्ट का 1%)

रंगाई रंग चढ़ाने हेतु रसायनिक रंगो के साथ फाइबर या फेब्रिक का उपचार रंगाई कहलाता हैं। रंगाई में क्रोमोफोर और औक्सोक्रोम समूह के रंगों का उपयोग किया जाता है।	रंग सामग्री, मोरडेंट व रिड्युसिंग एजेंट जैसे सल्फाइड्स, एससीटिक एसीड्स और साबुन	अत्यधिक आयतन, मजबूत रंग, उचित रूप से अधिक बीओडी (कुल अपशिष्ट का 6%)
मुद्रण मुद्रण रंगाई की एक शाखा हैं। यह सामान्य रूप से स्थानीयकृत रंगाई के तौर पर जाना जाता है जो फेब्रिक के निश्चित भाग की डिजाइन की रचना करता है।	रंग, स्टार्च, गम तेल, चाइना क्ले, मोरडेंट एसीड्स और मेटेलिक साल्ट्स	अत्यधिक कम आयतन, बहुत कम अल्केलाइन, अधिक बीओडी।
फिनिशिंग (परिष्करण) यह क्रिया निर्मित फेब्रिक में विशिष्ट गुणों को सुधारने का काम करती है। इसमें सोफ्टनिंग, क्रॉस लिंकिंग और वाटर प्रूफिंग के लिये बहुत अधिक मात्रा में फिनिशिंग एजेन्टों का उपयोग शामिल होता है।	स्टार्च, वसा, नमक, विशेष फिनिशिंग एजेंट आदि	अत्यधिक कम आयतन, बहुत कम अल्केलाइन, कम बीओडी

पीवीए-पोली विनायल एल्कोहल , बीओडी-बायोलोजिकल ऑक्सीजन डिमांड , सीओडी- केमिकल ऑक्सीजन डिमांड (घाली एट अल, 2014)

तालिका-3. वस्त्र उद्योगों के अपशिष्ट प्रवाह में अनफिक्स रंगो की मात्रा

फाइबर	रंग का प्रकार	अनफिक्स रंग (%)
ऊन और नाइलॉन	एसिड रंग/ऊन के रंग	7-20
	पूर्व मेटलाइज्ड रंग	2-7
सूती और विस्कोस	एजोइक रंग	5-10
	अक्रिय रंग	20-50
	प्रत्यक्ष रंग	5-20
	पिगमेंट	1
	वेट डाइज	5-20
	सल्फर डाइज	30-40
पॉलिइस्टर	डिस्पर्स	8-20

एक्रिलिक	मोडीफाइड बेसिक	2-3

तालिका-4:- वस्त्र उद्योगों के अपशिष्ट प्रवाह की सामान्य विशेषता

मापदंड	**सीमा**
पीएच	6-10
तापमान (°C)	35-45
कुल घुलनशील ठोस (मिलीग्राम/लीटर)	8000 – 12000
बायोलोजिकल ऑक्सीजन डिमांड (बीओडी) (मिलीग्राम/लीटर)	80-6000
केमिकल ऑक्सीजन(डिमांड (सीओडी) (मिलीग्राम/लीटर)	150-1200
कुल निलंबित ठोस (टीएसएस) (मिलीग्राम/लीटर)	15-8000
क्लोरीन (मिलीग्राम/लीटर)	1000-6000
फ्री क्लोरीन (मिलीग्राम/लीटर)	< 10
सोडियम (मिलीग्राम/लीटर)	100-2200
कैल्सियम (मिलीग्राम/लीटर)	50-700
मैगनेसियम (मिलीग्राम/लीटर)	20-600
ट्रेस तत्व (मिलीग्राम/लीटर) Fe, Zn, Cu, Cr, As, Ni, B, F	<10
तैल और ग्रीस (मिलीग्राम/लीटर)	10-30
नाइट्रेट-नाइट्रोजन (मिलीग्राम/लीटर)	< 5
फ्री अमोनिया (मिलीग्राम/लीटर)	< 10
सल्फेट (SO_4^{-2}) (मिलीग्राम/लीटर)	600-1000
कुल जेलढ़ाल नाइट्रोजन (मिलीग्राम/लीटर)	70-80
सिलीका (मिलीग्राम/लीटर)	< 15
रंग (Pt-Co)	50-2500

(घाली एट अल., 2014)

संदर्भ

बिस्स्चोप्स, आइ. और स्पेंजर , एच. 2003. वस्त्र उद्योगों के अपशिष्ट जल के गुणों का वर्गीकरण। एनवाइरोनमेंटल टेक्नोलोजी, 24:1399-1411।

कोर्रिया, वी.एम. , स्टीफेंसोन , टी. और जुड , एस.जे. 1994. वस्त्र उद्योगों के अपशिष्ट जल के गुणों का वर्गीकरण: एक समीक्षा. एनवाइरोनमेंटल टेक्नोलोजी, 15: 917-929।

घाली, ए.ई., अनंताशंकर, आर., अलहात्तब, एम. और रामाकृष्णन , वी.वी. 2014. वस्त्र उद्योगों के अपशिष्ट जल प्रवाह का उत्पादन,वर्गीकरण और उपचार। एक आलोचनात्मक समीक्षा। जर्नल ऑफ केमिकल इंजीनियरिंग प्रोसेस एंड टेक्नोलोजी, 5 (1): 1-18।

कृष्णा, ए.के. और गोविल पी.के. 2004. भारत में राजस्थान राज्य के पाली जिले में औद्योगिक क्षेत्र के चारों ओर भारी धातुओं का प्रदूषण। एनवाइरोनमेंटल जियोलोजी, 47(1): 38-44।

राजामणीक्कम, आर. और नागन , एस. 2010. भारत के तमिलनाडू की करूर अमरावती नदी घाटी में भूजल की गुणवत्ता पर वस्त्र रंगाई उद्योग के अपशिष्ट जल का प्रभाव- एक फील्ड स्टडी। जर्नल ऑफ एनवाइरोनमेंटल साइंस एंड इंजीनियरिंग, 52(4): 315-20।

राजकुमार ए.एस. और नागन.एस . 2010. तिरुप्पूर वस्त्र रंगाई इकाई द्वारा अपशिष्ट जल प्रवाह की गुणवत्ता पर अध्ययन और इसका तमिलनाडू की नोयल नदी पर प्रभाव। जर्नल ऑफ एनवाइरोनमेंटल साइंस एंड इंजीनियरिंग, 52(4): 333-42।

राठोड़ जे. 2011. वस्त्र रंगाई और मुद्रण के अपशिष्ट प्रवाह द्वारा प्रभावित बांडी नदी (पाली , पश्चिमी राजस्थान, भारत) की जल की गुणवत्ता का मूल्यांकन. इन्टरनेशनल जर्नल ऑफ एनवाइरोनमेंटल साइंसेस, 2 (20: 572-580।

साहा जे.के. 2005. औद्योगिक क्षेत्र के नजदीक संदूषित जल के लगातार प्रयोग के साथ मृदा की क्षारीयता और लवणता में परिवर्तन. जर्नल ऑफ इंडियन सोसाइटी ऑफ सॉइल साइंस, 53 (4): 612-617।

मृदा और जलवायु परिवर्तन

कीर्ति सौरभ[1], अनिल कुमार सिंह[1], प्रेम कुमार सुन्दरम[1], पवन जीत[1], मनोज कुमार[2], जागृति रोहित[3] एवं आशुतोष उपाध्याय[1]

[1]भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद् का पूर्वी अनुसंधान परिसर, पो०ऑ०- बिहार वेटनरी कॉलेज, पटना, बिहार- 800 014
[2]भा.कृ.अनु.प. - केंद्रीय बारानी कृषि अनुसंधान संस्थान, हैदराबाद, तेलंगाना -500059
[3]भा.कृ.अनु.प. का पूर्वी अनुसंधान परिसर, मखाना अनुसंधान केंद्र, दरभंगा, बिहार-846005

वर्तमान समय में जलवायु परिवर्तन पूरे विश्व के लिये एक चिन्ता का विषय बन गया है। जिसकी वजह से असमय वर्षा, अनियमित वर्षा जल का वितरण, मार्च महीने में तापमान का एकाएक से बढ़ना (टर्मिनल हीट), औलावृष्टि, अतिवृष्टि, कीट व बीमारियों का प्रकोप इत्यादि जैसी कई गंभीर समस्याएं पूरे विश्व के सामने बाँहें फैलाये खड़ी हैं। ये समस्याएं कृषि पैदावार और उत्पादन पर गम्भीर प्रभाव डाल रहे है। मौसम में अत्यधिक परिवर्तन होना जैसे पाला पडऩा, फसल वृद्धि के दौरान नमी के कमी के कारण सूक्ष्म जीवों की वृद्धि नहीं हो पाती है तथा उनकी क्रियाशीलता भी कम हो जाती है, जिससे कार्बनिक पदार्थों की विघटन की क्रिया मंद पड़ जाती है। जिससे मृदा जैविक कार्बन की उत्पादकता कम हो जाती है। नमी की कमी होने के कारण अधिक ऑक्सीकरण होने से भूमि से जैविक कार्बन का ह्रास होता है और मृदा में जैविक कार्बन कम हो जाती है। जिससे की मृदा अपरदन क्रिया के लिए संवेदनशील हो जाती है।

विश्व में भूमि क्षरण एक गंभीर पर्यावरणीय समस्या है जो कि हमारे पारिस्थितिकी तंत्र एवं खाद्य सुरक्षा के लिए एक खतरा है। भूमि क्षरण से मृदा का कटाव, पोषक तत्वों का दोहन, मृदा में कार्बनिक पदार्थों की कमी, मिट्टी की उत्पादन शक्ति में कमी, जैव विविधता में कमी, अनियमित भूजल स्तर, जलवायु परिवर्तन एवं आर्थिक नुकसान प्रमुख रुप से होता है। विश्व की जनसंख्या बढ़ने के साथ-साथ भूमि क्षरण की समस्याएँ भी बढ़ती रहेंगी जिसकी वजह से उपजाऊ मृदा एवं अनाज के लिए विभिन्न देशों के बीच खाद्य सुरक्षा के लिए प्रतिस्पर्धा बढ़ेगी। इन समस्याओं से निपटने के लिये विश्व में भूमि क्षरण को रोकने तथा प्राकृतिक संसाधनों का इष्टत्म उपयोग एवं तरीकों पर पिछले कई वर्षों से विकल्पों की तलाश जारी है। भूमि संसाधन का उपयोग एवं प्रबन्धन की विधियों पर मृदा की उत्पादन क्षमता निर्भर करती है। मृदा में कार्बनिक पदार्थों का प्रबन्धन अति महत्वपूर्ण है क्योंकि यह मृदा संरचना के स्थिरिकरण के लिए आवश्यक है।

कृषि उत्पादन के लिए भूमि की गुणवत्ता का ह्रास एवं पर्यावरण संरक्षण में गिरावट होना भूमि उपयोगकर्ताओं के लिए चिंता का विषय है। विभिन्न केंद्रीय और राज्य एजेंसियों द्वारा निम्नीकृत भूमि का अध्ययन कर डेटाबेस तैयार किया गया है लेकिन इन एजेंसियों ने भूमि क्षरण के डाटा के लिए अलग-अलग परिभाषा, स्रोत, वर्गीकरण प्रणाली का उपयोग किया जिसके परिणामस्वरूप अनुमानित क्षेत्रों में विविधता पाई गई है। सबसे पहले नेशनल कमीशन ऑन एग्रीकल्चर द्वारा बंजर भूमि का आकलन 148 Mha किया गया। इसके बाद कृषि मंत्रालय (मृदा और जल संरक्षण विभाग) ने 175 Mha रिपोर्ट किया। NBSS&LUP ने 1994 में GLASOD पद्धति (ओल्डमैन, 1988) द्वारा निम्नीकृत भूमि का आकलन 187 Mha किया

जिसे 2004 में संशोधित कर 147 Mha किया गया। नेशनल वेस्टलैंड डेवलपमेंट बोर्ड के अनुसार देश में 123 Mha बंजर भूमि है (तालिका 1)।

तालिका 1: विभिन्न संगठनों द्वारा भूमि क्षरण का आकलन (गौतम , एन.सी. और नारायण , एल.आर.ए. 1988)

एजेंसी	**अनुमानित क्षेत्र (M ha)**	**परिसीमन के लिए मानदंड**
नेशनल कमीशन ऑन एग्रीकल्चर (NCA, 1976)	148.09	द्वितीयक आंकड़ों के आधार पर
मिनिस्ट्री ऑफ़ एग्रीकल्चर (1978) (मृदा और जल संरक्षण प्रभाग)	175	एनसीए के अनुमानों के आधार पर कोई व्यवस्थित सर्वेक्षण नहीं किया गया था
सोसाइटी फॉर प्रमोशन ऑफ़ वैस्टलैंड्स डेवलपमेंट (भूंबला और खरे, 1984)	129.58	द्वितीयक आंकड़ों के आधार पर
एनआरएसए (1985)	53.28	रिमोट सेंसिंग तकनीक द्वारा 1: 1 मिलियन स्केल पर मैपिंग के आधार पर
मिनिस्ट्री ऑफ़ एग्रीकल्चर (MOA, 1985)	173.64	राज्यों के लिए भूमि क्षरण के आंकड़े
मिनिस्ट्री ऑफ़ एग्रीकल्चर (MOA, 1994)	107.43	क्षेत्र के दोहराव का उन्मूलन। कृषि योग्य बने क्षेत्र को सम्मिलित किया
एनबीएसएस और एलयूपी (2004) (संशोधित)	187.7	मृदा उन्नयन का वैश्विक मूल्यांकन (GLASOD) दिशानिर्देश के आधार पर 1: 4 मिलियन स्केल पर मैपिंग
एनबीएसएस और एलयूपी (2004) (संशोधित)	146.82	1: 1 मिलियन स्केल मिट्टी का नक्शा

देश में करीब 114 M ha जमीन किसी न किसी स्तर पर निम्नीकृत हो चुकी है। इसकी सबसे बड़ी वजह पानी के बहाव के चलते होने वाला मृदा अपरदन है (तालिका 2)। पानी के बहाव के द्वारा होने वाली मृदा अपरदन का क्षेत्र 23.62 Mha है वही हवा द्वारा मृदा का कटाव 8.89 Mha क्षेत्र में है। क्षारीय मिटटी का क्षेत्रफल 6.73 Mha है और अम्लीय का 16.03 Mha। हरेक साल एक वर्ग किलोमीटर इलाके में औसतन 1,535 टन मिटटी नष्ट हो जाती है। मिटटी के व्यर्थ होने से पौधों के सालाना 53.7 लाख टन पोषण तत्त्व भी नष्ट हो जाते है। इतना ही नहीं, करीब 1.34 करोड़ टन की संभावित फसली उपज भी मिटटी नष्ट

होने से उग नहीं पाती है। दुनिया भर में मिट्टी का प्रबंधन और संरक्षण किया जाए तो मिट्टी हर साल पांच अरब टन से अधिक कार्बनडाइऑक्साइड अवशोषित कर सकती है। एक नए शोध मेंकहा गया है कि मिट्टी में कार्बन अनुक्रम (सीक्वेस्ट्रेशन) की क्षमता का विश्लेषण किया गया और पाया कि अगरइसे ठीक से प्रबंध किया जाए तो मिट्टी कार्बन अवशोषण में एक चौथाई के बराबर योगदान दे सकती है। पिछले साल संयुक्त राष्ट्र के जलवायु परिवर्तन पर अंतर सरकारी पैनल (आईपीसीसी) ने कहा था कि तापमान बढ़ने से रोकने के लिए, ग्रीनहाउस गैसों को अवशोषित करने और संरक्षित करने की भूमि की क्षमता को बनाए रखने के लिए कड़ी मेहनत करने की आवश्यकता होगी।

तालिका 2: भारत के निम्नीकृत और बंजर भूमि के प्रारंभिक क्षेत्र के आँकड़े (माजी, 2007).

मृदा अपरदन के प्रकार	**क्षेत्र (M ha)**	**भूमि उपयोग**
पानी द्वारा अपरदन		
शीर्ष मिट्टी का नुकसान	13.25	मुख्य रूप से कृषि क्षेत्र
गली का निर्माण	8.31	मुख्य रूप से बंजर भूमि और कुछ कृषि क्षेत्र
रवाइन्स	2.06	मुख्य रूप से बंजर भूमि
हवा द्वारा अपरदन		
शीर्ष मिट्टी का नुकसान	3.76	मुख्य रूप से कृषि क्षेत्र
उड़ने से	1.89	मुख्य रूप से बंजर भूमि और कुछ कृषि क्षेत्र
इलाके की विकृति	3.24	मुख्य रूप से बंजर भूमि
रासायनिक प्रक्रिया द्वारा अपरदन		
लवण प्रभावित मिट्टी	6.73	कुछ कृषि क्षेत्र और कुछ बंजर भूमि
अम्लता के कारण भूमि क्षरण	16.03	मुख्य रूप से कृषि क्षेत्र और कुछ बंजर भूमि

भौतिक प्रक्रिया द्वारा अपरदन		
जलभराव	1.66	मुख्य रूप से बंजर भूमि
सतह पर जलजमाव	4.75	मुख्य रूप से कृषि क्षेत्र
उपसतह जलभराव	40.16	मुख्य रूप से बंजर भूमि
अन्य कारण		
खनन और औद्योगिक अपशिष्ट	0.13	बंजर भूमि
बंजर चट्टानी / पथरीला कचरा	6.46	बंजर भूमि
बर्फ से ढका क्षेत्र	5.58	बंजर भूमि
कुल क्षेत्रफल	114.01	

जलवायु परिवर्तन का मृदा पर प्रभाव

कृषि के अन्य घटकों की तरह मृदा भी जलवायु से प्रभावित हो रही है। रासायनिक उर्वरकों के प्रयोग से मृदा पहले ही जैविक कार्बन रहित हो रही थी, अब तापमान बढ़ने से मृदा की नमी और कार्य क्षमता प्रभावित हो रही है, मृदा में लवणता बढ़ रही है। भूजलस्तर का गिरते जाना मृदा की उर्वरता को प्रभावित कर रहा है।आधुनिक युग में औद्योगिकीकरण, शहरीकरण, अत्यधिक पेट्रोलियम ईंधन की खपत, वनों का विनष्टीकरण और दोषपूर्ण कृषि क्रियाओं के कारण वातावरण में कार्बन डाईऑक्साइड की मात्रा बढ़ती जा रही है जो कि वैश्विक तापमान वृद्धि एवं जलवायु परिवर्तन का कारण बन रही है। अभी वातावरण में कार्बन की सांद्रता 375 भाग प्रति मिलियन है और इसी दर पर कार्बन की सांद्रता बढ़कर इसी सदी के अंत तक 800-1000 भाग प्रति मिलियन हो जायेगी जो कि भू भाग पर उपस्थित समस्त प्राणियों के लिये घातक सिद्ध हो जायेगी। अत: वातावरण में उपस्थित कार्बन डाई ऑक्साइड की मात्रा कम करनी होगी। इसके लिये खेती की कर्षण क्रियाओं में परिवर्तन, कृषिवानिकी को बढ़ावा एवं मृदा पारम्परिक खादों का उपयोग को बढ़ावा देना होगा। तभी हम विश्व को तापमान वृद्धि एवं जलवायु परिवर्तन के कुप्रभाव से बचा सकते है। कृषि भूमि व चारागाहों के आवासीय क्षेत्रों में परिवर्तित हो जाने के कारण कार्बन के प्राकृतिक विलयन तंत्र घट गए है। गैर – टिकाऊ प्रक्रियाएं जैसे अत्यधिक जुताई जैविक पदार्थों से कार्बन को मुक्त कर वातावरण में पहुंचा देती है।

जैविक कार्बन के इस क्षरण के कारण भूमि में कार्बन की कमी हो जाती है, जिसे वातावरण से पुन: बंधित करके भूमि में लाया जाता है। पादप संश्लेषण द्वारा मुक्त कार्बन डाइऑक्साइड को कार्बन के जैविक रूप जैसे शर्करा, स्टार्च एवं सेल्युलोज आदि कार्बोहाइड्रेट में परिवर्तित किया जाता है। प्राकृतिक कार्बन आवासों में पौधों की जड़ों एवं पादप अवशेषों के विघटन द्वारा मृदा में कार्बन संचित किया जाता है।

मृदा स्वयं में एक प्राकृतिक पारितंत्र है जहाँ खाद्य-शृंखला के संघटक यानि उत्पादक, उपभोक्ता एवं विच्छेदन तीनों ही प्रक्रियाएँ सतत चलती रहती हैं। यदि तापमान वृद्धि की वर्तमान दर जारी रही तो जाहिर तौर पर भविष्य में मृदा तापमान में भी वृद्धि होगी। पौधे अपना भोजन कार्बनिक पदार्थों के खनिजीकरण व सूक्ष्म-जैविक प्रक्रियाओं द्वारा प्राप्त करते हैं। मृदा तापमान में वृद्धि द्वारा सूक्ष्म-जीवों की जैविक क्रियाशीलता में वृद्धि के कारण कार्बनिक पदार्थों, जैव कार्बन व नाइट्रोजन के अधिकतम विच्छेदन से नाइट्रोजन के ऑक्साइड व कार्बन डाइऑक्साइड गैसें अधिक मात्रा में उत्सर्जित होंगी। वहीं दूसरी ओर सूक्ष्म-जीव जैविक-ऊर्जा की पूर्ति हेतु अधिकतम कार्बनिक व नाइट्रोजन कार्बनिक पदार्थों की मात्रा में गिरावट होगी जिसका दूरगामी परिणाम मृदा उर्वरता व उत्पादकता की दृष्टि से भयावह हो सकता है। जिससे फसलों में कार्बनिक पदार्थों की उपयोग क्षमता में ह्रास व सम्पूर्ण मृदा जैव-कार्बन व नाइट्रोजन-स्रोत में कमी, यानि पौधे इनका उपयोग करने में असमर्थ होंगे। इसके अलावा इनका योगदान पादप गृह गैसों के प्रभाव में वृद्धि एवं भूमंडलीय तापमान में वृद्धि के रूप में हो सकता है (चित्र 1)।

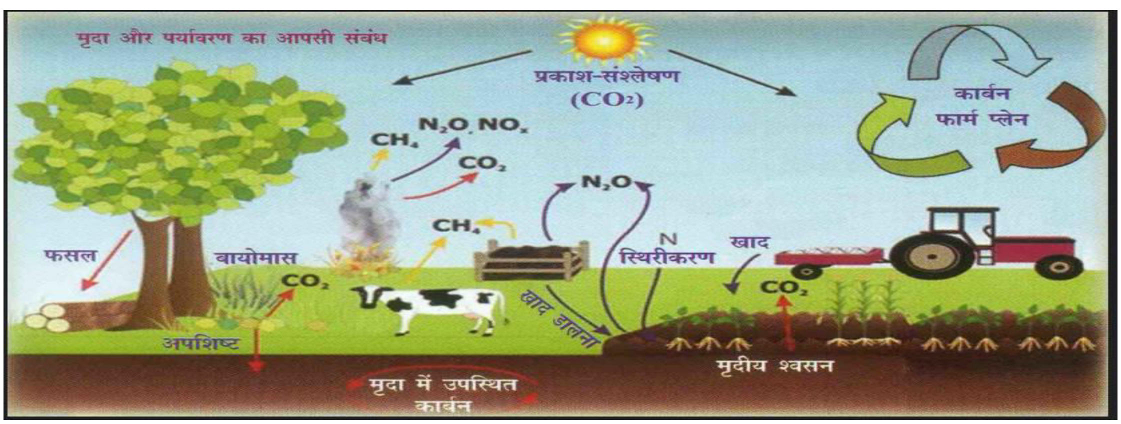

चित्र 1: मृदा और पर्यावण का सम्बन्ध

अत्यधिक वाष्पीकरण द्वारा मृदा की ऊपरी सतह पर लवणों के एकत्रित होने के कारण भूमि से खनिज, जल एवं अन्य पोषक तत्वों की उपलब्धता कम हो सकती है, जिससे मृदा उत्पादकता में ह्रास के कारण इनका सीधा असर फसलों के उत्पादन पर पड़ सकता है।

देश की बढ़ती आबादी की खाद्यान्न आपूर्ति के लिए संसाधनों का आवश्यकता से अधिक दोहन किया जा रहा है। यदि समय रहते हमने प्राकृतिक संसाधनों को प्रमुख रूप से मृदा एवं जल संरक्षण पर विशेष जोर नहीं दिया तो भविष्य में गम्भीर खाद्य समस्या का सामना करना पड़ सकता है। इस सम्बन्ध में मृदा उपजाऊपन एवं उत्पादकता बढ़ाने में संरक्षण खेती की महत्वपूर्ण भूमिका हो सकती है। संरक्षण खेती से तात्पर्य संसाधन संरक्षण की ऐसी तकनीक से है, जिसमें अच्छी फसल की पैदावार का स्तर बने रहने के साथ-साथ संसाधनों की गुणवत्ता भी बनी रहे ताकि वर्तमान पीढ़ी की आवश्यकताओं को पूरा करने के साथ-साथ भावी पीढ़ियों के लिए भी अपने से अच्छा वातावरण सुनिश्चित किया जा सके। भविष्य में खाद्यान्न आपूर्ति, पर्यावरण संरक्षण, कृषि उत्पादों की गुणवत्ता, पौष्टिकता, उत्पादकता और संसाधन उपयोग दक्षता बढ़ाने हेतु सीमित भूमि में मृदा उर्वरता और जल प्रबंधन जैसे महत्वपूर्ण संसाधनों का विवेकपूर्ण उपयोग करना होगा। जिससे जलवायु परिवर्तन, भुखमरी और कुपोषण जैसी गम्भीर समस्याओं से मुक्ति मिल सके

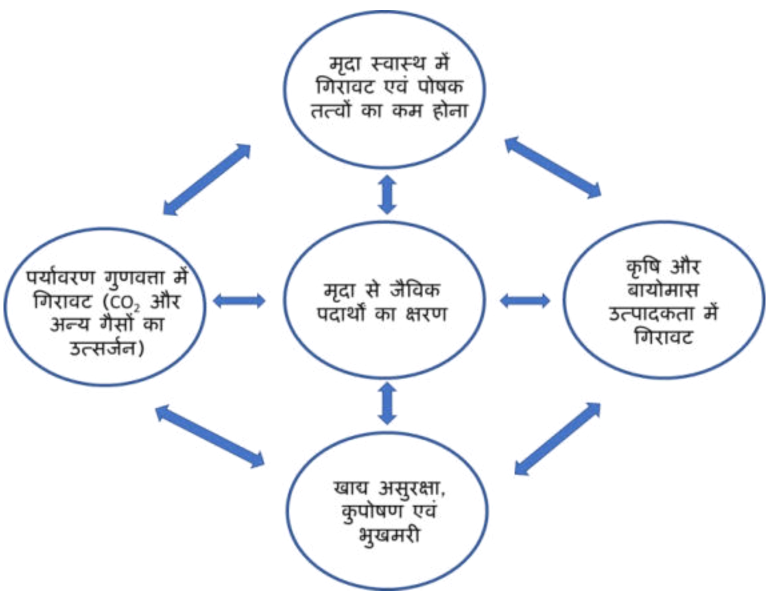

चित्र 2: मृदा कार्बनिक पदार्थ में विलोपन का दुष्चक्र (लाल, 2004)

(चित्र 2)। संरक्षण खेती से मृदा की समृद्धिता को हम विभिन्न तरीके से जैसे रसायनिक खादों के प्रयोग को न करके फसल अवशेष का उपयोग, जैविक खाद का प्रयोग, फसल चक्र द्वारा दलहनी फसलों को लेकर तथा बहू फसल प्रणाली को अपनाकर, साथ ही अधिक व गहरी जुताई का त्याग तथा मृदा को सदा जैविक पदार्थों या पौधों से ढक (मल्चिंग) कर सकते हैं।

मृदा में जैविक कार्बन बढ़ाने के उपाय

भूमि, जल तथा कृषि तकनीकों के उचित प्रबंधन, पोषक तत्वों के संतुलित प्रयोग और संरक्षण कृषि विधियों को अपनाकर भूमि में जैविक कार्बन का स्तर बढ़ाया जा सकता है। मृदा में जैविक कार्बन की मात्रा बढ़ाने के महत्वपूर्ण उपायों का संक्षिप्त वर्णन निम्नांकित है:

1. जैविक खादों व उर्वरकों का प्रयोग

जैविक खाद का प्रयोग किसान एवं पर्यावरण के लिए लाभ का सौदा है इससे किसानों को कम लागत में उच्च गुणवत्ता पूर्ण फसल प्राप्त हो सकती है । इससे भूमि की गुणवत्ता में सुधार होता है रासायनिक खादों के उपयोग से भूमि बंजरपन की ओर बढ़ रही है। जैविक खाद से उसमें जिन तत्वों की कमी होती है वह पूर्ण हो जाती है ।जैविक खादों के उपयोग से जमीन की उपजाऊपन में वृद्धि होती है । जैविक खाद जमीन में लंबे समय तक नमी बनाए रखते हैं जिससे सिंचाई की आवश्यकता रासायनिक खेती की अपेक्षा कम पड़ती है । जैविक खाद जमीन में उपस्थित सूक्ष्म जीवाणुओं की वृद्धि करते हैं जिससे भूमि की उत्पादकता बढ़ती है । किसान की खेती की लागत में भी कमी आती है। इसके प्रयोग से पर्यावरण प्रदूषण में कमी आती है।

2. नमी संरक्षण - अच्छे गुणवत्ता वाले सिंचाई जल का प्रयोग करने से वानस्पतिक आवरण , जैविक निवेष तथा सूक्ष्मजीवों की संख्या बढ़ने से मिट्टी में जैविक कार्बन बढ़ता है। इसके कारण मृदा में स्थित जल का समुच्चयन होता है, जो मृदा में जैविक कार्बन को अधिक समय तक बांधे रखता है। शुद्ध वर्षा के जल को टैंकों में अथवा पुनर्भरण द्वारा भूमि में संचित कर पानी की उपलब्धता बढ़ाई जा सकती है। अतः पंक्ति जल संचयन, ऊंची मेड़ें बनाकर, जुताई करके तथा प्राकृतिक या कृत्रिम आवरण से भूमि को ढ़ंक कर खेत में नमी संरक्षित की जा सकती है। इसके अतिरिक्त वैज्ञानिक सस्य क्रियाएं जैसे सूखा सहनशील प्रजातियां , प्रति

इकाई भूमि में उचित पादप संख्या , सही समय पर बुआई , संतुलित उर्वरक तथा असमतल भूमि में ड्रिप अथवा स्प्रिंकलर विधि से सिंचित करके भी भूमि में जैविक कार्बन को संचित किया जा सकता है।

3. **एकीकृत पोषक तत्व प्रबंधन -** पोषक तत्वों के समेकित प्रबंधन और संतुलित रासायनिक उर्वरकों के साथ, गोबर की खाद, हरी खाद आदि जैव उर्वरक जैसे एजोस्पाइरिलम, राइजोबियम, नील हरित शैवाल, फॉस्फोरस घुलनकारी सूक्ष्मजीव तथा वैस्कुलर आरबस्कुलर माइकोराइजा , फंफूद आदि वानस्पतिक आवरण भूमि में जैव कार्बन बढ़ाने में महत्वपूर्ण योगदान करते है। इससे अधिक वानस्पतिक निवेश होता है तथा मृदा में जैविक कार्बन का घनत्व बढ़ता है।

4. **शून्य जुताई -** अधिक जुताई क्रियाओं से मृदा की संरचना बिगड़ जाती है तथा जैविक पदार्थों का पुनः विभाजन होता है। अंततः संरक्षण कृषि अपनाकर मृदा व जल क्षरण को रोका जा सकता है। सिद्धांत रूप में यह कहा जा सकता है कि कुल फसल अवशेष का 30 प्रतिशत भाग भूमि को पुनः लौटा देना चाहिए। धान-गेहूँ फसल चक्र में कम्बाइन से कटाई के बाद फसलों के अवशेष यथावत रखते हुए शून्य जुताई मशीन की सहायता से गेहूँ की बुआई करने पर भूमि में जैविक पदार्थ का काफी अच्छा निवेश होता है और जैविक कार्बन की मात्रा बढ़ती है। संरक्षण कृषि द्वारा जैविक पदार्थ तथा पोषक तत्वों की उपलब्धता को बढ़ाकर और भौतिक स्थिति को सुधारकर जल धारण क्षमता को बढ़ाया जा सकता है। संरक्षण कृषि में निम्न क्रियाएं शामिल की जाती है। मिट्टी पलटने वाले हल का प्रयोग न करके चीरा लगाने वाले हल से जुताई करने पर मृदा की सतहें नहीं पलटती तथा उथली जुताई से मिट्टी अधिक उलट-पलट नहीं होती, जिससे मृदा में जैविक कार्बन का क्षरण कम होता है। जुताई की गहराई को 15 से.मी. से अधिक नहीं रखना चाहिए ताकि मृदा में जैविक कार्बन ह्रास कम से कम हो। न्यूनतम जुताइयां करने से भूमि के साथ अधिक छेड़छाड़ नहीं होती और वानस्पतिक आवरण हमेशा बना रहता है , जिससे जैव कार्बन बढ़ता है। खेत को लेजर लेवल करना चाहिए , फसल अवशेष को जलाना नहीं चाहिए बल्कि खेत में ही जोत कर मिला देना चाहिए।

5. **सूखा, लवणता तथा तापमान सहनशील किस्मों का विकास -** देशी बबूल या कीकर जैसी अनेक प्रजातियां उपलब्ध है जिनका जड़ तंत्र गहरा होता है, जिससे गहरे जल को भी अवशोषित कर कम उपलब्ध जल क्षेत्रों में भी यह वृक्ष जीवित रहते है। कम अवधि वाली मूंग की फसल भी सूखे का सामना करने से पहले ही अपना जीवन चक्र पूरा कर लेती है। आनुवांशिक अभियांत्रिकी द्वारा इन पौधों से जीन लेकर नई प्रजातियां विकसित की जा सकती है। सूखा, लवणता तथा तापमान को सहन करने की क्षमता वाली प्रजातियां मृदा में जैविक कार्बन की मात्रा बढ़ाती हैं।

6. **समेकित कृषि पद्धति को बढ़ावा -** यह एक समेकित व टिकाऊ फसल एवं वृक्ष उत्पादन पद्धति है जिसमें खेती, वानिकी, फल-फूल का उत्पादन तथा पशुपालन सम्मिलित है। कृषि की अनिश्चितता को कम करने, घटती भूमि उपलब्धता तथा प्रति व्यक्ति खाद्य पदार्थ, चारा तथा ईंधन की मांग को पूरा करने के लिए कृषिवानिकी एक उत्तम विकल्प है। सूर्य का प्रकाश , नमी व पोषक तत्वों की उपयोग क्षमता को बढ़ाने हेतु वानिकी को प्रोत्साहित किया जाना चाहिए। इस प्रकार की उत्पादन पद्धति में भूमि में अधिक समय तक वानस्पतिक आवरण रहने के कारण जैविक कार्बन में लगातार वृद्धि होती है। अतः मृदा परीक्षण करके उचित खाद एवं उर्वरक प्रबंधन द्वारा ग्रीन हाउस गैसों से भी बचाव किया जा सकता है। सिंचित भूमि पर फसल अवशेष अधिक होने के कारण ऐसी भूमि अधिक कार्बन डाईऑक्साइड को बंधित करती है। इसी प्रकार खरपतवारनाशी एवं कीटनाशी रसायनों की सीमित मात्रा का प्रयोग करने से भूमि में उपलब्ध सूक्ष्म जीवों की क्रियाशीलता पर विपरीत प्रभाव नहीं पड़ता और भूमि में जैविक पदार्थ की मात्रा बढ़ती है।

7. **खेती में दलहन फसलों का समावेश -** फसल की विभिन्न प्रणालियों में वर्ष में एक बार दलहन फसल का समावेश अवश्य ही करना चाहिए। यदि अंतर्वती खेती में भी दलहन फसल का समावेश दलहन फसलों के जड़ों में ग्रन्थियां होती है। उनमें बैक्टीरिया निवास करते है जो कि मृदा में कार्बनिक पदार्थ भाग बनते है तथा दलहन में पत्तियां खेत में गिर जाती है। जो कि कार्बनिक पदार्थ में वृद्धि करती हैं।

8. **मिश्रित फसल खेती के सिद्धांत और प्रणाली**

सभी फसलों की वृद्धि का क्रम , उनकी जड़ों की गहराई और उनके पोषक तत्वों की आवश्यकता अलग-अलग होती है। ऐसे में दो ऐसी फसलें जैसे आलू + मक्का , हल्दी + अरहर, मूंगफली + अरहर, जिनमें एक उथली जड़ वाली और दूसरी गहरी जड़ वाली हों , तो दोनों मिट्टी की अलग-अलग सतहों से नमी एवं पोषक तत्वों का भरपूर अवशोषण तथा उपयोग करती हैं और इस प्रकार जल एवं पोषक तत्वों के उपयोग की क्षमता बढ़ने से उनकी उपज बढ़ जाती है।

भारत जैसे कृषि प्रधान देश के लिए मिट्टी की संरचना व उसकी उत्पादकता अहम स्थान रखती है। जलवायु परिवर्तन से तापमान बढ़ने पर मिट्टी की नमी और कार्यक्षमता प्रभावित होगी। मिट्टी में लवणता बढ़ेगी और जैव विविधता घटती जाएगी। बाढ़ जैसी प्राकृतिक आपदाओं से जहाँ एक ओर मिट्टी का क्षरण अधिक होगा वहीं दूसरी ओर सूखे की वजह से बंजरता बढ़ जाएगी। अब इस बात की सख्त जरूरत है कि हमें खेती में ऐसे पर्यावरण मित्र तरीकों को अहमियत देनी होगी जिनसे हम अपनी मृदा की उत्पादकता को बरकरार रख सकें व अपने प्राकृतिक संसाधनों को बचा सकें। अतः सरकारों को यह सुनिश्चित करना चाहिए कि कृषि पद्धतियां हमें केवल भोजन ही प्रदान न करें अपितु जलवायु परिवर्तन को सीमित करने में भूमिका निभाएं।

उद्धरण

1. गौतम, एन.सी. और नारायण, एल.आर.ए. (1988). वैस्टलैंड्स इन इंडिया, 96. पिंक पब्लिशिंग हाउस, मथुरा, इंडिया.

2. लाल, आर. (2004). साइल कार्बन सेक्वेस्ट्रेशन इम्पैक्टस ऑन ग्लोबल क्लाइमेट चेंज एंड फ़ूड सिक्योरिटी. साइंस, 304(5677), 1623-1627.

3. माजी, ए.के. (2007). असेसमेंट ऑफ़ डेग्रेडेड एंड वैस्टलैंड्स ऑफ़ इंडिया. जर्नल ऑफ़ इंडियन सोसाइटी ऑफ़ साइल साइंस, 55(4), 427-435.

4. ओल्डमैन, एल.आर., हक्कलिंग, ए.टी.ए. और सोम्ब्रोक, डब्ल्यू.जी. (1992). वर्ल्ड मैप ऑफ़ दी स्टेटस ऑफ़ ह्यूमन इंदूसेड साइल डिग्रडेशन , 26. ISRIC, वगेनिंगें एंड यूएनईपी, नैरोबी

हिन्दी पखवाड़ा - 2020 : रिपोर्ट

शिवानी एवं उमेश कुमार मिश्र
भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद का पूर्वी अनुसंधान परिसर, पटना

हिन्दी पखवाड़ा – 2020 का शुभारंभ

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद का पूर्वी अनुसंधान परिसर, पटना में दिनांक 14.09.2020 को हिंदी दिवस के आयोजन के साथ हिन्दी पखवाड़ा – 2020 का शुभारंभ हुआ | कार्यक्रम की शुरुआत आईसीएआर गीत से हुई, जिसके बाद डॉ. शिवानी, अध्यक्ष, हिंदी समिति ने इस पखवाड़ा में दिनांक 14.09.2020 से 29.09.2020 तक आयोजित होने वाले प्रतियोगिताओं के बारे में जानकारी दी |

इस सुअवसर पर डॉ. एस.के. चौधरी, माननीय उप-महानिदेशक (प्राकृतिक संसाधन प्रबंधन) द्वारा संस्थान की गृह पत्रिका "अक्षय खेती" का ऑनलाइन विमोचन किया गया | उन्होंने बताया कि हिंदी एक सरल एवं समृद्ध भाषा है तथा कृषि में किये गए अनुसंधान को सरल हिंदी लेखनीबद्ध कर कृषकों तक पहुँचा कर देश को प्रगति के पथ पर अग्रसर करने में योगदान दें |

संस्थान के माननीय निदेशक महोदय डॉ. भगवती प्रसाद भट्ट ने गृह पत्रिका "अक्षय खेती" का ऑनलाइन विमोचन होने पर हिंदी समिति के सदस्यों की महत्वपूर्ण भूमिका का उल्लेख करते हुए संस्थान के सभी कर्मियों को बधाई दी | उन्होंने सरल हिंदी प्रयोग करते हुए कृषि से संबंधित तकनीकों को संकलित करने के लिए भी प्रोत्साहित किया |

इसी दौरान डॉ. जे.एस. मिश्र, प्रभागाध्यक्ष, फसल अनुसंधान ने कृषि क्षेत्र के प्रचार-प्रसार में राजभाषा की महत्ता बताई | संस्थान के सभी प्रभागाध्यक्षों ने भी राजभाषा हिंदी के अधिकाधिक प्रयोग पर अपनी सहमति जताई तथा सरल, सहज और आम जन के शब्दों के प्रचलन का बढ़ावा देने पर बल दिया |

कार्यक्रम के अंत में श्रीमती मनीषा टम्टा ने उपास्थित सभी अधिकारियों एवं कर्मचारियों को धन्यवाद ज्ञापित किया

|

हिन्दी पखवाड़ा - 2020 का समापन समारोह

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद का पूर्वी अनुसंधान परिसर, पटना में हिंदी पखवाड़ा- 2020 का समापन समारोह दिनांक 29 सितम्बर 2020 को संपन्न हुआ। इसके साथ राष्ट्रपिता महात्मा गांधी की 150वीं जयंती के

उपलक्ष्य में व्याख्यान सत्र का भी आयोजन किया गया। कार्यक्रम की शुरुआत आईसीएआर गीत से हुई, जिसके उपरांत डॉ. शिवानी, अध्यक्ष, हिंदी समिति ने राजभाषा हिंदी की महत्ता पर प्रकाश डालते हुए इस पखवाड़ा में दिनांक 14.09.2020 से 29.09.2020 तक आयोजित प्रतियोगिताओं के बारे में जानकारी दी | इसके बाद भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद का पूर्वी अनुसंधान परिसर, कृषि प्रणाली का पहाड़ी एवं पठारी अनुसंधान केंद्र, राँची के पूर्व प्रमुख डॉ. शिवेंद्र कुमार हमारे संस्थान के साथ ऑनलाइन जुड़े | उन्होंने "भारतीय कृषि और महात्मा गांधी के दर्शन" पर व्याख्यान दिया | व्याख्यान के दौरान उन्होंने किसान के दो सौ वर्षों के शोषण की पृष्ठभूमि, भारतीय किसान आंदोलन में गांधी जी का प्रवेश, ग्राम स्वराज्य, वर्तमान भारतीय कृषि परिप्रेक्ष्य में प्रासंगिकता आदि विषयों पर विस्तृत रूप से प्रकाश डाला |

इसी कड़ी में संस्थान के प्रभागाध्यक्षों; डॉ. उज्ज्वल कुमार, डॉ. जे.एस. मिश्र, डॉ. कमल शर्मा एवं डॉ. आशुतोष उपाध्याय ने भी महात्मा गांधी के जीवन पर प्रकाश डालते हुए राजभाषा हिंदी में अधिकाधिक कार्यालयीन कार्य करने पर बल दिया | प्रभागाध्यक्षों के अभिभाषण के बाद पारितोषिक वितरण समारोह प्रारंभ हुआ | संस्थान के निदेशक महोदय डॉ. भगवती प्रसाद भट्ट ने हिंदी पखवाड़ा के दौरान आयोजित विभिन्न प्रतियोगिताओं में प्रतिभागियों के प्रदर्शन के आधार पर उन्हें प्रथम, द्वितीय, तृतीय एवं सांत्वना पुरस्कार प्रदान कर उत्साहवर्धन किया |

पारितोषिक वितरण के उपरांत निदेशक महोदय ने अपने अभिभाषण में संस्थान के सभी कर्मियों को हिंदी पखवाड़ा – 2020 के सफल आयोजन हेतु बधाई दी | साथ ही उन्होंने बताया कि इस पखवाड़ा के आयोजन एवं इसी दौरान संस्थान की गृह पत्रिका "अक्षय खेती" के प्रकाशन में संस्थान की हिंदी समिति; डॉ. शिवानी, डॉ. रजनी कुमारी, डॉ. कीर्ति सौरभ, डॉ. तारकेश्वर कुमार, डॉ. कुमारी शुभा, श्रीमती मनीषा टम्टा, श्रीमती प्रभा कुमारी एवं उमेश कुमार मिश्र की भूमिका सराहनीय रही | उन्होंने सभी कर्मियों से अपील किया कि हिंदी हमारी राजभाषा है और 'क' क्षेत्र में होने के नाते यह हम लोगों की जिम्मेदारी है कि ज्यादा से ज्यादा कार्यालयीन कार्य हिंदी में हो |

कार्यक्रम के अंत में श्रीमती मनीषा टम्टा ने उपास्थित सभी अधिकारियों एवं कर्मचारियों को धन्यवाद ज्ञापित किया |

दो दिवसीय हिंदी कार्यशाला का आयोजन

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद का पूर्वी अनुसंधान परिसर, पटना में चल रहे हिंदी पखवाड़ा – 2020 कार्यक्रम के अंतर्गत दिनांक 23.09.2020 और 24.09.2020 को **"राजभाषा नियम व अधिनियम का परिचय एवं कार्यालयों में हिंदी का प्रयोग"** विषय पर दो दिवसीय हिंदी कार्यशाला का आयोजन किया गया | कार्यशाला के प्रथम दिन श्री गौरव कुमार चौहान, अनुवाद अधिकारी, रक्षा लेखा नियंत्रक (नौसेना/ तट रक्षक), रक्षा मंत्रालय ने

नई दिल्ली स्थित कार्यालय से गूगल मीट के माध्यम से व्याख्यान दिया | उन्होंने राजभाषा हिंदी का इतिहास, नियम व अधिनियम का परिचय देते हुए कार्यालयों में हिंदी में पत्र-व्यवहार बढ़ाने के तरीके बताये |

दूसरे दिन की कार्यशाला का आयोजन संस्थान के सेमिनार हॉल में सामाजिक दूरी का पालन करते हुए किया गया, जिसमें संस्थान के डॉ. कमल शर्मा, प्रभागाध्यक्ष, पशुधन एवं मात्स्यिकी प्रबंधन, श्री पुष्पनायक, मुख्य प्रशासनिक अधिकारी एवं श्रीमती प्रभा कुमारी, सहायक प्रशासनिक अधिकारी व्याख्याता के रूप में उपस्थित थे |

डॉ. कमल शर्मा, प्रभागाध्यक्ष, पशुधन एवं मात्स्यिकी प्रबंधन ने बताया कि संस्थान के सभी वैज्ञानिकों को लगभग एक ही प्रारूप के पत्र कई बार विभिन्न कार्यों के लिए भेजने पड़ते हैं, जो अंग्रेजी भाषा में होती हैं | हमें ऐसे प्रारूपों को हिंदी में अनुवाद कराना चाहिए, ताकि ज्यादा से ज्यादा काम हिंदी में किया जा सके |

श्री पुष्पनायक, मुख्य प्रशासनिक अधिकारी ने बताया कि सभी लोगों को हिंदी में काम करने की आदत डालनी चाहिए, ताकि यह सिर्फ अनुवाद की भाषा बनकर न रह जाए | उन्होंने बताया कि हिंदी हमारी राजभाषा है एवं यह संस्थान के सभी लोगों की जिम्मेदारी है कि वे ज्यादा से ज्यादा कार्यालयी कार्य हिंदी में करें |

श्रीमती प्रभा कुमारी, सहायक प्रशासनिक अधिकारी ने बताया कि संस्थान में ***राजभाषा* अधिनियम 1963 की *धारा 3*(*3*)** के अंतर्गत सभी कार्यालय आदेश, कार्यालय ज्ञापन, परिपत्र, अधिसूचनाएं, टेंडर, करार आदि द्विभाषी रूप में जारी किए जाने चाहिए एवं इसके अनुपालन की पूरी जिम्मेदारी इन दस्तावेजों पर हस्ताक्षर करने वाले अधिकारी की होती है | उन्होंने यूनिकोड प्रणाली में हिंदी टंकण के बारे में बताते हुए कहा कि संस्थान के सभी कंप्यूटरों में हिंदी यूनिकोड सॉफ्टवेयर इनस्टॉल की जानी चाहिए और सभी लोग इसी प्रणाली के माध्यम से टंकण करें |

कार्यशाला के अंत में श्रीमती मनीषा टम्टा ने उपास्थित सभी अधिकारियों एवं कर्मचारियों को धन्यवाद ज्ञापित किया |

<u>अधीनस्थ केंद्र कृषि प्रणाली का पहाड़ी एवं पठारी अनुसन्धान केंद्र, राँची की गतिविधियाँ</u>

- संस्थान के कृषि प्रणाली का पहाड़ी एवं पठारी अनुसन्धान केंद्र, राँची में 14 से 29 सितम्बर, 2020 के दौरान हिंदी पखवाड़ा का सफल आयोजन किया गया। इसके अंतर्गत कार्यालय के कार्मिकों के बीच निबंध लेखन, काव्य तथा वाद-विवाद की प्रतियोगिताओं का आयोजन किया गया।

- हिंदी में कार्य करने में होनेवाली झिझक को दूर करने के उद्देश्य से इस तिमाही में दिनांक 5 नवम्बर, 2020 को एक-दिवसीय हिंदी कार्यशाला का आयोजन किया गया जिसका विषय था - "केंद्रीय कार्यालयों में हिंदी का प्रगामी प्रयोग।
- राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी जी की 150वीं जयंती के उपलक्ष्य में केंद्र द्वारा ज़ूम प्लेटफार्म पर हिंदी में ऑनलाइन व्याख्यान शृंखला का सफल आयोजन किया गया।